हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास

45

श्री रमाशंकर प्रसाद, एम० ए०, एल-एल० बी०

हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास

HINDUSTANI ACADEMY
Hindi Section
Library No. 2989
Date of Receipt Feb. 11. 1930

लेखक

श्री रमाशंकर प्रसाद, एम० ए०, एल-एल० बी०

प्रकाशक

रामनरायन लाल

पब्लिशर और बुकसेलर

इलाहाबाद

प्रथमबार १०००] सन् १९३० ई० [मूल्य १)

विमल राम रति श्याम रति, लौकिक प्रेमानंद।
रस भाषा आचार्यता, भूषित हिन्दी छंद॥

साहित्यिक रचना विमल, दर्पण विशद अनूप।
जिसमें प्रतिबिम्बित रहे, देश काल का रूप॥

निवेदन

पाठक वृन्द के कर कमलों में इस पुस्तक के अर्पण करने का विशेष कारण यह है कि हिन्दी में इस प्रकार की पुस्तकों की आवश्यकता स्पष्ट दीख पड़ती है। इससे यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि हिन्दी साहित्य का इतिहास लिखा ही नहीं गया है अथवा जो लिखा गया है वह उपयोगी नहीं है। वास्तव में इस विषय की उत्तम उत्तम पुस्तकें हिन्दी तथा अंग्रेज़ी दोनों में निकल चुकी हैं और सभी लाभदायक हैं। एक ओर वृहत् त्रिग्रंथ रचना मिश्रबंधु विनोद और दूसरी ओर 'के' साहब की छोटी पुस्तिका हिन्दी साहित्य (अंग्रेज़ी) और इनके बीच में कई पुस्तकें वर्तमान हैं। किंतु ऐसा परिश्रम करना आवश्यक ज्ञात हुआ जिससे पाठकों को हिंदी साहित्य पढ़ने और समझने में सुगमता हो, जिससे साहित्य और सामाजिक जीवन का परस्पर संबंध दिखलाया जाय और जिससे संक्षेप में साहित्य की भिन्न भिन्न धाराओं और उनकी मुख्य विशेषताओं का ज्ञान करा दिया जाय। साथ ही साथ यह भी ध्यान रखा जाय कि उस परिश्रम का फल इतिहास की साधारण नीरसता से विमुक्त रहे और उसके नाम समूह तथा तिथिभंडार से किसी विशेष अरुचिकर मात्रा में प्रभावित न हो और न उसके अति सूक्ष्म कालक्रम से उसके टुकड़े अपने स्वाभाविक श्रेणी से पृथक् रह जायं। इसी विचार से यह पुस्तक विद्यार्थी समाज तथा अन्य साहित्य प्रेमियों के सामने उपस्थित की जाती है।

इस पुस्तक में हिन्दी साहित्य का इतिहास पांच बड़े बड़े काल विभागों में विभाजित किया गया है और फिर आवश्यकतानुसार

उनके उपविभाग भी किये गए हैं। यह कालविभाग साहित्यिक प्रवाह की दृष्टि से किया गया है। प्रत्येक विभाग तथा उपविभाग के आरम्भ में उसके साहित्य और उस समय के जीवन का परस्पर संबंध संक्षेप में दिया गया है और मुख्य साहित्यिक धाराओं का वर्णन किया गया है। उसके बाद प्रत्येक धारा का वर्णन अलग अलग किया गया है। इस वर्णन में कवियों तथा अन्य साहित्यकारों का वर्णन श्रेणी और उत्कृष्टता के अनुसार किया गया है। साहित्यकारों की जीवनी की ओर से अधिक ध्यान उनकी रचनाओं की ओर दिया गया है। जीवनी वहीं अधिक दी गई है जहाँ किसी विशेष कवि के जीवन और उसकी रचना में घनिष्ठ संबंध ज्ञात है। रचनाओं का वर्णन करने में नामावली की ओर अधिक ध्यान न देकर विषय और विशेषताओं की ओर अधिक ध्यान दिया गया है। प्रसंगानुसार रचनाओं के उदाहरण भी दे दिए गए हैं और कहीं कहीं ग्रंथों या कवियों इत्यादि का समय भी दे दिया गया है। फिर अंत में कुछ विशेष बातों का वर्णन किया गया है।

लेखक को इस पुस्तक के तैयार करने में अनेक प्रकार के ग्रंथ देखने पड़े हैं। एक तो मूल ग्रंथों का देखना आवश्यक ही था किंतु बहुत से मूल ग्रंथ मिल भी नहीं सके। मूल ग्रंथों के अतिरिक्त भक्तमाल और शिवसिंहसरोज ऐसे ग्रंथ देखे गए हैं जिनमें साहित्यकारों का वर्णन तथा उनकी रचनाओं के उदाहरण दिये गए हैं। फिर वर्तमान समय के लेखकों की इस प्रकार की रचनाएं उपयोगी हुई हैं, जैसे मिश्रबंधु विनोद, कविता कौमुदी, हिन्दी गद्य मीमांसा इत्यादि और अंगरेज़ी लेखकों की रचनाओं से भी सहायता ली गई है। फिर कुछ और समालोचना ग्रंथ भी देखने पड़े हैं। इनके अतिरिक्त कभी कभी कुछ इतिहास ग्रंथ तथा राज-

नीति ग्रंथ भी अंगरेज़ी और हिन्दी दोनों के देखने पड़े हैं। फिर कुछ अन्य भाषाओं के साहित्य के इतिहास भी देखने पड़े हैं। कभी कभी कुछ छंद ऐसे भी उद्धृत कर दिये गए हैं जो संग्रहों में दिये हुए हैं या जो सुनने में आए हैं। वर्तमान काल की रचना के कुछ उदाहरण पत्र और पत्रिकाओं से भी लिए गए हैं। किसी कवि के संबंध में कुछ जानने के लिए पूछने जाँचने की भी आवश्यकता पड़ी है अतः ऐसा वर्णन केवल दंतकथा पर निर्भर है। लेखक उन सब सज्जनों को कोटिशः धन्यवाद देता है जिनसे या जिनकी रचनाओं से या जिनके संपादन से उसको सहायता मिली है। किंतु वह मिश्रबंधु को विशेष रूप से धन्यवाद देता है। यों तो मिश्रबंधु विनोद मार्गदर्शक ग्रंथ है ही जिससे इस विषय के सब लेखकों को सहायता मिलेगी परंतु जब लेखक ने श्री मान पं० श्यामविहारी मिश्र जी से उनके विनोद से कुछ छंद उद्धृत करने की आज्ञा मांगी थी तो आपने उदारता के साथ लिख भेजा कि आप विनोद से इसके अतिरिक्त और सहायता भी ले सकते हैं। लेखक उनको इसके लिये सहर्ष धन्यवाद देता है। यद्यपि अनेक स्थानों पर विनोद से भी अधिक लिखने की अवश्यकता पड़ी है तथापि विनोद से बहुत सहायता ली गई है।

अंत में इस पुस्तक की उत्पति के कारण स्वरूप श्रीयुत पंडित अवध उपाध्याय के प्रति तथा उन अन्य सज्जनों के प्रति जिनसे इसके बनाने में समय समय पर किसी न किसी रूप में सहायता मिलती रही है लेखक अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हुआ इस पुस्तक को हिन्दी प्रेमियों और पाठकों को अर्पण करता है।

श्री प्रयाग
मार्गशीर्ष संवत् १९८६ वि०

रमाशंकर प्रसाद

विषयानुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ
अवतरणिका	१—२२
हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास ...	२३—२८४
पहला प्रकरण	
आरम्भ से लेकर सूरदास के पहले तक (७वीं शताब्दी से १५वीं शताब्दी तक) ...	२३—३६
प्रथम भाग	
आरम्भ से लेकर चन्द और जल्हन तक (७वीं शताब्दी से १२वीं शताब्दी तक) ...	२३—२७
दूसरा भाग	
चन्द और जल्हन के बाद से कबीरदास के पहले तक (१३वीं और १४वीं शताब्दियाँ) ...	२७—३२
तीसरा भाग	
कबीरदास से लेकर सूरदास के पहले तक (१५वीं शताब्दी)	३३—३६
दूसरा प्रकरण	
सूरदास से लेकर तुलसीदास तक (१६वीं शताब्दी और १७वीं शताब्दी का आदि भाग)	४०—७६
पहला भाग	
सूरदास से लेकर तुलसीदास के पहले तक (१६वीं शताब्दी का अधिकांश) ...	४०—५३

दूसरा भाग

तुलसीदास काल

(१६वीं शताब्दी का अन्तिम और १७वीं का आदि भाग) ... ... ५३—७६

तीसरा प्रकरण

तुलसीदास के बाद से लल्लूजी लाल के पहले तक

(१७वीं शताब्दी के आदि भाग के बाद से १८वीं शताब्दी तक) ... ... ८०—१७७

पहला भाग

तुलसीदास के बाद से देव तक

(१७वीं शताब्दी के आदि भाग के बाद से १८वीं के मध्य तक) ... ... ८०—१३१

प्रथम विभाग ... ... ८३—६८

दूसरा विभाग ... ... ६८—११२

तीसरा विभाग ... ... ११२—१३१

तीसरा प्रकरण

दूसरा भाग

देव के बाद से लल्लूजी लाल के पहले तक

(१८वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध) ... १३२—१७७

प्रथम विभाग ... ... १३७—१६१

दूसरा विभाग ... ... १६१—१७७

चौथा प्रकरण

लल्लूजी लाल से लेकर हरिश्चन्द्र के पहले तक

(१६वीं शताब्दी के प्रथम ६० वर्ष) ... १७८—२२८

पहला भाग

लल्लूजी लाल से पद्माकर तक

(१९वीं शताब्दी का पहला तिहाई भाग) ... १८२—२०८

दूसरा भाग

पद्माकर के बाद से हरिश्चन्द्र के पहले तक ... २०८—२२८

पाँचवाँ प्रकरण

हरिश्चन्द्र से लेकर आज तक

(१८६० ई० के बाद) ... ... २२९—२८४

हिन्दी साहित्य और उसके रचयिता ... २८५—२९६

अकारादि सूची ... ... २९७—३१५

अवतरणिका

भाषा और साहित्य

आरम्भ ही में पाठकों को भाषा और साहित्य का अन्तर समझ लेना आवश्यक है। अपना अभिप्राय प्रकट करने के लिए मुख से शब्द वा स्वर निकालने की पद्धति को भाषा कहते हैं। सार्थक शब्द योजना का नाम भाषा है, अर्थात् भाषा अर्थ प्रकाशन का शाब्दिक संकेत है। अतएव पक्षियों और पशुओं आदि की भी भाषा हो सकती है। मनुष्य जाति ने देश और काल के अन्तर के कारण तथा अपनी सुगमता के लिए भिन्न भिन्न भाषाएँ बनाई हैं और उनके भिन्न भिन्न नाम रखे हैं जैसे संस्कृत, हिन्दी, अंगरेज़ी, अरबी, युनानी इत्यादि। किसी भाषा का साहित्य उस भाषा में लिपिबद्ध भावों और विचारों का समूह है—शब्द रूप में एकत्रित किए हुए भाव और विचार ही साहित्य कहलाते हैं। साहित्य लेखकों की कीर्ति है। ऐसा हो सकता है कि हम कोई भाषा जानते हों किंतु उसके साहित्य से अपरिचित हों अथवा उसका साहित्य भली भाँति जानते हों किंतु उस भाषा का उचित ज्ञान न हो। यों तो साहित्य शब्द का अर्थ बहुत व्यापक है किंतु सुगमता के लिए और भिन्न भिन्न विषयों को श्रेणीबद्ध करने के विचार से विद्वानों ने इसका प्रयोग-क्षेत्र संकीर्ण कर देना उचित समझा है। साधारणतः साहित्य से काव्य, महाकाव्य, नाटक, निबंध, उपन्यास और गल्प का अर्थ समझते हैं। स्मरण रहे कि यथोचित रूप से साहित्य की सीमाएं निर्दिष्ट नहीं की जा सकतीं, क्योंकि गणित, रसायन आदि शास्त्रों के शब्दों की भाँति उसकी परिभाषा नियत नहीं हो सकती। यह केवल समझ लेने की बात है।

साहित्य-आचार्यों ने साहित्य के दो बड़े भाग किये हैं एक गद्य और दूसरा पद्य किन्तु इसमें भी बड़ी कठिनाई है। यदि पद्य का अर्थ केवल एक विशेष रूप से निर्दिष्ट (fixed) नियमानुसार शब्द योजना हो तो बहुत सा ऐसा पद्य मिलेगा जिसको गद्य से भिन्न समझने में कोई लाभ नहीं—विभाग ठीक तो रहेगा किंतु व्यर्थ और यदि पद्य का अर्थ काव्य हो तो "गद्य काव्य" ऐसे शब्द झूठे और निरर्थक हो जायँगे —वास्तव में गद्य और पद्य भाषा की दो शैलियों के नाम हैं। पद्य में शब्दों या अक्षरों की मात्रा, और उनके उच्चारण में किसी प्रकार का स्पष्ट नियम रहता है जो गद्य में नहीं पाया जाता। परिभाषा की कठिनाई उपस्थित रहते हुए भी लोग साहित्य का अर्थ कुछ न कुछ ठीक ही समझ लेते हैं। अब यह देखना है कि साहित्य का जन्म क्यों और कैसे होता है उसका स्वरूप कैसा होता है और व्यक्तिगत जीवन तथा सामाजिक जीवन से उसका क्या संबंध है।

साहित्य का जन्म

लेखक क्यों लिखता है? ग्रंथकार का, ग्रंथ निर्माण करने में क्या अभिप्राय है? कवि लोग किस लिए कविता किया करते हैं? अथवा समालोचक लोग लेखकों के पीछे क्यों पड़े रहते हैं? इन प्रश्नों का एक उत्तर नहीं दिया जा सकता। कुछ मनुष्यों के हृदय में भावनाएं उत्पन्न होती हैं और विचार उठते हैं जिनको प्रकट किए बिना वे रह ही नहीं सकते। उनको भाषा रूप में रखने से उन्हें प्रसन्नता प्राप्त होती है। बहुत सी कविताएं इसीलिए लिखी जाती हैं। तुलसीदास ने कहा भी है:—

"स्वांतःसुखाय तुलसीरघुनाथगाथा
भाषानिबंधमतिमंजुलमातनोति"

अर्थात् अपने अंतःकरण के सुख के निमित्त रामचंद्र की कथा का अतिसुंदर भाषा प्रबंध में विस्तार (वर्णन) करता हूँ।

कुछ लोगों को मानव जीवन के देखने और समझने में एक प्रकार का आनन्द आता है। वे उसके गुणों की चर्चा करते हैं, अवगुणों को खोलते हैं और सुधार का रास्ता साफ़ करते हैं। मनुष्य का हृदय खोल के पुस्तक में रख देते हैं, इस प्रकार के लेखक बहुधा नाटक और उपन्यास लिखा करते हैं। फिर कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो यह समझते हैं कि यदि उनके विचार प्रकट किए जायँ तो देश तथा समाज की उन्नति में सुभीता होगी। ऐसे विचारकर्ता की लेखनी से निबंध निकला करते हैं। अंत में ऐसे लोग भी मिलते हैं जो उक्त लेखकों के ग्रंथों के सुलभ होने और उचित रीति से समझे जाने के लिए अपनी लेखनी का प्रयोग करते हैं। इनका नाम पंडितों ने समालोचक रखा है। प्रायः सब लेखकों का एक यह भी अभिप्राय हुआ करता है कि अन्य लोग उनका लिखा पढ़ें, समझें और उससे लाभ उठावें। परिणाम यह होता है कि लाभ उठाने वाले उनका यश गाते हैं और यदि हो सकता है तो उनकी आर्थिक तथा सामाजिक दशा को उच्च करने का प्रयत्न करते हैं। अनुमान होता है कि इस परिणाम को जानते हुए अनेक लेखकों के हृदय के किसी कोने में इस प्रकार की अभिलाषाएं भी पड़ी रहती होंगी। विशेषतः अपने तथा अपने ग्रंथ के आदर सम्मान होने की एक प्रबल इच्छा होती है। उच्च कोटि के लेखक चाहते हैं कि विद्वान समाज में उनकी रचनाएं सम्मानित हों। गोस्वामी जी सब की वंदना करते हुए लिखते हैं :—

"होउ प्रसन्न देहु बरदानू,
साधु समाज भणित सनमानू"।

एक अँग्रेज़ी लेखक ने लिखा है कि मुझको दो बातों से कष्ट होता है। एक तो जब मेरी रचनाएं सुन कर पंडित लोग चुप रहते हैं (अथवा प्रशंसा नहीं करते) और दूसरे जब मूर्ख लोग प्रशंसा करते

हैं*। प्रशंसा और ख्याति के संबंध में अँग्रेज़ी के प्रसिद्ध महाकवि मिल्टन (Milton) ने भी लिखा है कि यह "उत्कृष्ट चित्तों की अंतिम दुर्बलता है" (The last infirmity of the noble mind"). धन प्राप्ति के लिए भी बहुत सा साहित्य लिखा गया है। राजसभा से कुछ मिलने की आशा में अनेक कविताएँ रची गई हैं। गोल्ड-स्मिथ (Goldsmith) की बहुत सी रचनाएं धन ही के सहारे संसार में आई† कोल्रिज (Coleridge) और वर्ड्सवर्थ (Words-worth) के प्रसिद्ध काव्य एन्शियेंट मैरिनिर (Ancient-Mariner) की उत्पत्ति का बहुत कुछ पता इसी आशा की ओर मिलेगा।

साहित्य का स्वरूप

इस प्रकार जन्म पाकर साहित्य संसार में अपना स्थान पाता है। अब यह देखना है कि इसका स्वरूप कैसा होता है। हिन्दी साहित्य में १२ वीं और १३ वीं

---

* सच है "जो प्रबंध बुध नहिं आदरहीं, तो श्रम वृथा बाल-कवि करहीं"—तुलसीदास।

† इस महाकवि के समकालीन प्रसिद्ध साहित्यवेत्ता डॉक्टर जॉन्सन की सम्मति में "सिवाय मूढ़ के किसी और ने धन के अतिरिक्त किसी (आशा) के लिये कभी नहीं लिखा ("No man but a block-head ever wrote except for money" संभव है कि अंग्रेजी कवियों के संबंध में यह कथन उचित हो। किंतु हिन्दी कवियों के लिए तो यह बिल्कुल ही अनुपयुक्त है। यहाँ पर धार्मिक कविता की अधिकता है और सूरदास, तुलसीदास, कबीरदास तथा वैष्णव काल के समस्त कवियों में किसी के संबंध में नहीं कहा जा सकता कि धन की आशा ने उनकी कविता को जन्म दिया। इन महात्माओं के अतिरिक्त हिन्दी के अनेक कवि राजा महाराजा थे जिन्हें आर्थिक लाभ की कामना न थी। संसार की अन्य भाषाओं को धनपात्र सज्जनों ने इस प्रकार सुशोभित नहीं किया।

शताब्दि में वीर रस* अधिकांश में है और राजनैतिक बातों का अधिक वर्णन है। १४ वीं और १५ वीं शताब्दियों में साहित्य अधिकतर धर्म और समाज की आलोचना में लगा है। १६ वीं और प्रारंभिक १७ वीं शताब्दि में भक्ति और शांत रस ने हिन्दी को सर्वोच्च शिखर पर पहुँचाया। १७ वीं और १८ वीं शताब्दियों में शृंगार ने भाषा को अलंकृत करके अपना सिक्का जमा लिया। तत्पश्चात् कविता लड़खड़ाने लगी, शृंगार कुछ रह गया, नाटक ने थोड़ा सहारा दिया, गद्य बढ़ने लगा और चलते चलते वर्तमान समय में साहित्य को गद्य ने संभाल लिया। अतएव आज कल गद्य ही प्रधान है; उपन्यास और कहानियों क आधिक्य है; नाटक, काव्य और महाकाव्य भी निकल रहे हैं। नाटक ने हिन्दी साहित्य को अभी तक भली भाँति अपनाया ही नहीं। इन सब का क्या कारण है? संस्कृत, युनानी (Greek), लैटिन, अंग्रेज़ी, जर्मन, फ्रेंच—सब भाषाएं अपने नाटक पर गौरव करती हैं। हिन्दी ही में इसका अभाव क्यों हुआ? रामचरित

---

* रस का साधारण अर्थ स्वाद है, जैसे मीठा रस, खट्टा रस इत्यादि। साहित्य में भी रस शब्द से एक प्रकार के स्वाद ही का अर्थ निकलता है। "पाठकों या दर्शकों को काव्यों अथवा अभिनयों में जो अनिर्वचनीय और लोकोत्तर आनंद प्राप्त होता है साहित्य शास्त्र के अनुसार वही रस कहलाता है" (शब्द सागर)। रस साधारणतः नौ होते हैं। "रीति, हास्य, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा, आश्चर्य और निर्वेद इन नौ स्थायी भावों के अनुसार नवरस माने गये हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं:—शृङ्गार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स, अद्भुत, और शांत" (शब्दसागर)। कुछ लोग 'शांत' को निकाल कर आठ ही रस मानते हैं और कुछ 'वात्सल्य' को मिलाकर दस मानते हैं।

मानस ऐसी पुस्तक इंग्लिस्तान में क्यों नहीं लिखी गई ? बिहारी लाल और मतिराम इत्यादि सूरदास और तुलसीदास का मार्ग छोड़ कर श्रृंगार में क्यों डूब गए ? एवं आॅट्वे (Otway) काँग्रीव (Congreve) वाइकर्ली (Wycherley) इत्यादि ने शेक्सपियर (Shakespeare) और मिल्टन (Milton) को भूल कर १७ वीं शताब्दि में अँग्रेजी साहित्य को क्यों नीचा कर दिया ? इस प्रकार के अनेक प्रश्न साहित्य पाठकों तथा समालोचकों के हृदय में उठा करते हैं। किंतु इनके उत्तर अति कठिन हैं।

निर्देशक शक्तियाँ

तथापि विचार दृष्टि से देखने पर ज्ञात होता है कि कुछ स्थायी और कुछ अल्पकालिक शक्तियाँ समय समय पर साहित्य का स्वरूप निर्दिष्ट किया करती हैं। इनमें मुख्य जाति, देश, काल तथा धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक दशाएं हैं । फिर विशिष्ट लेखक की शारीरिक, मानसिक और आत्मिक दशाएं और उसके विचार और भाव हैं जो कुछ तो परिस्थितियों पर निर्भर हैं और कुछ " biological accidents " पर अर्थात् दैवी संयोग या जीववैज्ञानिक घटना पर। उपरोक्त शक्तियाँ लेखक के साहित्य बल को एक निर्दिष्ट मार्ग पर चला देती हैं जिस पर वह अपने ढंग से कार्य किया करता है। कभी कभी ऐसा भी होता है कि काल के उपयुक्त न होने के कारण कितने ही महान पुरुषों का कीर्तिबीज उगने ही नहीं पाता। संभव है कि यदि बिहारी लाल अथवा मतिराम तुलसीदास अथवा सूरदास के समकालीन होते तो हिन्दी में श्रृंगार रस की कविता का यह उच्च पद न होता जो इस समय है। उक्त कवि या तो इधर उधर श्रृंगार लिए भटकते फिरते अथवा राम या कृष्ण की भक्ति में पड़ कर कुछ स्वान्तःसुखाय गा जाते। यदि तुलसीदास आज कल जन्म लिए होते तो संभव है कि एक छोटा मोटा आधु-

निक महाकाव्य प्रिय प्रवास जैसा बना जाते, किंतु संसार को दंग कर देने वाले रामचरित-मानस का नाम भी न सुनाई देता । अब उपरोक्त शक्तियों का प्रभाव एक एक को लेकर देखिये ।

जाति

भिन्न भिन्न जातियों की कुछ अपनी विशेषताएं हुआ करती हैं। आर्यों का शारीरिक स्वरूप, उनकी मानसिक बनावट और उनके भाव और विचार कुछ और होते हैं और द्राविड़ों के कुछ और । युनानी कुछ और ढंग से सोचते तथा जीवन निर्वाह करते थे। और रोमनस (Romans) कुछ और ही ढंग से, रूसी सभ्यता एक प्रकार की थी तारतार सभ्यता एक भिन्न ही प्रकार की थी, ऐंगलो सैक्सन्स (Anglo-Saxons) की रीतियां कुछ और थीं। नार्मन्स् (Normans) की कुछ और । इस प्रकार की भिन्नता शताब्दियों के परस्पर मेल जोल, रहन सहन, खान पान, विवाह इत्यादि के कारण जाती रहती है और देश काल इत्यादि के प्रभाव से इन विशेषताओं में परिवर्तन हुआ करता है। किन्तु ऐसा परिवर्तन अथवा भिन्नता का लोप बहुत ही धीरे धीरे होता है। भारतवर्ष का इतिहास आर्यों के आगमन से प्रारंभ कर सकते हैं । प्रतीत होता है कि आर्य लोगों में तार्किक विचारशक्ति का प्राबल्य था इसी कारण से जब उन्हें भारत ऐसे हरे भरे देश में पूर्ण अवकाश मिला तो सांख्य, न्याय इत्यादि शास्त्रों की उत्पत्ति हुई। तर्क ही की अधिकता होने से ज्योतिष तथा कार्य कारण-मय विश्व का विश्लेषण (analysis) इस उन्नति को प्राप्त हुआ । दूसरी विशेषता इनके देवता संबधी विचार में है। काकेशिया से पूरब की ओर जो आर्यदल आया उसमें देवताओं का अधिक सम्मान था। वे लोग ईश्वर और देवताओं को गुण तथा पुण्य का अवतार मान कर राक्षसों को अवगुण तथा पाप का भंडार समझते थे और दोनों

में युद्ध कराकर अंत में राक्षसों को हरा देते थे। मनुष्य साधारणतः देवताओं से नीची श्रेणी में रहता था और उनकी आज्ञाओं का उल्लंघन करना पाप समझता था। किन्तु काकेशिय से ज्यों ज्यों पश्चिमोत्तर आर्य लोग बढ़ते गए त्यों त्यों देवश्रेणी और मनुष्यश्रेणी का अंतर कम होता गया। यहाँ तक कि स्कैंडिनेविया (Scandinavia) पहुँचते पहुँचते इसका प्रायः लोप ही हो गया। प्राचीन महाकाव्यों के देखने से इसका पूर्ण बोध हो जाता है। अब एक अन्य जाति को देखिए। यहूदी प्राचीन महाकाव्य भारतीय, युनानी और स्कैंडिनेवियन सबसे भिन्न है। भारत के आर्यों में एक और विशेषता यह थी कि यहाँ के पूर्वनिवासियों से इनकी सभ्यता उच्च कोटि की थी और थोड़े ही काल में इन लोगों ने प्राचीन निवासिओं का पराजय करके सब प्रकार से अपना सिक्का जमा लिया और आनन्द का जीवन इस सुखमय भारत में व्यतीत करने लगे। इसी कारण से इन लोगों ने साहित्य की उन्नति की और अद्वितीय वेद शास्त्रों का निर्माण करके संसार भर में साहित्य-विजय प्राप्त की। और पूर्वकाल के लोगों को इनकी सभ्यता ने इतना दबा दिया कि उनका साहित्य कभी उठा ही नहीं। यह समझने की बात है कि जो जाति किसी अन्य जाति के दबाव में रहती है उसका साहित्य भी दबा रहता है। इतिहास से ज्ञात होता है कि साहित्य जातीय मानस का स्वतंत्र उद्भव (product or growth) है। परतंत्रता उसका नाशक है। और भारत, जर्मनी, पोलैंड, आयर्लैंड और वेल्स इन सब देशों का इतिहास इस कथन का समर्थन करता है।

आर्यों के पश्चात् शाक, यवन इत्यादि अनेक जातियाँ आयीं किन्तु उनकी संख्या थोड़ी थी और वे इस देश के रहने वालों के साथ ऐसे मिल गए कि अपनी आत्मविशेषता (individuality)

खो बैठे। युनानी लोगों का प्रभाव भी बहुत कम रहा। आठवीं शताब्दि से मुसलमान लोगों का आना शुरू हुआ। सन ७१२ ई० में इन्होंने भारत में पहला क़दम रखा। मुसलमानों में भिन्न भिन्न जातियाँ थीं। कुछ लोग अरबी थे। ख़ास अरब देश के मुसलमान जो भारत में आए उनकी सभ्यता सराहनीय थी। इनको पढ़ने लिखने तथा सीखने सिखाने का बड़ा शौक था। भारत में आकर इन्होंने ज्योतिष और अंकगणित इत्यादि बहुत कुछ पढ़ा। अरब के लोगों में इतिहास लिखने का विशेष गुण था। प्राचीन भारत में शास्त्रकार, कवि और महाकवि अनेक हुए थे: बहुतों ने कथाएं भी कहीं और लिखी थीं; संवत और तिथि की गणना भी वे ख़ूब जानते थे। भारतीय काल गणना सृष्टि के आदि से आरंभ होती है। इस विषय में कोई अन्य देश तुलना करने का साहस नहीं कर सकता किंतु वर्तमान ढंग से इतिहास लिखने की प्रथा यहाँ नहीं थी। ऐतिहासिक कथाएं अधिकतर महाकाव्यों और पुराणों में मिलती हैं, और फिर वंदीजन वंश को एक उलटी सीधी प्रशंसापूर्ण कथा काव्यरूप में बना कर गाया करते थे, परंतु उसे इतिहास नहीं कह सकते। यहाँ पर कुछ तो युनानियों ने और कुछ मुसलमानों ने इतिहास लिखने की प्रथा बढ़ाई।

अरब वालों के पश्चात् अन्य मुसलमान जातियों ने भारत पर आक्रमण किया। साहित्य पर उनका प्रभाव यही पड़ा कि अशांति के कारण अधिक साहित्य तैयार न हो सका। हाँ धार्मिक और सामाजिक आन्दोलनों ने कुछ प्रभावशाली साहित्य की उत्पत्ति अवश्य की। परंतु जब मुग़ल आये तो इनकी बात और थी। इनमें फारस और तातार के रक्त मिले होने से बहुत सी विशेषताएं आगई थीं। फिर हिन्दू रक्त भी मिला। एक तो ये उदार चित्त थे और इनकी उदारता ने भारत के हिन्दी साहित्य को बड़ी

उन्नति दी। दूसरी विशेषता इनकी यह है कि इनको संगीत, शिल्प, चित्रकारी तथा गृहनिर्माण का बड़ा शौक था। मुसलमानी धर्म में संगीत इत्यादि निषिद्ध है किंतु इस अस्वाभाविक निषेध को वे न मान सके। हिन्दी साहित्य पर इनके इन गुणों का बड़ा प्रबल प्रभाव पड़ा। शृंगार रस की अधिकांश कविता इन्हीं के समय में रची गयी। इस संबंध में एक और बात का ध्यान रखना चाहिए। हिन्दू मस्तिष्क ज्ञान, विद्या तथा सिद्धांत (theory) की ओर अधिक ढलता है। मुसलमान मस्तिष्क अधिक कार्य प्रवीण होता है। व्यवहार (practice) की ओर इसका अधिक झुकाव रहता है। यह अंतर उस काल के संगीत और चित्रकारी में बिल्कुल स्पष्ट है। हिन्दू चित्रकारों का मुख्य उद्देश यह होता है कि चित्र के प्रधान भाव को पूर्णरूप से दर्शाया जाय उनके चित्रों में गौण वस्तुओं तथा किनारा और चौखट (frame) इत्यादि की ओर कम ध्यान रहता है। किंतु मुसलमान चित्रकार उन्हीं की ओर अधिक दृष्टि रखते हैं। उनके चित्रों में सजावट बनावट बहुत होती है। प्रधान चित्र के आस पास की सारी वस्तुएं रंगीन और शोभायमान बना दी जाती हैं जिनसे तड़क भड़क बढ़ जाती है और वास्तविक अवगुण भी कुछ छिप जाते हैं। संगीत में भी यह अंतर दीख पड़ता है। मुसलमान मस्तिष्क की इस प्रवृत्ति ने उस समय के साहित्य को भी बहुत प्रभावित किया है। कहाँ सूरदास और तुलसीदास की सीधी सादी भाषा जिसमें से भावों का आधिक्य फूट निकलता है। शब्दों के सजाने अथवा भाषा को अलंकृत करने की कोई चेष्टा ही नहीं। और कहाँ विहारी लाल की चमचमाती सजी सजाई भाषा। विहारी ने तो ख़ैर भाव भी रखा किंतु इनके पश्चात् के बहुत कवियों ने केवल भाषा की रंगीनी ही दिखलाई है। तुलसी सूर को छोड़ कर शृंगार रस के

कवियों में भी यही अंतर दीख पड़ता है। विद्यापति की कविता देखिए :—

"सखि हे की पूछसि अनुभव मोय।
सोइ पिरीति अनुराग बखानइत तिल तिल नूतन होय॥
जनम अवधि हम रूप निहारल नयन न तिरपित भेल।
सोइ मधुर बोल श्रवनहिं सूनलों श्रुति पथे परस न बेल॥

मुख्य भाव किस सुन्दरता से दर्शाया है। इसके सामने यदि देव इत्यादि की कविता रखिये तो शब्दों की रंगीनी, भाषा का बनाव श्रृंगार, इधर उधर का सौंदर्य साफ़ बतला देता है कि पिछली कविता किस समय में लिखी गई होगी। देव का केवल एक ही पद देखिए :—"रंगराती हरी हहराती लता झुकि जाति समीर के झूकन सो"। स्मरण रहे कि मुग़लों का झुकाव कला की ओर अधिक रहा और हिन्दुओं का झुकाव ज्ञान और विज्ञान की ओर अधिक रहा। मुग़ल राज्य में दोनों का अच्छा संयोग हुआ और कला की प्रशंसनीय वृद्धि हुई। वास्तव में वह काल ही कला का था। नृत्य, गान, वादन, चित्रकारी, शिल्प, स्थापत्य सभी कलाओं की वृद्धि हुई। अतः काव्य कला ने भी उस समय में बड़ी उन्नति की।

मुसलमान जाति की एक यह भी विशेषता दीख पड़ती है कि अपने धर्म और समाज की ओर तो उनका अधिक ध्यान जाता है किंतु देश और मातृ-भूमि की ओर वे कम ध्यान देते हैं। मुसलमानी समय के हिन्दी साहित्य में देशीयता तथा मातृभूमि-अभिमान के अभाव होने का एक यह भी कारण था। समकालीन एलिज़बेथन (Elizabethan) अँग्रेज़ी साहित्य में चारों ओर देशाभिमान दीख पड़ता है।

मुसलमानों के पश्चात् कोई जाति ऐसी नहीं आई जिसने भारत में अपना निवास स्थान बना लिया हो। युरूपीय जातियाँ आईं। इन्होंने अपने अपने राज्य भी स्थापित किए और वर्तमान समय में भारतीय शासन इन्हीं में से एक के हाथ है। तथापि इन लोगों ने यहाँ के निवासियों के जीवन में अपना जीवन नहीं मिलाया। किंतु इनकी अपनी एक विशेष सभ्यता का बड़ा ही प्रभाव हिन्दी साहित्य पर पड़ा है। इस जाति के जीवन में दो तीन मुख्य विशेषताएं पाई जाती हैं जिन्होंने अपना प्रभाव हिन्दी पर डाला है। इनकी सभ्यता का प्रथम आधार विज्ञान (Science) है। प्राचीन भारतीय सभ्यता का आधार धर्म, दर्शन शास्त्र और व्यवसाय था। वैज्ञानिक विचारों का एक फल गद्य है अर्थात् वैज्ञानिक काल में कविता का प्रायः अभाव रहता है। एक प्रसिद्ध अँग्रेज़ कवि कोल्रज (Coleridge) ने कहा है कि "the true antithesis of poetry is not prose but science" काव्य का वास्तिक विलोम विज्ञान है न कि गद्य अर्थात् काव्य का वास्तिक विरोध विज्ञान से है न कि गद्य से—कविता और विज्ञान का साथ साथ चलना अति कठिन है। एक भाव बाहुल्य और कल्पना (imagination) पर निर्भर है दूसरा भाव रहित विचार पर। अतएव वर्तमान काल में गद्य ही प्रधान है। दूसरी ध्यान देने योग्य बात यह है कि यह जाति स्वतंत्रताप्रिय है। शारीरिक (personal) और राजनैतिक स्वतंत्रता इनके यहाँ का मुख्य उद्देश्य है। अतएव वर्तमान हिन्दी साहित्य में राजनैतिक बातों और स्वतंत्रता का अधिक उल्लेख है।

साहित्य का स्वरूप देश पर भी बहुत कुछ निर्भर है। देश से तात्पर्य वहाँ की भौगोलिक (Geographical) दशाओं, जलवायु, पैदावार और जीवन निर्वाह

देश

के साधनों (sources) से है। जैसे भारत और नार्वेस्विडेन को लीजिए। भारत में सुखमय जीवन व्यतीत करना सहज है। आर्य लोगों का जीवन यहाँ आने से आनन्द पूर्ण हो गया। उनको सुरसरि ऐसी नदी मिली जिसका जल अतिलाभदायक और स्वास्थ्यप्रद है; तुलसी ऐसा वृक्ष मिला जिसकी पत्तियों से अनेक रोग अच्छे हो जाते हैं और मनोहर आकाश मिला जो सूर्य अथवा चन्द्रमा और तारों से सुशोभित रहा करता है। भोजन, वस्त्र तथा गृह आदि के लिए कठिन परिश्रम की आवश्यकता न थी। प्रकृति ने स्वयं बहुत कुछ पहले ही से ठीक कर रखा था। ऐसी दशा में यहाँ का साहित्य तैयार हुआ। प्रकृति तथा ईश्वर का गुणगान; अतिमानुष शक्तियों की ओर कृतज्ञता और देवताओं पर भरोसा—इन सब से साहित्य भरने लगा और दार्शनिक विचारों ने उसे उच्च कोटि पर पहुँचा दिया। खेती इत्यादि की वर्षा पर निर्भरता ने हिन्दू साहित्य में भाग्य का बड़ा अंश पैदा कर दिया। नारवे इत्यादि की दशा भिन्न थी। वहाँ जीना कठिन था। किसी प्रकार जानवरों को मार कर आधा पेट भर लेते थे। प्रकृति से उनकी सदैव लड़ाई ही रही। इसी लिए उनका साहित्य और ढंग का है। उनका महाकाव्य हमारे यहाँ के महाकाव्य से बिल्कुल भिन्न है। इसी प्रकार अन्य साहित्यों में भी वहाँ के देश का प्रभाव पड़ा है। भारतीय साहित्य की एक बड़ी विशेषता यह है कि इसमें उपमाओं की भरमार है। ये उपमाएं अधिकतर प्रकृति से ली गई हैं। काव्य और नाटक तो अलग रहे साधारण बोलचाल में भी इनका प्रयोग बहुत अधिक है। करकमल, कमल-पद, चरणारविंद, चन्द्रमुखी, मृगनयनी इत्यादि शब्द इतने प्रयुक्त हैं कि बहुत से पाश्चात्य पाठकों और समालोचकों का जी बार बार एक ही उपमा सुनते सुनते ऊब जाता है। और क्यों न हो?

उनको तो ऐसे शब्द केवल साधारण अलंकार युक्त दीख पड़ते हैं। वे समझ नहीं सकते कि कमल, मृग और निर्मल आकाश के चन्द्रमा इत्यादि भारत के ग्राम्य जीवन के प्रति दिन की वस्तुएं हैं जिन्होंने यहाँ की भाषा और जीवन दोनों ही को सरस और अलंकृत कर दिया है। हिन्दी तथा संस्कृत भाषा में अलंकार अधिक होने का मुख्य कारण यही है कि भारत की स्वाभाविक मधुरता, प्रकृति की सर्वाङ्ग सुन्दरता और शांतिमय जीवन—सब ने मिल कर भाव भाषा और रहन सहन सब को आभूषित कर दिया है। अरब सदृश मरु भूमि में इस प्रकार का साहित्य न तो उत्पन्न हो सकता है न उसकी वृद्धि हो सकती है। वहाँ के क़सीदों में मरुभूमि का विस्तृत वर्णन रहता है। अतएव अरबी साहित्य में नाटक तथा यहाँ की तरह श्रृंगार इत्यादि रस की कविता का अभाव है।

काल

देश के अतिरिक्त काल का विशेष प्रभाव पड़ता है। काल से तात्पर्य जाति देश और सभ्यता का संयोग है। जैसे वैदिक काल। जिस समय में वेद का निर्माण हुआ उस समय भारत, यहाँ की आर्य जाति, और उसकी तात्कालीन सभ्यता ने मनुष्य जीवन को कैसा बना रखा था—इसी का नाम वैदिक काल है। साहित्य पर काल ने भी अपना पूरा असर डाला है। वैदिक, और पौराणिक युग तथा स्मृतिकाल की अपनी अपनी विशेषताएं प्रत्यक्ष हैं। वर्तमान काल के इतिहास में भी यह प्रभाव प्रकट है। १६ वीं शताब्दि का अँग्रेज़ी साहित्य, १६ वीं और १७ वीं शताब्दि का हिन्दी साहित्य, १५ वीं और १६ वीं शताब्दि का युरूपीय साहित्य, मध्यकाल का इटैलियन साहित्य तथा प्राचीन काल का युनानी साहित्य—सभी एक एक विशेष काल की सूचना देते हैं।

काल ने साहित्य को एक मार्ग बतलाया और साहित्य ने उस काल का चित्र उतारा।

निर्दिष्ट जीवन

जाति देश और काल के संयोग से एक प्रकार का निर्दिष्ट जीवन, व्यक्तिगत तथा सामाजिक, तैयार होता है। जैसे वैदिक भारत में आर्यों का जीवन, मुग़ल भारत में हिन्दू-मुसलमानों का जीवन, ट्यूडर इंगलैंड में अंग्रेज़ों का जीवन इत्यादि एक विशेष रूप का था जिसका परिचय उस समय की दशाओं से मिलता है। इस प्रकार का परिचय साहित्य समझने के लिए अति आवश्यक है। तुलसीदास के समय का भारत कैसा था, राजा और प्रजा का परस्पर संबंध और व्यवहार किस प्रकार का था, लोग उनका कैसा सम्मान करते थे और अस्सी घाट पर बैठे बैठे वह कैसी बातें सोचा करते थे। इन सब का ज्ञान आवश्यक तथा रसपूर्ण है। कवि लोग कविता कब और कैसे बनाया करते थे, उनके विचारों पर किन किन बातों का प्रभाव पड़ा करता था, उन्हें किस बात की अधिक चिन्ता रहा करती थी, उनके जीवन का उद्देश क्या था, वह कैसा जीवन व्यतीत करते थे और उन्हें कैसी कैसी कठिनाइयाँ झेलनी पड़ती थीं—इन सब का ज्ञान कविता का स्वरूप उद्देश्य और प्रभाव समझने के लिए अत्यावश्यक है। दूसरी ओर साहित्य पढ़ने से तत्कालीन जीवन का भी बहुत कुछ पता मिलता है।

साहित्य एक प्रकार का दर्पण है जिसमें किसी समय का मनुष्य-जीवन प्रतिबिंबित होता है। इंग्लिस्तान की १६ वीं शताब्दि का जीवन—सब लोगों में एक प्रकार की युवा अवस्था का भाव और उत्साह, सब की नाटक और काव्य प्रियता, लोगों के विचारों की स्वतंत्रता, उनकी रहन सहन, उनके हृदय में देश और जाति का अभिमान—सब कुछ तत्कालीन

साहित्य से प्रकट है। १७ वीं शताब्दि में लोग कैसे थे—उनका आचरण, उनकी विलास प्रियता, ढीला जीवन, जातीयता तथा देशी-यताका अभाव, उच्च विचारों की कमी—सभी साहित्य में प्रतिविंवित हैं। इसी प्रकार भारत में राजपूतों का समय, पूर्व-मुग़ल मुसलमानी काल, मुग़लों का ज़माना, भारत के अधःपतन का काल, मरहठों और सिक्खों की जाग्रति, पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव—सब कुछ साहित्य दर्पण में प्रत्यक्ष दीख पड़ता है। टेन (Taine) साहेब ने अपने अंग्रेज़ी साहित्य के इतिहास (History of English Literature) में लिखा है :—

"A literary work is not a mere individual play of imagination, the isolated caprice of an excited brain, but a tránscript of contemporary manners, a manifestation of a certain kind of mind."

अर्थात् एक साहित्यिक रचना केवल व्यक्तिगत कल्पना की लीला अथवा उष्ण मस्तिष्क की असंलग्न उत्कल्पना नहीं वरन् समसामयिक आचारादि का अनुलेख तथा एक विशेष मानसिक अवस्था की अभिव्यक्ति है।

साहित्य और देशदशा

इस निर्दिष्ट जीवन की तीन मुख्य धाराएं हैं—धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक। साहित्य से कितना इनका घनिष्ठ संबंध है संसार के इतिहास से प्रकट है। उदाहरणार्थ युनान, रूस, जर्मनी, इंग्लिस्तान, फ्रांस और भारत को देखिये। युनान जब पेरिक्लीज़ के समय में राजनैतिक शिखर पर पहुँचा था तो वहाँ पर एक से एक बढ़कर कवि, नाट्यकार, सुवक्ता और तत्ववेत्ता हुए जिनके नाम सारे संसार में व्याप्त हैं। रूसी सामाजिक और राजनैतिक दशा ने एक अनोखा साहित्य संसार को प्रदान किया है। जर्मनी की अंतिम शताब्दि की

सामाजिक दशा, श्रमिकों का जीवन, लोगों के राजनैतिक तथा राष्ट्र संबंधीय विचार, वाणिज्य और व्यापार—इन सब ने एक नए ढंग का साहित्य निकाला। इंग्लिस्तान की १६ वीं और १७ वीं शताब्दि का पूरा साहित्य उस समय के जीवन का चित्र है। अंग्रेज़ों का संसार में फैलना, उनका अन्य युरुपीय जातियों पर विजय पाना, और प्रबल उदार और शांतिमय शासन में रहना, तत्पश्चात् धार्मिक झगड़ों में फंसना, वहाँ पर राजा और प्रजा में विरोध होना, आंदोलनों का उठना, और राज्य क्रांति—सभी बातें शेक्सपियर इत्यादि नाट्यकार, मिल्टन इत्यादि धार्मिक कवि और हॉब्स, लॉक इत्यादि विचारक के ग्रंथों में चित्रित हैं। फ्रांस के राज्य विप्लव के कुछ पहले वहाँ की आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक दशा ने ऐसे ऐसे ग्रंथ उत्पन्न किए जिनका नाम अब तक चला आता है और जिन्होंने फ्रांसीसी तथा युरुपीय जीवन को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया है।

अब संक्षेप रूप से भारत वर्ष की इन दशाओं पर ध्यान दीजिए। यद्यपि पूर्ण ऐतिहासिक आलोचना प्रायः असंभव है तथापि एक आध मुख्य बातों पर ध्यान देकर कुछ प्रसिद्ध काल—विभागों की विख्यात धाराएं अध्ययन की जा सकती हैं। यों तो इन धाराओं को पृथक करना न केवल असंभव है बल्कि अनुचित भी है क्योंकि एक काल की धाराओं का पहले और पिछले काल की धाराओं से अटूट (inseparable) संबंध है तिस पर भी समझने के लिए उनको अलग अलग करना आवश्यक है। केवल हिन्दी ही की ओर ध्यान दीजिये।

हिन्दी

हिन्दी अथवा हिन्दुई वह भाषा है जो हिन्द अर्थात हिन्दुस्तान में बोली जाती है या जिसे हिन्दू लोग बोलते हैं। किंतु इस शाब्दिक अर्थ की पुष्टि शब्द प्रयोग से

नहीं होती। साधारण रूप से यह कह सकते हैं कि बंगाल को छोड़ कर सारे उत्तरी और मध्य भारत की भाषा हिन्दी कही जा सकती है। किंतु इसमें भी एक बड़ी कठिनाई यह उपस्थित हो जाती है कि उर्दू को क्या कहें। एक दृष्टि से यह भी हिन्दी ही की एक शाखा है और इसे "Persianised Hindi" अर्थात् फ़ारसी-मय हिन्दी कहते भी हैं। किंतु इन दोनों भाषाओं के साहित्य में एक बड़ा अंतर यह है कि दोनों के छंद शास्त्र (Prosody) बिलकुल भिन्न हैं। और इस अंतर को भूल नहीं सकते। अतः इस पुस्तक में उर्दू साहित्य का वर्णन प्रायः बिलकुल ही नहीं मिलेगा। हिन्दी की शाखाओं में पूर्वी, अवधी, खड़ी बोली, ब्रज-भाषा राजपूतानी और पंजाबी मुख्य हैं।

हिन्दी की उत्पत्ति प्राकृत भाषा से जान पड़ती है और आरम्भिक हिन्दी में प्राकृत मिश्रित भी है। किस समय में हिन्दी का जन्म हुआ निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता किंतु अनुमान से यही सिद्ध होता है कि ७ वीं शताब्दी से इसकी उत्पत्ति माननी चाहिए*। तब से और आज तक के हिन्दी साहित्य का इतिहास ५ भागों में विभाजित किया जा सकता है :—

(१) आरम्भ से लेकर सूरदास के पहले तक, अर्थात् ७ वीं शताब्दी से लेकर १५ वीं शताब्दी तक।

इस काल के फिर तीन विभाग हो सकते हैं :—

(क) आरम्भ से चन्दबरदाई और जल्हन तक, अर्थात् ७ वीं शताब्दी से १२ वीं शताब्दी के अंत तक।

---

* "मोटे प्रकार से इसकी उत्पत्ति प्रायः ७०० संवत् के लगभग समझनी चाहिए, क्योंकि भाषा के प्रथम ग्रंथ का समय संवत् ७०० है" (मिश्रबंधु विनोद)। यह संवत् विक्रमीय है। "हिन्दी का उत्पत्तिकाल विक्रम की आठवीं शताब्दी के लगभग माना जाता है।"—कविता-कौमुदी।

(ख) जल्हन के बाद से कबीरदास के पहले तक, अर्थात् १३वीं और १४ वीं शताब्दियाँ।

(ग) कबीरदास से लेकर सूरदास के पहले तक, अर्थात् १५ वीं शताब्दी।

(२) सूरदास से लेकर तुलसीदास और केशवदास तक, अर्थात् १६ वीं शताब्दी और १७ वीं शताब्दी का आदि (पहला चौथाई) भाग।

इस काल के दो विभाग हो सकते हैं :—

(क) सूरदास से लेकर तुलसीदास के पहले तक, अर्थात् १६वीं शताब्दी का अधिकांश भाग।

(ख) तुलसीदास का समय, अर्थात् १६ वीं शताब्दी का अंतिम भाग और १७ वीं का आदि भाग।

(३) तुलसीदास के बाद से लल्लू जी लाल के पहले तक, १७ वीं शताब्दी के आदि भाग के बाद से १८ वीं शताब्दी तक।

इस काल के दो विभाग हो सकते हैं :—

(क) तुलसीदास के बाद से देव तक, अर्थात् १७ वीं शताब्दी के आदि भाग के बाद से १८ वीं शताब्दी के मध्य तक।

(ख) देव के बाद से लल्लू जी के पहले तक, अर्थात् १८ वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध भाग।

(४) लल्लू जी लाल से लेकर हरिश्चंद्र के पहले तक, अर्थात् १९ वीं शताब्दी का लगभग दो तिहाई भाग।

(५) वर्तमान समय, हरिश्चंद्र से लेकर वर्तमान समय तक।

प्रथमकाल में पहले राजनैतिक दशा पर ध्यान देना चाहिए। महाराज हर्ष के बाद भारत में छोटे छोटे राज्य स्थापित हो गए और राजपूतों का समय आया। ये बहादुर योधा थे और छोटे छोटे राज्यों में राज्य करते थे। अतः उस समय का साहित्य अधिकतर

दरबार के भाटों का बनाया हुआ है और उसमें अधिकतर राज्य-वंश का प्रशंसात्मक वर्णन पाया जाता है, जैसे चंद बरदाई और शारंगधर इत्यादि की रचनाओं में। उसके बाद भारतवर्ष में एक प्रकार का धार्मिक और सामाजिक आंदोलन हुआ जिसमें एक ईश्वर की भक्ति, आडम्बरों के त्याग और समाज के सुधार की ओर विशेष ध्यान दिया गया। अतः उस समय का साहित्य इन बातों से भरा पड़ा है, जैसा कि कबीरदास, रैदास और नानक इत्यादि की रचनाओं से स्पष्ट है। ये लोग अपने मत का प्रचार करते थे, इसलिये इनको जनता की भाषा में रचना करनी पड़ी। इससे इनकी भाषा सरल और स्वाभाविक है और उसमें तत्कालीन समाज की तीव्र आलोचना है।

दूसरे काल में एक नये ढंग का धार्मिक आंदोलन हुआ अर्थात् वैष्णव मत का प्रचार। इस मत की कई शाखाएँ हैं। इसमें कृष्ण और राम की भक्ति की ओर अधिक ध्यान दिया जाता है। कृष्ण की भक्ति बहुधा शृंगार मय हो जाती है। अतः इस समय के साहित्य में यही बातें मिलती हैं। सूरदास और तुलसीदास आदि बड़े बड़े महात्माओं ने इस काल में कविता की और हिन्दी साहित्य को भक्ति-काव्य से गौरवान्वित किया। इस समय में एक ओर तो बड़े बड़े ऋषियों और भक्तों ने कविता की दूसरी ओर मुग़ल दरबार के कवियों ने। उस समय तक अकबर ने भारत में एक प्रकार की राजनैतिक शांति पैदा कर दी थी।

तीसरे काल में उच्च धार्मिक विचारों में शिथिलता आई। जहाँगीर और शाहजहाँ का ज़माना आया। चारों ओर कलाओं की वृद्धि हुई, लोगों का ध्यान सौन्दर्य और शृंगार की ओर अधिक रहा। अतः इस समय में काव्यकला की वृद्धि हुई। शृंगार रस का काव्य परमोत्कृष्टता को पहुँचा। भाषा भली भाँति श्रुतिमधुर और अलंकृत

हो गई। इस काल में बिहारीलाल, मतिराम और देव इत्यादि कवि हुए। इसी बीच में फिर राजनैतिक अशान्ति का समय आया। शुरू में महाराज शिवाजी और छत्रसाल ने हिन्दू पुनरुत्थान का झंडा ऊँचा किया और बड़ी वीरता दिखलाई। इसकी वजह से हिन्दी साहित्य में वीर रस की उत्कृष्ट कविता निकली और भूषण इत्यादि कवि हुए, किन्तु थोड़े दिनों में वीरता और जातीयता जाती रही, अब शृंगार रस को पूरी स्वतंत्रता मिल गई। न तो धार्मिक रोक ही रहा और न समाज की उच्च दशा का दबाव ही रहा। अतः कवियों ने साहित्य में ख़ूब मन माना शृंगार भरा और नायिका भेद, नखशिख इत्यादि के अगणय ग्रन्थ लिखे। इस समय के कवि भाषा तो ख़ूब सजा सके किन्तु वे भाव कहाँ से लाते। परिस्थिति उच्च भावों की न थी। इस समय के कवियों में दास, ठाकुर, बोधा इत्यादि हैं। तीसरे काल की एक विशेषता यह भी रही कि बहुत से राजा महाराजा स्वयं कविता करते थे और अन्य कवियों को आश्रय देते थे, इससे इस काल में बहुत से कवि हुए।

चौथे काल में पाश्चात्य सभ्यता ने अपना प्रभाव डाला। नए नए विचार आने लगे, जीवन के आदर्शों में परिवर्तन होने लगा। कुछ रहन सहन का ढंग बदला, शिक्षा की प्रथा बदलने लगी। इससे साहित्य में भी परिवर्तन हुआ और साहित्य की दो धाराएँ हो गईं। एक पुरानी और एक नई, किन्तु अभी पुरानी का अधिक बल रहा और पद्माकर इत्यादि कवि हुए। अर्थात् अलंकृत भाषा और शृंगार रस का प्राधान्य रहा। नई धारा ने गद्य का पक्ष लिया और खड़ी बोली को प्रधान रखा। इसका एक मुख्य कारण यह था कि शिक्षा-विभाग के लिये पाठ्य पुस्तकें तैयार करनी पड़ीं। नए ढंग के लेखकों में लल्लू जी लाल, सदल मिश्र और राजा शिवप्रसाद इत्यादि हुए। इसी काल में छापेखाने भी खुलने लगे।

पाँचवे काल में छापेखाने बहुत खुले और रेल तार इत्यादि ने भौगोलिक दूरियों को बहुत कम कर किया। इससे पुस्तकें बहुत प्रकाशित होने लगीं, गद्य का ज़ोर बढ़ा और समाचार-पत्रों और पत्रिकाओं का प्रचार हुआ। खड़ी बोली ने अपना सिक्का जमा लिया और हिन्दी की बड़ी उन्नति हुई, फिर नाटक-साहित्य भी बढ़ा। इस समय के लेखकों में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और बालकृष्ण भट्ट इत्यादि हैं। अंगरेज़ी और भारतीय सभ्यता के मेल ने एक ओर तो साहित्य को इस प्रकार से प्रभावित किया दूसरी ओर एक दूसरा प्रभाव डाला अर्थात् भारतीय सभ्यता के पुनरुत्थान की एक धारा बही; कुछ सामाजिक और कुछ धार्मिक आंदोलन होने लगा। इसने भी साहित्य को प्रभावित किया। इस काल के प्रसिद्ध धर्मप्रचारक स्वामी दयानन्द सरस्वती ने हिन्दी का बड़ा उपकार किया। इसके बाद कुछ राजनैतिक आंदोलन भी होने लगा। संसार भर के विचारों का ज्ञान सरलता पूर्वक होने लगा। राजनैतिक आदर्शों में परिवर्तन हुआ, राष्ट्रीयता और जातीयता का भाव बढ़ा, देशभक्ति की धारा बही, समाज सुधार की ओर ध्यान अधिक आकर्षित हुआ और भिन्न भिन्न विषयों का अध्ययन तथा उन पर विचार होने लगा। अतः वर्तमान समय का साहित्य इन सब बातों से पूर्ण है, इतिहास, राजनीति, धर्मसुधार इत्यादि विषयक ग्रंथ रोज़ निकलते हैं। समाचार पत्रों ने इस ओर पूरा ध्यान दिया है। उपन्यास और कथाएँ ख़ूब निकल रही हैं। कवियों ने भी अब अधिक ध्यान इसी ओर दिया है। तथापि धार्मिक और शृङ्गाररस का साहित्य जो हिन्दी में सदा उपस्थित रहा, अब भी निकल रहा है।

हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास

पहला प्रकरण

आरम्भ से लेकर सूरदास के पहले तक

(७ वीं शताब्दी से १५ वीं शताब्दी तक)

पहला काल-विभाग बहुत बड़ा है। इसका मुख्य कारण यह है कि यह हिन्दी की उत्पत्ति और उसके प्रथम विकाश का समय है। इसमें लेखक अधिक नहीं हुए और जो हुए भी उनके जीवन-चरित्र तथा उनकी रचनाओं के संबंध में हम लोग बहुत कम जानते हैं। साहित्य-विकाश की दृष्टि से इस बड़े काल को हम तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं।

प्रथम भाग

आरम्भ से लेकर चंद और जल्हन तक

(७ वीं शताब्दी से १२ वीं शताब्दी तक)

सातवीं शताब्दी से भारतवर्ष के इतिहास का एक नया युग ही आरम्भ होता है। बड़े बड़े साम्राज्यों का समय बीत चुका था। महाराज हर्ष का शासनकाल भी समाप्त होने लगा। अब स्थान स्थान पर छोटे छोटे राज्य स्थापित हुए जिनमें बहुधा आपस में लड़ाइयाँ हुआ करती थीं। राजा लोगों के यहाँ पंडित और कवि भी रहा करते थे। यह राजपूत लोगों का समय था। ये लोग बड़े

बीर और साहसी योधा थे और इनका व्यवहार उदार और निष्कपट होता था। भारत वर्ष के इतिहास में सातवीं शताब्दी के मध्य से बारहवीं शताब्दी के अंत तक राजपूत काल है। इसी काल में मुसलमान जातियों के आक्रमण होने लगे और हिन्दू मुसलमानों में परस्पर युद्ध का समय आया। पूर्वकाल की अपेक्षा इस समय भारतीय समाज और धर्म में एक प्रकार की शिथिलता आ गई थी। इन सब का पूरा प्रभाव साहित्य पर पड़ा है।

सातवीं और उसके पहले की दो तीन शताब्दियों में भारतीय साहित्य की बड़ी उन्नति हुई। संस्कृत में काव्य, महाकाव्य और नाटक लिखे गये और धर्म शास्त्रों की भी रचना हुई। साथ ही साथ इतिहास पुराण और कथाएँ भी रची गईं। इसी समय में हिन्दी भाषा की भी उत्पत्ति हुई।

चंदबरदाई

इस प्रथम भाग में सब से प्रसिद्ध कवि चंदबरदाई हुआ है जिसे हिन्दी भाषा का सब से पहला महाकवि कहना चाहिये। चंद वेण नामक ब्रह्मभट्ट का पुत्र था और उसका जन्म लाहौर में सं० ११८३ वि० के लगभग हुआ था। वह दिल्ली के महाराज पृथ्वीराज का मित्र और राजकवि था और उन्हीं के दरबार में रहता था। अंत में वह महाराज के हित के लिये ग़ोर देश को गया और वहीं सं० १२४६ वि० के लगभग मर गया। चंदबरदाई हिन्दी का प्रथम महाकवि है। इसका बनाया हुआ केवल एक ही ग्रंथ है जिसका नाम पृथ्वीराज रासो* है। इसकी भाषा डिंगल है जिसमें फ़ारसी के भी शब्द आये हैं और संस्कृत के तो बहुत से शब्द हैं। डिंगल राजस्थानी या राजपूतानी की अंतर्गत भाषाओं में है जिसे मारवाड़ी भी कहते हैं। पृथ्वीराज

* कुछ विद्वानों का मत है कि यह ग्रंथ किसी एक व्यक्ति का या किसी एक समय में लिखा हुआ नहीं है।

रासो एक बड़ा ग्रंथ है जिसमें ६९ अध्याय हैं और जो कई छंदों में लिखा है। इसका मुख्य विषय पृथ्वीराज का चरित्र है। इसमें महाराज के युद्धों का बड़ा उत्कृष्ट वर्णन है। और बहुत सी अन्य बातों का वर्णन भी बड़ी उत्कृष्टता के साथ किया गया है। चंद ने स्त्रियों का बड़ा ही सुंदर वर्णन किया है। और विवाह का भी अच्छा वर्णन किया है। क्यों न हो? एक तो स्वयं चंद के दो स्त्रियाँ थी। दूसरे उसके महाराज का जैचंद को पुत्री संयुक्ता के साथ प्रसिद्ध विवाह उसके मस्तिष्क में गूँज रहा होगा। पृथ्वीराज रासो में खड्ग और युद्ध का वर्णन होते हुए भी "विशेषतया यह श्रृंगार प्रधान ग्रंथ है" (मिश्र बंधु)। इसमें वीर रस और श्रृंगार रस दोनों की उत्कृष्ट कविता है और अलंकारों का भी अच्छा प्रयोग हुआ है।

चंद की कविता और भाषा देखिए :—

"तिन ऋषि पुच्छिय ताहि कवन कारन इत अंगम।
कवन थान तुम नाम कवन दिसि करिय सुजंगम॥"

"सेत वस्त्र सोहै सरीर नख स्वाति बुंद रस।
भमर भँवहिं भुल्लहि सुभाव मकरंद वास रस॥"

"कम्मान वान छूटहिं अपार।
लागंत लोह इम सारि धार॥"

"उमा अंग बामं सुकामं पुरष्षं, सिरं गंग नैत्रं त्रयं पंचमुष्षं।

"सुनत बाल छंडयौ सु हठ बर त्र्ढ़ी द्रिगबंक।
किधों बाल मन मोहिनी, कै बिय उदित मयंक।"

चंद के समकालीन कवि

चंद बरदाई के समकालीन बहुत से कवि थे। ये अधिकतर राजाओं और महाराजाओं के यहाँ रहते थे। उस समय के प्रायः सभी राजा लोग कवियों का आदर करते थे और उनको आश्रय देते थे। एक ऐसे ही कवि का नाम जगनिक बंदीजन था जो जगनायक के नाम से

भी प्रसिद्ध है। इसने आल्हा बनाया था। जगनिक महोबा के राजा के यहाँ रहता था।

चंद के पूर्व-कालीन कवि

यद्यपि चंद हिन्दी का सब से पहला बड़ा कवि था तथापि उसके पहले भी बहुत से कवि हो गए थे, जिनके नाम प्रसिद्ध नहीं हैं। यों तो सब से प्रथम कवि का नाम पुंड या पुष्य था किंतु आज कल उसका लिखा हुआ कुछ नहीं मिलता। सब से पहला ग्रंथ जो मिला है वह भुवाल नामक कवि का है। उसने सं० १००० वि० में भगवद्गीता नामक ग्रंथ हिन्दी पद्य में रचा। उसकी भाषा देखिए:—
"सुमिरौं गुरु गोबिंद के पाऊँ, अगम अपार है जाकर नाऊँ।"
एक और कवि ब्रह्म भट्ट नामक था जिसने चितौड़ के राजा खुमान की प्रशंसा में एक ग्रंथ खुमान रासो नामक रचा था जिसमें बहुत से युद्धों का वर्णन था। परंतु यह ग्रंथ अप्राप्य है।

अन्यकवि

इस समय के कवियों में कुछ राजाओं की भी गणना हैं इनमें एक राजा महाराष्ट्र का था। और कवियों में एक जैन कवि का भी नाम प्रसिद्ध है अर्थात् जिन वल्लभ सूरि का। ये बड़े भारी पंडित और संस्कृत के भी कवि थे। आगे चल कर हम देखेंगे कि जैन मत के अन्य अनुयायियों ने हिन्दी में बहुत कविता की है।

मुसलमान कवि

एक बात विशेष ध्यान देने योग्य यह है कि उसी आदि काल से मुसलमान लोग भी हिन्दी में कविता करने लगे। बारहवीं शताब्दी के आरम्भ के दो मुसलमान कवि मसऊद और कुतुबअली के नाम स्मरणीय हैं।

जल्हन

चंद बरदाई की मृत्यु सं० १२४९ वि० के लगभग हुई। उसके बाद उसका एक पुत्र प्रसिद्ध कवि हुआ जिसका नाम जल्हन था। इसने पृथ्वीराज रासो के अंतिम

भाग की रचना की। इस जल्हन को पृथ्वीराज ने अपनी बहन की शादी में दायज में दे दिया था।

दूसरा भाग

चंद और जल्हन के बाद से कबीरदास के पहले तक

(१३ वीं और १४ वीं शताब्दियाँ)

महाराज पृथ्वीराज की पराजय और मृत्यु के पश्चात् भारतवर्ष की स्वतंत्रता जाती रही और साथ ही साथ उच्च कोटि का साहित्य भी इसका साथ छोड़ने लगा। लेकिन अब देश की स्थिति भिन्न हो गई और इसमें कई प्रकार की धाराएं प्रवाहित होने लगीं। एक ओर तो राजनैतिक अशांति के कारण साहित्य कुछ शिथिल हुआ। दूसरी ओर कहीं कहीं वीर राजाओं ने कुछ पराक्रम दिखलाया और उनके या अन्य महापुरुषों के चरित्र संबंधी ग्रंथ बने। कुछ समय बाद हिन्दू मुसलमानों की सभ्यताएं मिलने लगीं और अमीर ख़ुसरू की रचनाएं निकलीं। इसी समय में साहित्य की एक धारा विहार में श्रृंगार की ओर बही। फिर सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक उथल पुथल ने साहित्य को कई मार्ग पर चला दिया और आगे चल कर तो साहित्य का रूप ही बदल दिया। आरम्भ ही में एक महात्मा गोरखनाथ ने अपना पंथ चलाया। इन्होंने साहित्य को एक नया रूप दिया और गद्य लिखना आरम्भ किया। इनके बाद स्वामी रामानंद और उनके अनेक शिष्यों ने रचनाएं कीं। अंत में उन्हीं के एक शिष्य कबीरदास हुए जिनका रचा हुआ साहित्य अपने निरालेपन के लिए प्रसिद्ध है।

इस समय के साहित्य के संबंध में यह स्मरण रखना चाहिए कि हिन्दी ने अपना विस्तार बहुत फैला दिया। भिन्न भिन्न प्रांतों के कवियों ने हिन्दी या हिन्दीमिश्रित भाषा में कविता की ओर

भिन्न भिन्न विषयों पर कविताएं की गईं। राजाओं की प्रशंसा और कथा के अतिरिक्त धार्मिक ग्रंथ, नाटक और कहानियाँ इत्यादि भी लिखी गईं। हिन्दी के मुसलमान कवियों में अमीर ख़ुसरू ने बड़ा नाम पैदा किया। इस समय में जैन मत के अनुयायिओं में बहुत से कवि निकले। हिन्दी में प्रथम स्त्री कवि का नाम भी इसी समय में मिलता है। वह स्त्री मुक्ताबाई थी जिसने १३ वीं शताब्दी के अंतिम भाग में कविता की। यह दक्षिण भारत की रहने वाली थी। हिन्दी साहित्य में गद्य, नाटक और खड़ी बोली का जन्म इसी समय से हुआ।

जल्हन के बाद

जल्हन के बाद कुछ समय तक की कविताओं में एक विशेषता यह पाई जाती है कि रास, रासा अथवा रासो नाम के बहुत से ग्रंथ निकले [रासो शब्द का अर्थ शब्द सागर में दिया है सो "किसीराजा का पद्यमय जीवन चरित्र, विशेषतः वह जीवन चरित्र जिसमें उसके युद्धों और वीरता का वर्णन हो।" रासो में किसी का एकप्रकार का प्रशंसात्मक चरित्र दिया रहता है।] दूसरी विशेषता यह है कि जैन कवियों ने बहुत कविता की। धर्म सूरि जैन ने जंबू स्वामी रासा बनाया। वह कहते हैं:—

"करि सानिध सरसत्ति देवि जीयरय कहाणउ,
जंबू स्वामिहिं गुण गहण संखेवि बखाणउ।"

फिर विजयसेन सूरि ने रेवंतगिरि रासा बनाया और किसी ने सप्तक्षेत्रिरास बनाया। उसके बाद नरपति नाल्ह नामक कवि ने बीसलदेव रासो और नल्हसिंह ने विजयपाल रासा का निर्माण किया। बीसलदेव अजमेर के राजा थे। यह उस समय राज करते थे जब महमूद ग़ज़नवी भारत में आया था। इसके बाद शारंगधर प्रसिद्ध कवि हुए और इन्होंने भी एक रासो लिखा, जिसका नाम हम्मीर रासो था। हम्मीर या हम्मीरदेव रणथम्भोर के राजा थे।

उस समय अल्लाउद्दीन दिल्ली का बादशाह था। हम्मीर ने बड़ी वीरता के साथ उससे युद्ध किया। हम्मीर के नाम पर शारंगधर ने हम्मीरकाव्य नामक एक और ग्रंथ लिखा। इन दोनों ग्रंथों में राजवंश की चर्चा है। शारंगधर पद्धति नामक एक ग्रंथ भी इस कवि ने बनाया है। इसमें संस्कृत श्लोकों का संग्रह है।

नरपति, नाल्ह और नल्हसिंह की भाषा चंद बरदाई की भाषा से मिलती जुलती है, किंतु शारंगधर की भाषा कुछ अवधी और ब्रज भाषा के ढंग पर है। देखिये :—

"तिरिया तेल हमीर हठ चढ़ै न दूजी बार"

१३ वीं शताब्दी के अंत और १४वीं के आरम्भ में प्रसिद्ध कवि

अमीर ख़ुसरू

अमीर ख़ुशरू हुआ, जिसकी मृत्यु सन् १३२५ ई० अर्थात् १३८२ वि० में हुई। ख़ुसरू फ़ारसी का एक उत्कृष्ट कवि तो था ही, उसने हिन्दी में भी बड़ी मधुर कविता की है। वह कई ढंग की कविता करता था। कभी कभी ऐसा पद बनाता था जिसका एक अंश फारसी और दूसरा हिन्दी होता था जैसे :—

"ज़हाले मिस्कीं मकुन तग़ाफ़ुल दुराय नैना बनाय बतियाँ।"
"शबाने हिजराँ दराज़ चुँ ज़ुल्फ़ ओ रोज़े वस्लत चुँ उम्र कोता
सखी पिया को जो मैं न देखूँ तो कैसे काटूँ अँधेरी रतियाँ।"

वह पहेलियाँ बहुत अच्छी अच्छी बनाता था जैसे :—

"बीसों का सर काट लिया, ना मारा नाख़ून किया।"
(नाख़ून)।

उसने स्त्रियों के गाने भी बहुत से बनाए हैं। उसकी भाषा विशेष ध्यान देने योग्य है क्योंकि उसमें खड़ी बोली है और उर्दू की जड़ है। ख़ुसरू ने एक विचित्र कोष-ग्रंथ बनाया जिसका नाम ख़ालिक़बारी है। इसमें एक ही अर्थ के अरबी, फ़ारसी और हिन्दी

तीनों भाषाओं के शब्द एक साथ दिए हैं, जैसे "ख़ालिक़बारी सिरजन हार"। इसमें तीन शब्द हैं—ख़ालिक़, बारी और सिरजन-हार। एक अरबी का है एक फ़ारसी का और एक हिन्दी का। इन तीनों का अर्थ है सृष्टिकर्ता अर्थात् पैदा करने वाला। इसी पद से यह ग्रंथ आरम्भ होता है। इसीलिए ग्रंथ का नाम ख़ालिक़-बारी रखा गया है।

गोरखनाथ

१४ वीं शताब्दी के मध्य में बाबा गोरखनाथ हुए जिनका मन्दिर गोरखपूर में बना है और जो अब तक पूजे जाते हैं। यह एक सिद्ध योगी थे जिन्होंने संस्कृत में योगमहिमा और योगचिंतामणि आदि अनेक ग्रंथों की रचना की है। हिन्दी में इनके लिखे बहुत से ग्रंथ हैं जैसे ज्ञान-सिद्धांतयोग, गोरखसार गोरखबोध इत्यादि। साहित्यिक दृष्टि से इनकी रचनाएं उच्च श्रेणी में नहीं रखी जा सकतीं किंतु इनमें ध्यान देने योग्य कई विशेषताएं हैं। एक तो इन्होंने धर्म और योग की शिक्षा दी है। इनका चलाया गोरखपंथ है। इनकी रचनाओं से हिन्दी का आदर बढ़ा और वह फैलने लगी। दूसरे यह पूर्वी खंड के रहने वाले थे। अब कविता मानो पूरब चली और विहार में विद्यापति ने जन्म लिया। तीसरे इन्होंने गद्य भी लिखा। यह हिन्दी गद्य के प्रथम लेखक हैं। इन्होंने ब्रज भाषा गद्य में एक ग्रंथ लिखा। इनके गद्य का उदाहरण :—

"पराधीन उपरांति बंधन नांही सुआधीन उपरांति मुकति नाहीं"

"मैं जु हौं गोरिष सो मछंदर नाथ को दंडवत करत हौं"। मछंदर नाथ इनके गुरु थे।

गोरखनाथ के बाद

गोरखनाथ और विद्यापति के बीच में भी कई कवि हुए, किन्तु वे प्रसिद्ध नहीं हैं। अधिकतर उन्होंने रासो या रासा लिखा जैसे गौतम रासा,

५६८

कलिकाल रासा इत्यादि किन्तु इन रासों का विषय पहले के रासों से भिन्न है। क्योंकि पहले के रासा मुख्यतः राजाओं के यशगान में लिखे गये थे। विद्यापति के बाद कुछ रासा फिर लिखे गए जिनका विषय और भी भिन्न था जैसे आराधनारासा और शांतरस-रासा। इन सब के लेखक जैन थे। एक जैन कवि ने जिसका नाम विद्धणु जैन था ज्ञानपंचमी चउपइ नामक ग्रंथ लिखा है। इसकी चौपाइयाँ पढ़ने योग्य हैं। देखिये :—

"संजम मन धरि जो नर करई, सो नरु निश्चइ दुत्तरु तरई"

विद्यापति

विद्यापति ठाकुर का जन्म संभवतः सन् १४२० वि० में मिथिला के दरभंगा ज़िले में हुआ था और ये ब्राह्मण थे। इन्होंने संस्कृत हिन्दी और मैथिल भाषा में रचनाएँ कीं। ये भारी विद्वान थे। इनकी भाषा विहारी है जो बड़ी मधुर और भावपूर्ण है। इनकी कविता प्रधानतः शृंगार रस की है जिसमें राधा और कृष्ण के प्रेम इत्यादि का वर्णन है। इस रस के प्रसिद्ध कवियों में इनकी गणना होनी चाहिये। यद्यपि इनके भाव, शब्दप्रयोग तथा अलंकारप्रयोग विहारी और देव के से नहीं हैं तथापि इनके पद कवित्वपूर्ण हैं और ये उच्च कोटिके कवि कहे जा सकते हैं। इनकी रचना देखिये :—

"जनम अवधि हम रूप निहारल नयन न तिरपित भेल"
"मरम क बेदन मरमहि जान, आन क दुःख आन नहीं जान"
"जइति देखिल पथ नागरि सजनी आगरि सुबुधि सयानि"
कनक लता सम सुन्दरि सजनी विह्न निरमावल आनि।

"नखर खोआयलुँ दिवस लिखि लिखि।
नयन अन्धायलुँ पियापथ पेखि"॥

"मन करि तहँ उड़ि जाइय जहाँ हरि पाइअ रे।
प्रेम परसमनि जानि आनि उर लाइय रे"॥

देखिए कितनी सरल स्वाभाविक और भावपूर्ण रचना है।

इनकी कविता का अनुकरण बहुत से मैथिल कवियों ने किया है। विद्यापति ने नाटक भी लिखे हैं। ये हिन्दी भाषा के प्रथम नाट्यकार हैं। इनके लिखे दो नाटक हैं—रुक्मणीपरिणय और पारिजातहरण।

अन्यकवि

विद्यापति के समकालीन एक जयदेव नामक मैथिल कवि थे जिनका नाम प्रसिद्ध है। और एक उमापति थे जिनकी कविता विद्यापति से बहुत मिलती जुलती है। इस समय सोमसुन्दर सूरि ने आराधना रास और मुनिसुन्दर जैन ने शांतरस रास लिखा।

रामानंद

इनके बाद स्वामी रामानंद हुए जिनका जन्म प्रयाग में सन् १३५६ ई० में हुआ था। १२ ही वर्ष की अवस्था में यह सब शास्त्रों के पूरे पण्डित हो गए थे। यह एक प्रसिद्ध योगी और वैष्णव संप्रदाय के संस्थापक थे। इनके शिष्य रामानंदी कहलाते हैं। उन्होंने और इनके बहुत से शिष्यों ने हिन्दी में कविता की। इन शिष्यों में एक राजा थे जिनका नाम पीपा था और जिन्होंने अपना राजपाट छोड़ के इनकी शिष्यता स्वीकार की। यह भी सिद्ध योगी हो गए और प्रसिद्ध कवि भी। इन महात्माओं की रचनाएँ धार्मिक और शिक्षाप्रद हैं। महात्मा अंगद के पद सिक्ख लोगों के ग्रंथ साहब में मिलते हैं। स्वामी भवानंद ने वेदांत पर एक बड़ा ग्रंथ लिखा जिसका नाम अमृतधार है। रामानंद जी के शिष्यों में एक चमार था जिसका नाम रैदास था। रैदास का नाम अब तक प्रसिद्ध है और इनके बनाए हुए तीन ग्रंथ भी मिले हैं। एक का नाम रैदास की साखी है। आगे चल कर हम देखेंगे कि रामानंद ही जी के एक शिष्य कबीर ने बड़ी प्रसिद्ध साखी लिखी है।

तीसरा भाग

कबीरदास से लेकर सूरदास के पहले तक

(१५ वीं शताब्दी)

यह काल योगियों महात्माओं और धर्म-प्रवर्तकों का है। कबीरदास और उनके पुत्र कमाल और अनेक शिष्य, चरणदास, गुरु नानक और स्वामी वल्लभाचार्य इसी समय में हुए। अतः इस समय का हिन्दी साहित्य धार्मिक और सामाजिक शिक्षाओं से भरा है। इस साहित्य की एक बड़ी विशेषता यह है कि इसमें तत्कालीन समाज और धर्मसंबंधी बड़ी तीव्र आलोचना मिलती है। वास्तव में वह समय ही विचित्र था। भारतवर्ष परतंत्र हो गया था। न तो यहाँ पर राजनैतिक साहित्य का स्थान था और न उस उन्नतिशील जातीयता के अभिमान से विकसित प्रफुल्ल हृदय के साहित्यिक प्रवाह का जो किसी भी समृद्धशाली स्वतंत्र देश के व्यक्तियों में स्वभावतः हुआ करता है। इस समय तो हिन्दू मुसलमानों का एक विकट संयोग हो रहा था। वे न तो एक दूसरे को भली भाँति समझ सकते थे और न एक दूसरों के गुणों को ग्रहण कर सकते थे । प्रबल विचारकों को दोनों जातियों के दोष दिखलाई देते थे। उनका हृदय इस दशा का स्थायी होना स्वीकार नहीं कर सकता था। परस्पर का विरोध उन लोगों से देखा नहीं जाता था। इस लिए उन्होंने इन दोनों को मिलाना चाहा। कुछ लोगों ने इन झंझटों को तुच्छ समझ कर अपना ध्यान ईश्वर की ओर फेरा और योग और भक्ति के सन्मार्ग का उपदेश किया। बस अधिकांश साहित्य इस समय का इन्हीं बातों से संबंध रखता है। केवल इने गिने लोगों ने दूसरे विषय की कविता की, जैसे

द्मो । इन्होंने लक्ष्मणसेन-पद्मावती नामक एक ग्रंथ लिखा जिसमें एक प्रेम कहानी कही गई है ।

कबीरदास महात्मा रामानंद जी के शिष्य थे । इनका जन्म कब हुआ और यह किस जाति के थे अथवा इनके माता पिता कौन थे निश्चित रूप से कहा नहीं जा सकता ।

कबीरदास

डॉक्टर ईश्वरी प्रसाद ने अपने भारतवर्ष के इतिहास में लिखा है कि इनका जन्म लगभग १३९८ ई० में हुआ था । कबीरपंथ के विद्वान भी इसी से सहमत हैं, अर्थात् सं०१४५५ वि० में उनका जन्म मानते हैं । मिश्रबंधु की राय में "संवत् १४७५ के लगभग महात्मा कबीरदास जी का समय है"। समय से इनका तात्पर्य जन्म-काल नहीं वरन् कविता का आरम्भ काल है । इनके माता पिता के संबंध में भी कुछ ठीक नहीं मालूम है । जान पड़ता है कि वे ब्राह्मण थे परन्तु उन्होंने इनको जन्म ही से त्याग दिया । तब से इनका पालन पोषण एक जुलाहे के घर हुआ था । इन्होंने कहा है :—

"कासी का मैं बासी बाँभन नाम मेरा परबीना ।
एक बेर हरिनाम बिसारा पकरि जोलाहा कीना" ॥

कबीरदास जुलाहे का ही काम करके अपना पेट पालते थे । इन्होंने कहा भी है :—

"हम घर सूत तनहिं नित ताना" ।

ये पढ़े लिखे न थे किन्तु बड़े ही अनुभवी थे । इसीसे इनकी भाषा ठेठ बोल चाल की है । इसमें कहीं कहीं बोलचाल के फ़ारसी आदि के भी शब्द मिले हैं ।

"पीर पैगम्बर औलिया, मतवअह सब कोय ।"

कबीरदास रामानंद के चेला थे और राम को मानते थे । इनकी रचनाओं में राम शब्द का प्रयोग ईश्वर के अर्थ में हुआ है,

किन्तु स्पष्ट नहीं कि इस शब्द से इनका क्या आशय है। एक स्थान पर इन्होंने कहा है कि :—

"राम नाम को सुमिरतां, अधम तरे संसार।
अजामोल गणिका सुपच, सदना सिवरी नार॥"

तथापि वे तुलसीदास जी की भाँति राम अथवा रामचन्द्र को ईश्वर का अवतार और अयोध्या का राजा नहीं मानते थे।

कबीरदास हिन्दू और मुसलमान दोनों के दोष दिखला कर और उनकी आलोचना करके दोनों को एक करना चाहते थे। देखिए :—

"पाहन पूजे हरि मिलै तो मैं पूजूँ पहार।
ताते यह चाकी भली पीसि खाय संसार॥"
"कांकर पाथर जोरि कै मसजिद लई चुनाय।
ता चढ़ि मुल्ला बांग दे क्या बहिरा हुआ खुदाय॥"
"कबीर हिन्दू तुरुक पर खेलै एकै भूत।
काजी पंडित हारिया झारिन्हि करि करि कूत॥"
"राम रहीमा एक है, नाम धराया दोय।"

तथा "कृष्ण करीमा एक है।" इत्यादि

कबीरदास साधारणतः ज्ञान की शिक्षा देते थे, किन्तु इनकी रचनाओं में कहीं कहीं भक्ति भी झलकती है।

"हम ग्रहि आए रजा राम भरतार।"
"बीत गए दिन भजन बिना रे॥" इत्यादि
"राम भगति पर जाको हितचित ताको अचरज काहा।"

साधारण व्यवहार और आचरण संबंधी भी इनकी शिक्षाएँ बहुत प्रसिद्ध हैं जो प्रभावशाली भाषा में कही गई हैं :—

"तिनका कबहूँ न निन्दिये जो पाँव तले है सोय।
कबहूँ उड़ि आँखों परै तो पीर घनेरी होय॥"

"बुरा जो देखन मैं चला तो बुरा न देखा कोय।
जो दिल खोजा आपना मुझ सा बुरा न कोय॥"

स्मरण रहे कि कबीरदास स्वयं बड़े सदाचारी और उदार मनुष्य थे।

कबीरदास जी की रचना में एक बड़ी विशेषता यह है कि उसमें जीवन के अति साधारण बातों और वस्तुओं पर तीव्र दृष्टि डाली गई है और उन्हीं के सहारे रूपकों इत्यादि की सहायता लेकर सरल भाषा में उच्च विचारों और सिद्धांतों तथा वास्तविक ज्ञान का वर्णन है। इनकी साखी, बानी, बीजक, शब्द और दोहे आदि बड़े प्रसिद्ध हैं। इन्होंने ताना बाना और कपड़ा बीनना आदि से भी अपनी रचनाओं में सहायता ली है और उन्हीं के सहारे योग इत्यादि की बातें बतलाई हैं:—

"माई मेरे कौन बिनैगो ताना।"

"झीनी झीनी बीनी चदरिया।
काहे कै ताना काहे कै भरनी, कौन तार से बीनी चदरिया॥
इंगला पिंगला ताना भरनी सुखमन तार से बीनी चदरिया।"

इत्यादि

इनकी रचना में एक और विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि इनकी बहुत सी बातें साधारण दृष्टि से देखने पर उलटी या अप्राकृतिक मालूम होती हैं किन्तु योग या अध्यात्म की दृष्टि से देखने पर उनका अर्थ निकलता है, तिस पर भी कहीं कहीं निश्चित रूप से अर्थ नहीं बतलाया जा सकता।

"कबीर केशरी सिंह को कीन्हों कैद सियार।
पदशिर नावै मूस को करत जुहार बिलार॥"
"जो काटे तो डहडही सींचे तो कुम्हिलाय।
इस गुणवंती बेलि का कछु गुन कहा न जाय॥"

"समुन्दर लागी आगि नदिया जरि कोयला भई।
उठा कबीरा जागि मच्छी विरछै चढ़ि गई॥"
"घर जारै घर ऊबरै, घर राखै घर जाय।"
"एक अचम्भा देखिया सरपै खायो मोर॥"
तथा "समुद्र समाना बुंद में सो कित हेरा जाय।"

कबीरदास बड़े स्वतंत्र विचार के आदमी थे। एक बार उन्होंने कहा था :—

"जो कबिरा कासी मरा तो रामै कौन निहोर"

इसलिए वे मगध में जा कर मरे। उनके समय के पण्डित और विद्वान लोग भाषा अर्थात् हिन्दी भाषा को तुच्छ समझते थे। उस पर कबीरदास अड़कर भाषा ही में कविता करते थे। भाषा में इनके नाम के करीब ५० ग्रंथ हैं। यह महात्मा भाषा के बड़े उत्कृष्ट कवि थे। इनकी भाषा डिंगल या मैथिली इत्यादि न हो कर वर्तमान भाषा से कुछ मिलती जुलती है। मिश्रबंधु लिखते हैं "हम कबीरदास जी को वर्तमान भाषा का वस्तुतः प्रथम कवि मानते हैं।"

अन्य कवि

कबीर के समकालीन रैदास थे। ये जाति के चमार थे और चमार ही का काम करके अपना पेट पालते थे, किंतु ये बड़े भारी भक्त थे।

"जाति भी ओछी करम भी ओछा करम हमारा।
नीचे से प्रभु ऊँच कियो है कह रैदास चमारा॥"
"रैदास रात न सोइये दिवस न करिये स्वाद।
अहनिसि हरिजी सुमिरिये छाड़ि सकल प्रतिबाद॥"

कबीरदास के पुत्र कमाल ने भी कविता की है। इनका मत कबीरदास के मत से भिन्न है। यह भक्ति की ओर अधिक झुके थे।
"आइ जग बीच भगवंत की भक्ति की ओर सब छाड़ि जंजाल छायो"

कबीरदास के अनेक शिष्यों ने भी कविता की जैसे भगोदास, श्रुतिगोपाल और धरमदास। धरमदास जी लिखते हैं :—

"गहरी नदिया अगम बहै धरवा, खेय के पार लगा दीजो रे।
धरमदास की अरज गुसाईं, अब के खेप निभा दीजो रे।"

उस समय के भक्त कवियों में नाम देव का नाम स्मरणीय है। ये महाराष्ट्र देश के रहने वाले जाति के दर्ज़ी थे। इन्होंने व्रजभाषा में कविता की है :—

"अभि अंतर काला रहै बाहर करै उजास।"
"नाम कहै हरि भगति बिनु निहचै नरक निवास।"

जैन कवियों में जयसागर और ज्ञानसागर के नाम प्रसिद्ध हैं। कुछ समय बाद कुतुबन शेख नामी एक मुसलमान कवि ने मृगावती नामक ग्रंथ लिखा जिसमें दोहे और चौपाई छंदों में एक प्रेम कहानी कही गई है। यह शेरशाह के पिता हुसैन के यहाँ रहता था और इसने उसकी प्रशंसा में कविता भी की है। एक और प्रेम कहानी जिसका नाम लक्ष्मणसेन-पद्मावती है दामो कवि ने लिखा था। इस समय के कवियों में सेन की भी गणना है। सेन ने कृष्ण संबंधी अच्छी कविता लिखी है और इसकी भाषा भी अच्छी है।

नानक

उसी समय में एक महात्मा चरणदास जी हो गए हैं जिन्होंने ज्ञानस्वरोदय नामक ग्रंथ लिखा है। यह एक प्रसिद्ध योगी थे। उनके बाद गुरु नानक पंजाब में हुए जिन्होंने सिक्ख मत चलाया। यह सं० १५२६ से १५९६ वि० तक जीवित रहे। यह जाति के खत्री थे किंतु जाति भेद को व्यर्थ समझते थे और हिन्दू मुसलमानों में कोई अंतर न रखते थे। नानक जी ने देश विदेश में बहुत यात्रा की थी। ये बड़े बुद्धिमान और अनुभवी व्यक्ति थे। इनकी रचनाएं

अच्छी हैं और पंजाबी और हिन्दी मिली भाषा में लिखी गई हैं। इनकी कविताएं सिक्खों के ग्रंथसाहेब, नानक जी की साखी और अष्टांगयोग इत्यादि ग्रंथों में मिलती हैं।

"पुष्प मध्य ज्यों बास बसत है मुकट माँहि जस छाई।
तैसे ही हरि बसै निरंतर घर ही खोजो भाई।"
"मित्रौं दोस्त माल धन, छोड़ि चले अति भाई।
संगि न कोई नानका, उह हंस अकेला जाई॥"
"कहु नानक भज राम नाम नित जातें हो उद्धार"

वल्लभाचार्य

गुरु नानक जी के जन्म के थोड़े ही दिन बाद स्वामी वल्लभाचार्य का जन्म हुआ। यह तैलंग ब्राह्मण थे जिनका जन्म १४७९ ई० में हुआ था। अंत में यह काशी में रहने लगे। कदाचित इनका जन्म भी काशी में हुआ था। इनकी अब तक पूजा होती है। ज्ञात होता है कि संस्कृत के अतिरिक्त ब्रजभाषा में भी इन्होंने कुछ पद लिखे। पद इन्होंने लिखे हों अथवा न लिखे हों किंतु हिन्दी विशेषतः ब्रजभाषा सदा इनकी कृतज्ञ रहेगी, क्योंकि इन्होंने उसे प्रोत्साहित किया और इनके शिष्यों ने उसे गौरव के शिखर पर पहुँचा दिया।

दूसरा प्रकरण

सूरदास से लेकर तुलसीदास तक (१६ वीं शताब्दी और १७ वीं शताब्दी का आदि भाग)

द्वितीय काल-विभाग प्रथम काल विभाग से तो बहुत छोटा है किंतु इसमें हिन्दी साहित्य का सर्वश्रेष्ठ अंश भरा हुआ है। इसमें एक से बढ़ कर महाकवि हुए जिन्होंने हिन्दी भाषा और हिन्दी साहित्य को अनुपम उन्नति प्रदान करके उसको सर्वोच्च शिखर पर पहुँचा दिया। इसमें सूरदास, तुलसीदास, केशवदास इत्यादि बड़े बड़े कवि हुए। यद्यपि यह काल केवल सवा सौ वर्ष का है तथापि इसमें बहुत से कवि हुए और इस काल को फिर उपविभागों में विभाजित करना सरलता की दृष्टि से आवश्यक है। यह आवश्यकता और भी बढ़ जाती है जब हम यह विचार करते हैं कि इस काल की प्रथम साहित्यिक धारा साठ सत्तर वर्ष के पश्चात् बदल गई। इसके अतिरिक्त राजनैतिक दशाओं में बड़ा परिवर्तन हो गया और जनता का जीवन एक नई धारा में प्रवाहित होने लगा। इसका साहित्य पर भी बड़ा प्रभाव पड़ा। इसलिए इस काल को दो छोटे छोटे भागों में विभाजित करते हैं—एक सूरदास से लेकर तुलसीदास के पहले तक और दूसरा तुलसीदास का समय।

पहला भाग

सूरदास से लेकर तुलसीदास के पहले तक (१६ वीं शताब्दी का अधिकांश)

यह काल भारत वर्ष के इतिहास में बड़ा ही प्रसिद्ध काल है और राजनैतिक, धार्मिक, साहित्यिक तथा सामाजिक सभी दृष्टि से

विशेष ध्यान देने योग्य है। १६ वीं शताब्दी के आरम्भ में तत्कालीन भारतीय शासन की नींव ऐसी हिली कि सन् १५२६ ई० में एक परदेशी बाबर नामी मुग़ल ने यहाँ आकर अपना राज्य स्थापित कर लिया। तब से लेकर ५० वर्ष तक भारत में चारों ओर लड़ाई दंगा होता रहा और अशांति फैली थी। जब अकबर का शासन दृढ़ हो गया और उसने पूरे उत्तरी भारत को अपने वश में कर लिया तब से भारतीय इतिहास का एक नया युग आरम्भ हुआ।

इस अशांतिमय वायु मंडल ने भारत के शांतिप्रिय कवियों को राष्ट्रीय जीवन से पृथक करके धर्म की ओर डाल दिया। उधर यह दशा थी कि विचारवान पुरुषों ने जीवन के साधारण धंधों को असार बतला कर लोगों को ईश्वर की ओर फेरा। कबीर और नानक के समय का उथल पुथल के बाद तत्कालीन राष्ट्रीय जीवन की असारता तथा घोर अशांति बिलकुल स्पष्ट हो गई और अब ऐसे महात्माओं की बारी आई जिन्होंने जीवन का सार तथा पूर्ण शांति और आनंद का भंडार केवल ईश्वर की भक्ति में ढूँढ़ा। बंगाल में चैतन्य महाप्रभु और संयुक्त प्रांत में स्वामी वल्लभाचार्य और हितहरिवंश जी ने जनता को आनंद और शांतिप्रद भक्तिमार्ग दिखलाया। इन महात्माओं के शिष्य भी बड़े प्रसिद्ध हुए और इन गुरुओं और शिष्यों के कारण हिन्दी साहित्य ने एक नया और बड़ा ही मनोहर रंग दिखलाया।

इस समय के साहित्य में प्रायः सर्वत्र भक्ति की चर्चा है। ईश्वर को अपना ध्येय, अपना स्वामी, अपना पति इत्यादि मान कर कवियों ने विनय, स्तोत्र, कथाएं इत्यादि लिखी हैं। इस भक्ति में कृष्ण और राधा का प्राधान्य है। इस संबंध में एक बात विशेष ध्यान देने योग्य यह है कि जब कवि ईश्वर को पति और भक्त को पत्नी स्वरूप

देखता है तो बहुत सी ऐसी बातों का वर्णन आ जाता है जिसे साधारण दृष्टि से अश्लील कहना पड़ता है। फिर जब भक्त कवि सगुण रूप भगवान के प्रेम में लीन होता है और उनको कृष्ण या पुरुष रूप में देखता है और उनसे प्रेम करने वाली राधिका को उनकी स्त्री रूप देखता है और उनकी जीवनी तथा परस्पर संबंध और लीलाओं का वर्णन करता है तो दाम्पत्य भाव के कारण उसकी रचना में अश्लीलता की कुछ मात्रा आ जाती है। यहाँ तक कि भक्ति रस के सर्वश्रेष्ठ कवि सूरदास में भी अश्लीलता आ गई है। जान पड़ता है कि ईश्वर का प्रेमी कवि प्रेम का पूरा परिचय देने के लिए आदर्श, अविच्छिन्न और अभेद्य प्रेम की साक्षात् मूर्ति दम्पति का सहारा लेता है। यों तो महात्मा कबीरदास ने भी लिखा था :—

"कह कबीर मोहिं व्याहि चले हैं पुरुष एक अविनासी।"

और "राम हमारे पहुने आए मैं जोबन मद माती॥"

इत्यादि।

किंतु उनकी विचारधारा भिन्न थी और उनका समय भी भिन्न था। इस काल के वैष्णव संप्रदाय ने एक नए ढंग का सर्वोत्तम साहित्य निकाला। यह साहित्य मुख्यतः ब्रजभाषा में है जिसकी मधुरता जगत-प्रसिद्ध है।

अष्टछाप

महाप्रभु वल्लभाचार्य के चार शिष्य प्रसिद्ध कवि हुए, अर्थात सूरदास, कृष्णदास, परमानन्ददास और कुम्भनदास। महाप्रभु जी के पुत्र श्रीविट्ठलनाथ जी भी बड़े भारी भक्त थे और इनके भी चार शिष्य प्रसिद्ध कवि हुए, अर्थात् चतुर्भुजदास, छीतस्वामी, नंददास और गोविंद स्वामी। स्वामी विट्ठलनाथ ने इन आठों को मिला कर "अष्टछाप" की स्थापना की।

सूरदास इस अष्टछाप के अथवा इस समय के सर्वश्रेष्ठ कवि थे। यह एक निर्धन ब्राह्मण थे जिनका जन्म दिल्ली के पास सीही गांव में १५४० वि० के लगभग हुआ था और जिन्होंने प्राय ८० वर्ष की अवस्था पाई यः बाल्यावस्था ही से कृष्ण के भक्त थे और जब आठ वर्ष के थे तभी से कुटुम्ब छोड़ कर मथुरा में वास करने लगे।

सूरदास

ज्ञात होता है कि सूरदास जन्म ही से सूर न थे बल्कि इन्होंने अपनी इच्छा से अपने को अंधा कर दिया था, जिससे आँखें किसी युवती इत्यादि को देख कर मन को पाप की ओर न ले जा सकें।

इनके लिखे ग्रंथों में सब से प्रसिद्ध सूरसागर है। यह एक बृहत ग्रंथ है जिसमें कृष्ण की लीलाओं का बड़ा मनोहर और उत्कृष्ट वर्णन है। यह श्रीमद्भागवत् का उलथा है और इसे सूरदास जी ने अपने गुरु महाराज के उपदेश से लिखा था। इन्होंने और भी ग्रंथ लिखे जैसे सूरसारावली, साहित्य लहरी और नल दमयंती। इनके कुछ ग्रंथ हाल में भी प्राप्त हुए हैं। किन्तु अभी सूरसागर ही के अधिकांश पद नहीं मिले हैं।

सूरदास कविता संबंधी कई गुणों में बहुत बढ़े चढ़े हैं। एक तो इनकी भाषा बहुत ही मनोहर और पद बड़े ही रोचक हैं और इन्होंने रूपक, उपमा आदि अलंकारों का बड़ा सुंदर प्रयोग किया है। दूसरे इनका वर्णन बहुत ही उत्तम होता है। राधा का रूप, उद्धव संवाद, मथुरा गमन इत्यादि के वर्णन में इन्होंने बड़ी उत्कृष्टता दिखलाई है। कृष्ण के बाल चरित्र तथा गोपियों के विरह का इन्होंने चित्र खींच दिया है। तीसरे इनकी निरीक्षण शक्ति बड़ी प्रबल थी। इनकी रचना देखिये :—

" प्रिया मुख देखौ श्याम निहारि।
कहि न जाइ आनन की शोभा रही विचारि विचारि॥

क्षीरोदक घूँघट हातो करि सनमुख दियो उघारि ।
मनहुँ सुधाकर क्षीरसिंधु तें कढ़्यौ कलंक पखारि ॥ "

× × ×

" प्रथमहिं सुभग श्याम बेनी की सुखमा कहहु विचारि ।
मानहु फनिक रह्यो पीवन को ससिमुख सुधा निहारि ॥

× × ×

भृकुटी विकट निकट नैनन के राजत अति वर नारि ।
मनहुँ मदन जग जीति जेर करि राखेहु धनुष उतारि ॥
ता विच बनी आड़ केसिरि की दीन्ही सखिन सँवारि ।
मानौ बँधी इंदुमंडल मैं रूप सुधा की पारि ॥

× × ×

"सूर रसिक तबहीं पै बदिहौं मुरली सकहु सम्हारि ॥"
" अटपटात अलसात पलक पट मूँदत कबहूँ करत उघारे ।
मनहुँ मुदित मरकत मनि अंगन खेलत खंजरीट चटकारे ॥ "

" उधो जी हमहिं न योग सिखैये ।
जेहि उपदेश मिले हरि हमको सो व्रत नेम बतैये ॥ "

" मेरो मन अनत कहाँ सुख पावै ।
जैसे उड़ि जहाज को पच्छी फिरि जहाज पर आवै "

× × ×

"सूरदास प्रभु कामधेनु तजि छेरी कौन दुहावै " ॥

इनकी कविता का एक यह दोष भी है कि उसमें कहीं कहीं अश्लीलता पाई जाती है। फिर तुलसीदास से तुलना करते समय यह कह सकते हैं कि तुलसीदास की भाँति इनका रचना-क्षेत्र विस्तृत नहीं है ।

कृष्ण के प्रति जो विनय इत्यादि सूरदास ने की है वह अपने ढंग की निराली है। इनके भजनों को बहुत लोग गाया करते हैं और उनका आदर करते हैं।

" प्रभु मोरे अवगुन चित ना धरो।
समदरसी है नाम तिहारो चाहे तो पार करो॥
इक नदिया इक नार कहावत मैलोहि नीर भरो।
जब दोनों मिल एक बरन भये सुरसरि नाम परो॥
इक लोहा पूजा में राखत इक घर बधिक परो।
पारस गुन अवगुन नहिं चितवै कंचन करत खरो॥
यह माया भ्रम जाल कहावै सूरदास सगरो।
अब की बार मोहिं पार उतारो नहिं प्रन जात टरो॥ "

" अब हौं उघरि नचन चाहत हौं, तुम्हें विरद बिनु करिहौं।"

" हरिहौं सब पतितन पतितेस।"

" छाड़ मन हरि विमुखन को संग।
जाके संग कुबुद्धी उपजै परत भजन मैं भंग॥
कागहि कहा कपूर खवाये स्वान नन्हवाये गंग।

× × ×

सूरदास खल कारी कामरि चढ़त न दूजो रंग॥ "
" सूरकूर आँधरो मैं द्वार परयो गाऊँ " इत्यादि।

इस संबंध में स्मरणीय है कि तुलसीदास जो भक्ति रामचंद्र के प्रति रखते थे वह दास भाव की थी और सूरदास जो कृष्ण के प्रति भक्ति रखते थे वह वात्सल्य और सख्य भाव की थी।

सब मिला कर सूरदास की कविता परमोत्कृष्ट है। सरसता में तो इनको अद्वितीय ही समझना चाहिए और वर्णनों में भी यह किसी

कवि से कम नहीं हैं। कुछ लोगों ने हिन्दी कवियों में इनका स्थान सर्वोच्च माना है "सूर सूर तुलसी ससी, उडुगन केसवदास।" किंतु इनका स्थान तुलसीदास के बाद ही रखना चाहिए। इसका एक मुख्य कारण यह है कि तुलसीदास का कविता-क्षेत्र बहुत विस्तृत है और उन्होंने जीवन संबंधी इतनी बातों का उत्कृष्ट वर्णन किया है कि सर्वोच्च स्थान उन्हीं को मिलना चाहिए। दूसरे विचारों पर ध्यान देने से भी तुलसीदास ही को ऊँचा रखना पड़ेगा। तीसरे चरित्र-चित्रण और गुण-दोष-दर्शन में भी रामचरितमानस के निर्माणकर्ता को सर्वश्रेष्ठ स्थान देना होगा। इसमें संदेह नहीं कि सूरदास ने "चरित्र चित्रण में अच्छी सफलता प्राप्त की है" (मिश्र बंधु) तथापि तुलसीदास से उनकी सफलता की श्रेणी निम्नतर है। किंतु एक तुलसीदास को छोड़ कर दूसरा कोई कवि इनकी समनता नहीं कर सकता और समानता करना तो अलग रहे इनके निकट भी नहीं आ सकता। इनके पद सुंदरता और माधुर्य में हर एक कवि के पदों से बढ़े हुए हैं।

अष्टछाप के अन्य कवि

अष्टछाप के अन्य कवियों में धीरे धीरे शृंगार रस का प्राधान्य होने लगा। यह धारा कुछ ऐसी प्रवाहित हुई कि अंत में इसने हिन्दी कविता से उच्च आदर्श को हटा ही दिया। अष्टछाप तक तो इतना कुशल था कि ये सब कृष्णानंद में मग्न रहते थे किंतु बाद वाले कवियों में भक्ति भाव कम था या बिलकुल न था। वल्लभाचार्य के शिष्यों में कृष्णदास और परमानंदास एक ही श्रेणी के कवि थे और अच्छी कविता करते थे। दोनों की रचनाएं सरस और मनोहर हैं। कुम्भनदास सामान्य कवि थे, किंतु एक बड़े ऋषि थे। विट्ठलनाथ जी के शिष्यों में नंददास अच्छे कवि थे। इन्होंने बहुत से ग्रंथ बनाए और रचना

भी इनकी मनोहर थी। शेष तीनों कवि अर्थात् चतुर्भुजदास, छीतस्वामी और गोविंद स्वामी साधारण कवि थे और इन लोगों के ग्रंथ ठीक से मिलते भी नहीं।

इन कवियों में दो बातें विशेष ध्यान देने योग्य हैं, एक तो यह कि ये लोग शृंगार रस की ओर झुकने लगे। सूरदास की भक्ति की प्रगाढ़ता तथा उनको विनयों के भाव धीरे धीरे जाते रहे। छीतस्वामी तो स्वयं पहले दुश्चरित्र थे परंतु स्वामी विट्ठलनाथ के दर्शन से इनका आचरण बिलकुल शुद्ध हो गया। दूसरी बात यह है कि ये लोग भगवान का भजन करते थे और ईश्वर ही में लीन रहते थे। गोविंदस्वामी अच्छे गवैये भी थे। ये कवि राजाओं की ओर ध्यान न देते थे और न उनके यशगान में अपनी लेखनी उठाते थे। उस समय सम्राट अकबर का शासन था। उसके यहाँ बड़े बड़े कवि रहते थे और सम्मानित होते थे। सम्राट ने एक बार ऋषिकवि कुम्भनदास को बुलाया। सम्राट फतेहपुर सिकरी में रहता था। यह गए और अकबर ने उनका सम्मान भी किया। परंतु कृष्णानंदी संतों को राजदरबार से क्या संबंध। उन्हें वहाँ जाना व्यर्थ ही मालूम हुआ और उन्होंने कहा भी :—

" संतन का सिकरी सन काम,
आवत जात पनहियाँ टूटी बिसरि गयो हरिनाम।
जिनको मुख देखे दुख उपजत तिनको करिबे परी सलाम,
कुम्भनदास लाल गिरिधर बिन और सबै बे काम।"

इन भक्त कवियों को ब्रज के सामने स्वर्ग भी फीका मालूम होता था। और परमानंददास ने कहा भी था :—

" कहा करौं बैकुंठहि जाय।
जहँ नहिं नँद जहाँ नहीं जसोदा जहँ नहिं गोपी ग्वाल न गाय॥

जहँ नहिं जल जमुना को निरमल और नहीं कदमन की छाय।
परमानंद प्रभु चतुर ग्वालिनी ब्रजरज तजि मेरि जाय बलाय।"

इन कवियों के संबंध में एक और जानने योग्य बात यह है कि इन में एक अर्थात् नन्द दासने गद्य भी लिखा। इनका गद्य कोई मौलिक लेख नहीं है वरन् संस्कृत ग्रंथों का अनुवाद या टीका है, जैसे नासकेत पुराण का भाषा अनुवाद या विज्ञानार्थ प्रकाशिका को टीका। इनकी भाषा ब्रज भाषा है। ब्रज भाषा में स्वामी विठ्ठलनाथजी ने भी एक ग्रंथ श्रीराधाकृष्ण के संबंध में लिखा है। "ये महाशय गद्य के द्वितीय लेखक हैं" (मिश्रबंधु)

सूरदास के समकालीन और उत्तरकालीन बहुत से कवि बड़े प्रसिद्ध हो गए हैं। भक्ति-काव्य की एक धारा श्री गोस्वामी हरिवंश हित ने प्रवाहित की। ये स्वयं कवि थे और इनकी कविता अच्छी होती थी, किन्तु इनकी सब रचनाएं मिलतीं नहीं। इनका जन्म सं० १५३० वि० में सहारनपुर में हुआ था। यह श्रीराधिका जी के शिष्य थे और इन्होंने राधावल्लभीय संप्रदाय की संस्थापना की। इनकी रचना बहुत थोड़ी मिली है किन्तु उसी से ज्ञात हो जाता है कि ये उच्चकोटि के कवि थे। इन्होंने भी थोड़ी शृंगार रस की कविता की है। ये संस्कृत में भी काव्य रचना करते थे। गोस्वामी जी के अनेक शिष्यों और पुत्रों ने कविता करके हिन्दी का गौरव बढ़ाया। इनमें कुछ शिष्या स्त्रियों ने भी कविता की है।

हरिवंशहित

सोलहवीं शताब्दी की एक स्त्री ने भारतीय कविता तथा भारतीय समाज को बहुत ही गौरवान्वित किया है। यह प्रसिद्ध मीराबाई थीं जिन्होंने जोधपुर के चोकड़ी गाँव में सं० १५७३ वि० में जन्म लिया था। मीराबाई का विवाह उदयपुर कोमहाराना कुमार भोजराज के साथ हुआ था। किन्तु यह सदा

मीराबाई

श्रीकृष्ण जी ही के प्रेम में लीन रहती थीं। हिन्दी साहित्य तथा कृष्ण के भक्तों का अभाग्य था कि मीराबाई को अजेय काल ने ३० वर्ष से अधिक जीवित न रहने दिया। ये रैदास को अपना गुरु मानती थीं। इनको परदे का विचार न था और यह घर छोड़ कर मन्दिरों में दर्शन के लिए दूर तक चली जाया करती थीं और कृष्ण जी की मूर्ति के सामने नृत्य गान भी किया करती थीं। इनकी कविता भक्तिपूर्ण है और भाषा श्रुतिमधुर तथा चित्ताकर्षक है जिसे पढ़कर हृदय फूल उठता है। मीराबाई वास्तव में प्रेम की मूर्ति थीं। कहती हैं :—

"बसो मेरे नैनन में नंद लाल,
मोहनि मूरत साँवरि सूरति नैना बने रसाल।
अधर सुधा रस मुरली राजित उर बैजन्ती माल॥
छुद्रघंटिका कटि तट सोभित नूपुर शब्द रसाल।
मीरा प्रभु संतन सुखदाई भक्त वछ्ल गोपाल॥"
"मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरा न कोई" इत्यादि

यह भी वाह्य आडम्बर को व्यर्थ और सांसारिक जीवन को असार समझती थीं।

"कहा भयो तीरथ व्रत कीने कह लिए करवट कासी"
तथा "इस देही का गरब न करना माटी में मिलि जाती"

अतः श्रीकृष्ण ही से प्रार्थना करने पर जीवन का फल मिलेगा।

"अरज करों अबला कर जोरे श्याम तुमारी दासी
मीरा के प्रभु गिरिधर नागर काटो यम की फाँसी"
"मन रे परसि हरि के चरन।
सुभग सीतल कमल कोमल त्रिविध ज्वाला हरन"॥ इत्यादि

इन्होंने मधुर व्रजभाषा में कविता की जिसमें राजपूतानी भाषा का भी मेल है। यह स्वयं राजपूताने की थीं। किंतु गुजराती भाषा में भी कविता करती थीं।

भक्ति रस के कवियों में स्वामी हरिदास जी भी प्रसिद्ध हैं। ये विख्यात कवि, गवैया और ऋषि थे। सम्राट् अकबर ने भी इनके पास जाकर इनसे भेंट की थी और इनका गाना सुना था। इनके शिष्यों ने भी अच्छी कविता की। इनकी रचना भक्त ऋषियों के ढंग की है जिसमें संस्कृत भी मिली है जैसे :—

हरिदास

"गृह कामिनि कंचनि धन त्यागौ सुमिरौ श्याम उदार"

इस प्रगाढ़ भक्ति रस के अतिरिक्त अन्य विषयों पर भी इस समय के कवियों ने रचनाएं की।

एक धारा कहानियों और उपदेश की बही। छीहल नामक कवि ने एक प्रेम कहानी लिखी जिसका नाम पंच सहेली है। इसमें पाँच स्त्रियों का वर्णन है। यह साधारण श्रेणी के कवि थे। अनुमान होता है कि यह राजपूताना के रहने वाले थे। उस समय की सब से प्रसिद्ध कहानी पद्मावत है जिसे मुसलमान कवि मलिक मुहम्मद जायसी ने लिखी है। जायस इनका निवास स्थान था। कुछ लोगों का मत है कि इनका जन्म ग़ाज़ीपूर में हुआ था। इन्होंने दो ग्रंथ बनाए— पद्मावत और अखरावट। पद्मावत एक ऐतिहासिक कहानी है जिसमें चितौड़ के महाराना का सिंहलद्वीप की परमसुन्दरी राजकन्या पद्मिनी पर प्रेम और उसके साथ विवाह और उसी पद्मिनी को पाने के लिये सुलतान अलाउद्दीन के चितौड़ पर आक्रमण, छल और सब उपायों की असफलता का वर्णन बड़ी उत्कृष्टता से किया हुआ है।

कहानियाँ इत्यादि

इस कथा में कवि ने महाकाव्य की भाँति अनेक विषयों का बड़ा सुन्दर और विस्तृत वर्णन किया है। भाषा इनकी ठेठ पूर्वी है जिसमें ग्रामीणता बहुत मिलती है । तुलसीदास की भाँति इन्होंने चौपाई दोहों में कविता की है । भाषा भी कुछ कुछ उनसे मिलती है और वर्णन में भी कहीं कहीं थोड़ा सादृश्य है और उपमा रूपक आदि इन्होंने भी अच्छे कहे हैं। देखिये:—

"का सिर बरनऊँ दिपइ मयंक, चाँद कलंकी वह निकलंक"।
"सेंदुर परा जो शीश उघारी, आग लाग चहि जग अँधियारी"॥
"राती पिय के नेह की, स्वर्ग भयो रतनार।
जो रे उवा सो अथवा, रहा न कोई संसार"॥

अखरावट भी अच्छा ग्रंथ है । इसमें जायसी ने भी वैष्णव कवियों की भाँति संसार की असारता दिखलाई है और वेदांत की चर्चा की है। इसमें इन्होंने इसलाम के अनुसार स्तुति की है। जायसी को उच्च श्रेणी का कवि समझना चाहिये।

इन कहानियों के अतिरिक्त लालचदास कवि ने भागवत के दशम् स्कंध की कथा लिखी। लालचदास ने एक ग्रंथ हरि चरित्र नामक लिखा और उनके बाद नरोत्तमदास जी ने सुदामा चरित्र लिखा। नरोत्तमदास उच्चकोटि के कवि थे और इनका सुदामा चरित्र सराहनीय है। इसमें सुदामा की दशा और कृष्ण की करुणा का बड़ा ही उत्कृष्ट वर्णन है और भाषा और छंद मनोहर हैं। नीचे के पद पढ़ कर किसका हृदय रो नहीं देगा:—

"सीस पगा न झगा तन मैं प्रभु जानै को आहि बसै केहि गामा।
धोती फटी सी लटी दुपटी अरु पायँ उपानह की नहि सामा॥
द्वार खड़ो द्विज दुर्बल एक रहो चकि सो वसुधा अभिरामा।
पूछत दीन दयाल को धाम बतावत आपनो नाम सुदामा॥

सो "देखि सुदामा की दीन दशा करुना करिकै करुनानिधि रोए।
पानी परात को हाथ छुयो नहिं नैनन के जलसों पग धोए॥"

उपदेश इत्यादि

उपदेश और ज्ञान की ओर भी एक धारा प्रवाहित हुई। सं० १५६३ वि० में चंद कवि ने हितोपदेश लिखा। इनके बाद स्वामी निरंजन ने संतसरसी और निरंजन संग्रह लिखा। यह उच्चकोटि के कवि थे और इनकी कविता में खड़ी बोली भी है। इन्होंने साधारण बातों में ज्ञान का उपदेश किया है।

आचार्य

एक और साहित्यिक धारा विशेष ध्यान देने योग्य है। इसी समय कृपाराम नामक एक कवि हुए जिन्होंने अच्छी कविता की है। यह भाषा में रस रीति के प्रथम आचार्य थे। इस विषय पर इनका प्रसिद्ध ग्रंथ हिततरंगिनी है। इस में रसों का विस्तृत वर्णन है। रीति ग्रंथ उस समय के और कवियों ने भी बनाये हैं जैसे मोहनलाल मिश्र ने श्रृंगार सागर लिखा।

मुसलमान कवि

मुसलमान कवियों में सब से प्रसिद्ध जायसी का नाम आ चुका है। इनके अतिरिक्त शाह मुहम्मद और आलम ने भी कविता की और एक मुसलमान महिला चंपा ने भी कविता की जो शाह मुहम्मद की स्त्री थी। दक्षिण में बीजापूर के सुलतान इबराहीम आदिल शाह ने नौरस नामक ग्रंथ लिखा।

विशेषताएं

इस काल के बाद महात्मा तुलसीदास का समय आयगा। अब दो तीन बातों पर ध्यान रखना आवश्यक है। दोहे चौपाइयाँ इस काल में अच्छी लिखी गईं। जायसी की चौपाइयाँ तथा कृपाराम के दोहे प्रसिद्ध हैं। अब आगे

चल कर तुलसीदास और बिहारीलाल ने इन्हीं चौपाई दोहों को सर्वोच्च शिखर पर पहुँचाया। फिर लालच ने लिखा थाः—

"लालच रामनाम के आसा"

वह यह नहीं जानता था का यही रामनाम तुलसीदास के मुख से भारत तथा विश्व भर में गूँजने वाला था। कृष्ण-कथाओं के बाद अब राम-कथाओं की बारी आ रही थी। तीसरे कृपाराम की बहाई धारा को सुशोभित करने वाले केशवदास आदि कवियों ने जन्म लिया।

दूसरा भाग

तुलसीदास काल

(१६ वीं शताब्दी का अंतिम और १७ वीं का आदि भाग)

महात्मा तुलसीदास का समय हिन्दी साहित्य के इतिहास में अपूर्व है। बल्कि यों कहिये कि वह काल भारतीय इतिहास ही में अपूर्व है। वह एक ऐसा समय था जब देश जातीयता और राष्ट्रीयता का अनुभव करने लगा। शताब्दियों के बाद राजा और प्रजा तथा शासक और शासित अपने को एक धारा में प्रवाहित समझने लगे। सम्राट अकबर प्रजा के हित का उचित ध्यान रखता था और उसको प्रजा उसको मानती थी। हिन्दू संसार में वह हलचली, अशांति और अविराम भय जो ३,४ सौ वर्ष से अपना राज जमाये था अब दूर हो गया। देश में एक नया और प्रबल उत्साह पैदा हुआ जिसने जीवन के प्रत्येक भाग को प्रभावित किया। उधर धार्मिक झगड़ों के बंद हो जाने से और जीवन शांतिमय हो जाने से कवियों ने सांसारिक विषयों की ओर भी ध्यान दिया। दूसरी ओर सम्राट स्वयं विद्या शिक्षा और साहित्य को उन्नति

करना चाहता था जिससे साहित्यकारों को बड़ा सहारा मिला। अकबर का दरबार ही साहित्यिकों का मजमा होगया। ऐसा जान पड़ता है कि उस समय में कविता-रचना की धारा ही बह गई।

इस काल के कवियों को कई श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं। काव्य की दृष्टि से देखने पर ज्ञात होता है कि कुछ कवि भक्ति और शांत रस के थे; कुछ नीति और व्यवहार पर लिखते थे; कुछ ने काव्य कला अथवा रस रीति पर कविता की और कुछ ने अनुवाद इत्यादि निकाला। और एक श्रेणी के कवि गवैया थे जिन्होंने गाने ही बनाए। इस समय में शृंगार रस की धारा प्रबल होने लगी जो आगे चल कर कुछ वर्षों में बिलकुल प्रधान ही हो गई। इसी समय में खड़ी बोली का प्रथम गद्य ग्रंथ लिखा गया। अवधी भाषा ने ज़ोर पकड़ा और उर्दू की नींव पड़ी। एक दूसरी दृष्टि से देखने पर कवियों के चार विभाग हो सकते हैं; एक तो वे जिन्होंने दरबार ही में रह कर कविता की और दरबार की पूरी सहायता पाई; दूसरे वे जो अन्य स्थानों से आते थे किंतु दरबार में सम्मान पाते थे; तीसरे वे जो दरबार के प्रति उदासीन भाव रखते थे और चौथे वे जिन्हें दरबार जाना बुरा मालूम होता था।

पहले दरबारी कवियों ही पर दृष्टि डालिये। दरबार का स्वामी सम्राट अकबर स्वयं कविता करता था। अकबर स्वयं कोई पढ़ा लिखा आदमी तो न था किन्तु विद्वान अवश्य था अर्थात् औरों से पढ़वा कर ग्रंथ सुनता और विद्या प्राप्त करता था। हिन्दी भाषा में साधारण कविता उसने भी की है। राजा टोडरमल और राजा मानसिंह को भी युद्ध और शासन से कुछ अवकाश कविता करने के लिये मिल जाता था। टोडरमल लिखते हैं :—

दरबारी कवि

"टोडर सुकवि तैसे मन में विचारि देखो,
धर्म बिन धन जैसे पच्छी बिनु पर है।"

तानसेन तो गवैया थे ही इन्होंने भी कुछ पद रचे। यह पहले हिन्दू थे लेकिन पीछे मुसलमान हो गए। यह ग्वालियर के रहने वाले थे। इन्होंने संगीतसार आदि ग्रन्थ बनाए। एक सभासद् वीरबल थे जो सदा कविता के प्रेमी थे। ये बड़े ही चतुर और बुद्धिमान थे और हृदय भी इनका बड़ा उदार था—यह दाता प्रसिद्ध थे। इनके चुटकुले अथवा चातुर्य पूर्ण उक्तियां और हँसी की बातें विख्यात हैं और कुछ पहेलियाँ भी प्रसिद्ध हैं। ये स्वयं कवि थे और कवियों की बड़ी सहायता करते थे।

कविता की दृष्टि से वीरबल की गणना व्रज भाषा के अच्छे कवियों में होनी चाहिये। भाषा इनकी मधुर और अलंकृत होती थी और छंद भी इनके अच्छे होते थे। उपमाएं और अनुप्रास ये अच्छे लिखते थे। इन्होंने कविता के लिये अपना उपनाम ब्रह्म रखा था।

"छीर समुद्र के पौढ़न हार को 'ब्रह्म' कबौं चित तें नहिं ध्याये।
पौंढ़त पौंढ़त पौंढ़त ही सो चिता पर पौढ़न के दिन आये॥"

अकबर के मुसाहिबों में एक मनोहर दास थे। इन्होंने भी अच्छी और सचमुच मनोहर कविता की। यह फ़ारसी में भी कविता करते थे और इनकी हिन्दी कविता में भी बहुत फ़ारसी मिली है जैसे:—

"इंदु बदन नरगिस नयन संबुल वारे बार।"

एक दूसरे दरबारी कवि बीकानेर के देशभक्त महाराज पृथ्वी-राज थे जो कविता के प्रेमी थे और स्वयं कविता करते थे।

अकबरी दरबार में हिंदी और फ़ारसी के अनेक कवि थे किंतु

रहीम

हिन्दी में जैसी कविता रहीम ने की वैसी किसी ने न की। इनके कुछ दोहे प्रत्येक हिन्दी पढ़ने

वालों को स्मरण होंगे। यह वही अब्दुल रहीम ख़ान ख़ाना हैं जो बैराम खाँ के पुत्र और अकबर के फुफेरे भाई और मंत्री थे। इनका जन्म सं० १६१० वि० में और मृत्यु सं० १६८४ वि० में हुई थी। ये थे तो मुसलमान किन्तु इनके इष्टदेव श्रीकृष्ण थे और यह कृष्ण और राम के सच्चे भक्त थे। इनका आदर सब लोग करते थे और निरादर इन्हें मृत्यु से भी बुरा मालूम होता था, किन्तु झूठी प्रशंसा और चापलूसी इन्हें बिलकुल पसंद न थी। आदर के संबंध में इनका यह दोहा प्रसिद्ध है :—

" रहिमन मोंहि न सोहाय, अमी पियावै मान बिन।
वरु विख देय बुलाय, मान सहित मरिबो भलो॥"

रहीम बड़े ही उच्च और उदार विचार के पुरुष थे और दान देने में तो यह एकता थे। यह विद्या में निपुण और संस्कृत, हिन्दी, फ़ारसी, अरबी सभी के विद्वान थे। यह स्वयं बड़े कवि थे और अन्य कवियों का बड़ा सम्मान करते थे।

ये उत्तम श्रेणी के कवि थे। इनकी कविता की भाषा मुख्यतः व्रज है किन्तु इनका बरवै नायिका भेद नामक ग्रन्थ पूर्बी भाषा में लिखा है। उदाहरण :—

" खीन मलीन विषभैया अवगुन तीन।
मोहिं कहत विधुबदनी पिय मति हीन॥"
" पीतम इक सुमिरिनियाँ मुहिं देइ जाहु।
जेहि जपि तोर बिरहवा करब निबाहु॥"
" सघन कुञ्ज अमरैया सीतल छाँह।
झगरति आइ कोइलिया पुनि उड़ि जाइ॥"

इन्होंने विशेषतः दोहा और बरवै छंदों में प्रशंसनीय कविता की है। इनकी शैली की एक बड़ी विशेषता यह है कि इसमें केवल भाव

की ओर अधिक ध्यान दिया गया है। सीधे सादे शब्दों में सरल रूप से इन्होंने उच्च शिक्षाओं और विचारपूर्ण तथा गंभीर बातों का वर्णन किया है। स्थान स्थान पर दृष्टांत और उपमा आदि अलंकारों का भी बड़ा सुंदर प्रयोग किया है, किन्तु शब्दों की भरमार नहीं की है और न उनको सजाने और सुशोभित बनाने का प्रयत्न किया है।

इनकी रचनाएं नीति और शिक्षा से भरी हुई हैं जिनमें इन्होंने अपना गूढ़ अनुभव प्रकट किया है। सत्संगति, कुसंगति, और संसार के ढंग आदि विषयों पर इन्होंने अच्छे अच्छे दोहे कहे हैं। दान और उपकार पर भी इन्होंने अपने उदारमत प्रकट किये हैं। जान पड़ता है कि दीन जनों से इनकी बड़ी सहानुभूति थी। कहते हैं :—

"जे गरीब को आदरै, ते रहीम बड़ लोग।
कहा सुदामा बापुरो, कृष्ण मिताई जोग॥"

तथा "दीनबंधु बिन दीन की, को रहीम सुधि लेत।"

इनकी रचना का एक विशेष गुण यह है कि जो कुछ अनुभव इन्हें बतलाना होता था या जो कुछ शिक्षा इन्हें देनी होती थी उसको ऐसे प्रभाव पूर्ण शब्दों द्वारा कहते थे और पुराण इतिहास तथा साधारण व्यवहार के उदाहरण से उसे ऐसा समझा देते थे कि वह सब हृदयंगम हो जाती और यही कारण है कि उनके दोहे लोगों को तुलसीदास की चौपाइयों की भाँति स्मरण रहते हैं, जैसे :—

"हित रहीम तब जानिए, जब कछु अटकै काम।"
"छिमा बड़ेन को चाहिये, छोटेन को उतपात।
का रहीम हरिको घट्यो जो भृगु मारी लात॥"
"जैसी परै सो सहि रहै, कहि रहीम यह देह।
धरती ही पर परत सब, शीत घाम औ मेह॥"

"जेहि रहीम तन मन दियो, कियो हिए बिच भौन।
तासौं दुख सुख कहन की, रही बात अब कौन॥"

इन्होंने पाँच छः ग्रन्थ लिखे जिनमें रहीम सतसई सबसे अधिक प्रसिद्ध है। इसके संबंध में निर्भय कह सकते हैं कि यह ग्रन्थ बड़ा ही उत्तम और उपयोगी है। यह हिन्दी साहित्य की तीन सर्वश्रेष्ठ सतसइयों में है। अन्य दोनों में एक तुलसी की है, एक बिहारी की॥

अकबरी दरबार से बहुत से कवियों को सहायता मिलती थी और वहाँ उनका बड़ा सम्मान होता था। इनमें सब से प्रसिद्ध गंग और नरहरि हैं। नरहरि का जन्म सं० १५६२ वि० में हुआ था और ये सौ वर्ष से उपरान्त जीवित रहे। साधारण दृष्टि से इन्होंने अच्छी कविता की। अकबर ने इनको महापात्र की उपाधि दी थी और यह महापात्र नरहरि बंदीजन के नाम से प्रसिद्ध थे। अकबर के दरबार में नरहरि बंदीजन के साथ एक और कवि जाते थे जिनका नाम करनेस बंदीजन था। ये साधारण कविता करते थे और कवियों को दान न देने वालों को बुरा समझते थे। इन्होंने "पहिले पहल भँडौवा बनाने की चाल चलाई" (मिश्रबंधु)

गंग

गंग कवि अपने समय में बहुत प्रतिष्ठित थे। यद्यपि उनके जीवन चरित्र के संबंध में प्रायः कुछ भी निश्चित नहीं मालूम है तथापि यह कह सकते हैं कि उनका बड़ा आदर हुआ और अब तक उनकी कविता आदरणीय समझी जाती है। यह अब्दुल रहीम ख़ान ख़ाना के विशेष कृपापात्र थे और उनकी प्रशंसा में इन्होंने बहुत से छंद भी बनाए हैं। यह एक निडर आदमी थे और इनकी रचना भी उदंड है। इन्होंने हास्य रस की कविता बड़ी अच्छी की है। इनको हास्य रस का आचार्य

समझना चाहिये। इन्होंने मिलीजुली भाषा लिखी है जिसमें ब्रज-भाषा मुख्य है। इनकी एक यह विशेषता स्मरणीय है कि युद्ध संबंधी कविता इन्होंने बड़ी अच्छी लिखी है। सब देख कर इनको उच्च श्रेणी में रखना होगा। इनकी भाषा और कवित्व का उदाहरण देखिये।

"बैठी ती सखिन संग पिय को गवन सुन्यो,
सुख के समूह में वियोग आगि भरकी।
गंग कहै त्रिविध सुगंध लै पवन बह्यो,
लागत ही ताके तन भई बिथा जर की॥
प्यारी को परसि पौन गयो मानसर पहँ,
लागत ही औरै गति भई मानसर की।
जलचर जरे औ सेवार जरि छार भयो,
जल जरि गयो पंक सूख्यो भूमि दरकी॥"

"एते मान सोनित की नदियाँ उमड़ि चली,
रही न निसानी कहूँ महि में गरद की।
गैारी गह्यो गिरिपति गनपति गह्यो गैारी,
गैारीपति गह्यो पूँछ लपकि बरद की॥"

यह जानने की बात है कि गंग नाम के हिन्दी में कई कवि हो गए हैं। और कवियों की जीवनी निश्चित रूप से ज्ञात न होने से यह संदेह ही रह जाता है कि कौन कवि कौन है। किसी गंग ब्रह्मभट्ट या गंगभाट नामक लेखक ने एक खड़ी बोली का गद्य ग्रन्थ लिखा है। यह ग्रन्थ खड़ी बोली का पहला गद्य ग्रन्थ है। यह महाशय भी अकबर के दरबार में थे, संभव है यह प्रसिद्ध कवि गंग ही हों।

अकबरी दरबार से सम्मानित एक और कवि होलराय नामक थे जो साधारण कवि थे। इन्होंने अकबर की, उसके दरबारी लोगों

की और राजधानी की बड़ी ही प्रशंसा की है। एक छंद के अंत में लिखते हैं :—

"नओ खंड सात दीप सातहू समुद्र पार,
हैहै ना जलालुदीन शाह अकबर ते।"

अकबर और उसके दरबारियों ने बहुत सी कविता की और बहुत से कवियों को उत्साहित तथा सम्मानित किया, किन्तु सर्वोच्च शिखर पर पहुँचने वाले कवि सम्राट से ये कोई संबंध ही नहीं रखते थे। इस काल के सर्व श्रेष्ठ कवि तुलसीदास थे और इन महाशय का अकबरी दरबार से कोई संबंध न था। कुछ कवि लोग तो वहाँ जाना केवल अपने बहुमूल्य समय को नष्ट ही करना समझते थे। जैसा कुम्भनदास ने कहा भी था :—

"संतन का सिकरी सन काम
.........."

वैष्णव कवि

तुलसीदास और उनके समय के दूसरे सर्वश्रेष्ठ कवि केशवदास का वर्णन करने के पहले कुछ वैष्णवों का वर्णन करना उचित है जिनका कविता-काल तुलसीदास के कविता-काल से कुछ पहले था। इनमें नागरीदास और भगवान हित अच्छी कविता करते थे। ये दोनों महाशय श्री हित संप्रदाय के थे। इनकी कविता में भाव और भक्ति भरी है। इनकी भक्ति शृङ्गार भाव की है। इनके अतिरिक्त और भी बहुत से कवि हुए। रसिक नामक कवि ने श्री कृष्णचंद की लीलाओं का वर्णन किया है। श्रीभट्ट कवि ने 'आदि वाणी' और बिहारिनिदास ने 'साखी' बनाई है।

दादू

एक कवि दादूदयाल थे जिन्होंने हिन्दी के अतिरिक्त गुजराती भाषा में भी कविता की। ये कवि तो साधारण थे किन्तु ये बड़े ऋषि थे। इन्होंने दादूपंथ

चलाया। इनका स्वभाव बड़ा कोमल था और यह कभी रुष्ट नहीं होते थे। यह सं १६०१ वि० से १६६० वि० तक जीवित रहे। यह भक्ति का उपदेश करते थे। दादू श्रीरामचंद्र के भक्त थे और उन पर उन्होंने बहुत से भजन बनाए हैं। ये संसार को असार और माया समझते थे जो त्यागने योग्य है, लिखा भी है :—

"माया बेलि विषै फल लागे तापर भूखु न भाई।"
"तन नहिं तेरा धन नहिं तेरा कहा रह्यो इहिं लागि।
दादू हरि बिनु क्यों सुख सोवै काहे न देखे जागि॥"
"जब मन लागै राम सों तब अनत काहे को जाइ।
दादू पाणी लूण ज्यों ऐसै रहै समाइ॥"

इस राम भक्ति और संसार की असारता का सर्वोत्तम रीति से उपदेश करने वाले महात्मा तुलसीदास इस समय संसार में उपस्थित थे।

दादू दयाल ने तो स्वयं कविता की ही इनके अनेक शिष्यों ने भी कविता की। हर्ष की बात है कि पंथ प्रवर्तकों ने भारतीय जनता और समाज का कई प्रकार से उपकार किया है। दादू जी के शिष्यों में सुंदरदास ने अच्छी कविता की है। ये एक महान् पुरुष थे जिनका वर्णन आगे आवेगा।

इस समय दो और भक्तों का उल्लेख कर देना उचित ज्ञात होता है। एक का नाम विट्ठल विपुल था। यह श्री कृष्ण के बड़े ही विख्यात और पूर्ण भक्त थे। दूसरे स्वामी गोकुल नाथ जी थे। ये गोस्वामी बिट्ठलनाथ के पुत्र थे। इन्होंने ब्रज भाषा में दो प्रसिद्ध गद्य ग्रंथ लिखे हैं एक चौरासी वैष्णवों की वार्ता और दूसरी दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता, जिनमें वैष्णव मत के ८४ और २५२ भक्तों का वर्णन है। इन ग्रंथों से उस समय के गद्य लेखन का पता तो लगता

ही है बहुत से भक्तों और भक्त कवियों का समय भी निश्चित होता है। इन पिता-पुत्र स्वामियों ने हिन्दी गद्य का भी बड़ा उपकार किया किन्तु इनका गद्य ब्रजभाषा में था। अब खड़ी बोली का गद्य भी लिखा जाने लगा। गंग ने खड़ी बोली का पहला ग्रंथ 'चंद छंद बरनन की महिमा' लिखा। उसके बाद जटमल नामक कवि ने गोरा बादल की कथा लिखी। इसमें विशेषतया खड़ी बोली पाई जाती है। जैसे :—

"घर घर में आनंद होता है कोई (किसी) घर में फ़क़ीर दीखता नहीं" "तिस वास्ते (इस वास्ते) गुरु कू (को) व (और) सरस्वती कू (को) नमस्कार करता हूँ।"

तुलसीदास

अब हमारे सामने एक ऐसे महाकवि का नाम आता है जिनकी कृति इस विश्व में अद्वितीय है। यह गोस्वामी तुलसीदास हैं। यह यदि केवल एक ही ग्रंथ रामचरित-मानस लिखे होते तब भी इनका स्थान सर्वोच्च ही रहता। यह मानस एक ऐसी महत्वपूर्ण रचना है कि इसका सामना संसार का कोई भी ग्रंथ नहीं कर सकता। हिन्दी और हिन्दुस्तान का भाग्य उदय हुआ कि गोस्वामी जी ने भारतवर्ष ही में जन्म लिया और हिन्दी में कविता की।

इनका जन्म बांदा ज़िला के एक ब्राह्मण कुल में सं० १५८९ वि० मे हुआ था। इन्होंने ९१ वर्ष की अवस्था पाई और अंत में सं० १६८० वि० में काशी के असी घाट पर श्री गंगा जी के तट पर शरीर त्याग किया। तुलसीदास रामानंदी मत के एक गुरु के शिष्य थे। इन गुरु जी का नाम नरहरिदास था और इन्हीं ने इनका नाम तुलसीदास रक्खा था। इसके पहले इनका नाम रामबोला था। (वह भी इनकी कृति के असंगत न था)। तुलसीदास होने के पहले यह अपनी स्त्री से बहुत ही अधिक प्रेम करते थे। उसी ने

इनसे एक बार कहा कि यदि आपका इतना प्रेम ईश्वर के प्रति होता तो आप सिद्ध हो जाते। रामबोला को बात लग गई। उसी समय से यह ईश्वर भक्त हो गए। बचपन ही से यह निर्धन थे। परिश्रम करके थोड़ी बहुत विद्या प्राप्त की किन्तु जान पड़ता है कि इन्होंने जो कुछ सीखा, पढ़ा या जाना वह साधुओं और महात्माओं की संगति का प्रभाव था। इसमें संदेह नहीं कि तुलसीदास पंडित, विद्वान् और विचारक थे। यह उनके एक ग्रंथ से टपकता है। यह अधिकांश सत्संगति ही का फल था। इन्होंने लिखा भी है :—

"मति कीरति गति भूति भलाई, जो चेहि जतन जहाँ जेहि पाई।
सो जानब सत्संग प्रभाऊ, लोकहु वेद न आन उपाऊ।"

तुलसीदास ने बहुत से ग्रंथ बनाए और भिन्न भिन्न ढंग के। यह राम के भक्त थे और उनका यशगान इन्होंने प्रायः सर्वत्र किया है। भिन्न भिन्न छंदों में और भिन्न भिन्न ग्रंथों में उन्होंने राम की कथा कही है जिनमें सब से बड़ा और प्रसिद्ध रामचरितमानस है। इसके अतिरिक्त कवितावली रामायण, गीतावली रामायण, छंदावली रामायण, पदावली रामायण, कुंडलिया रामायण, बरवै रामायण, मंगल रामायण, आदि रामायणों की रचना की है। कथा छोड़ कर भक्ति, ज्ञान और वैराग्य पर इनकी विनय पत्रिका, वैराग्य संपादिनी, ज्ञान को परिकरण, राम सतसई आदि ग्रंथ प्रसिद्ध हैं। इन्होंने हनुमान चालीसा आदि छोटी छोटी बहुत सी पुस्तकें भी बनाई हैं। कृष्ण पर भी इन्होंने कृष्ण गीतावली लिखी है।

गोस्वामी जी की रचनाओं का महत्व और श्रेष्ठता समझने के लिए कम से कम उनके दो ग्रंथों अर्थात् रामचरितमानस और विनय पत्रिका का परिचय आवश्यक है। विनय पत्रिका में उन्होंने

संसार की असारता तथा सांसारिक जीवन के अनिवार्य कष्टों का वर्णन किया है और यह दिखलाया है कि गर्भ में आने ही के समय से और मृत्यु पर्यंत मनुष्य बंधनों में घिरा है और कष्ट सहन करता है। इनसे मुक्ति पाने का केवल एक मात्र उपाय ईश्वर का भजन करना है। यह एक अमूल्य ग्रंथ है जिससे भक्ति ज्ञान और वैराग्य का उपदेश होता है। देखिये :—

"अब लौं नसानी अब ना नसैहौं।
राम कृपा भवनिसा सिरानी जागे फिरि न डसैहौं।
पायों नाम चारु चिन्ता मणि उर कर ते न खसैहौं॥
स्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी चित कंचनहि कसैहौं।
परबस जानि हंस्यो इन इन्द्रिन निज बसह्वै न हँसैहौं।
मन मधुकर पन करि तुलसी रघुपति पद कमल बसैहौं॥"

"श्रीरामचंद्र कृपालु भजु मन हरन भव भय दारुनं।
नव कंज लोचन कंज मुख कर कंज पद कंजारुनं॥

× × ×

इमि बदत तुलसीदास शंकर शेष मुनि मन रंजनं।
मम हृदय कंज निवास करु कामादि खलदल गंजनं॥"

"मन पछितैहैं अवसर बीते।
दुर्लभ देह पाइ हरि पद भजु करम बचन अरु हीते॥"

× × ×

"अब नाथहि अनुराग जागु जड़ त्यागु दुरासा जीते।
बुझै न काम अगिनी तुलसी कहुँ विषय भोग बहुघीते॥"

रामचरितमानस एक बिलकुल भिन्न प्रकार का ग्रंथ है।

रामायण

मुख्यतः यह रामचंद्र की जीवनी और कृति की कथा है जो शिव द्वारा पार्वती को तथा याज्ञवल्क्य

द्वारा भरद्वाज को सुनाई जारही है। भाषा इसकी प्रधानतः अवधी है किंतु इसमें अन्य भाषाएं भी सम्मिलित हैं। यह कथा अधिकतर चौपाई और दोहों में कही गई है किन्तु इसमें अन्य बहुत से छंदों का भी प्रयोग हुआ है। इसमें सात कांड या सप्त सोपान हैं और हर एक के आदि में संस्कृत में मंगलाचरण स्वरूप श्लोक लिखे गए हैं। सातों कांड में पहला दूसरा और सातवाँ अर्थात् बालकांड अयोध्याकांड और उत्तरकांड विशेष ध्यान देने योग्य हैं।

यह अपूर्व ग्रंथ एक अद्भुत रचना है जिसमें नाना प्रकार के विषयों का मनोहर संयोग है। कहा भी गया है :—

"रामायण अद्भुत फुलवारी, राम भ्रमर भूषित रुचि भारी।"

रामायण का प्रभाव और प्रचार

यह इतना लोकप्रिय है जितना संसार का कोई ग्रंथ नहीं। बड़े बड़े विद्वान् और महात्मा प्रति दिन प्रातःकाल अपना कर्तव्य समझ कर इसका पाठ करते हैं। हिन्दी भाषा भाषियों में निपढ़ से निपढ़ बिलकुल निरक्षर आदमी भी ऐसे मिलते हैं जिन्हें रामचरितमानस की चौपाइयां और दोहे बहुत से याद रहते हैं। गाँवों में रामायण की चर्चा बराबर हुआ करती है और 'करिया अक्षर भैंस बराबर' लोग भी इसका अर्थ अपने श्रोताओं को समझा लेते हैं। विद्वत् समाज में कुछ पुराने चाल के पंडितों को छोड़ कर जिन्हें हिन्दी भाषा तुच्छ मालुम होती है शेष सभी इसको अपना एक धर्म-पुस्तक समझते हैं। वर्तमान समय में तो यह ग्रंथ बंगाल और दक्षिण में भी बहुत फैल रहा है।

इस लोकप्रियता के अनेक कारण हैं। एक बड़ी मुख्य बात रामायण में यह है कि हर एक विचार के मनुष्यों के लिए यह हृदय-ग्राही है। कुछ लोग इसे उत्तम काव्य समझ के इसका आदर करते

हैं और कुछ इसे आदर्श जीवन के लिए उपयोगी समझ के पढ़ते हैं। साधु समाज इसे ज्ञान का भंडार समझता है। भक्तजन इसे भक्त शिरोमणि की भक्तिमयी रचना समझते हैं। साधारण जनता इसे सरल भाषा का एक परम उपयोगी ग्रंथ जानती है। ग्राम निवासी बात करते जाते हैं और बीच बीच में प्रसंगानुसार कोई चौपाई या दोहा उद्धृत करते रहते हैं। बालकों को इससे शिक्षा मिलती है। युवकों को इसमें रस मिलता है और वृद्धजनों को इससे शांति मिलती है। गवैया लोग भी इसका विशेष आदर करते हैं और चौपाई जैसे सरल छंद को भिन्न भिन्न राग से गाते हैं और श्रोताओं को मुग्ध कर देते हैं। यह भाषा और शब्द प्रयोग का गुण है।

इस साहित्यिक रचना को हम चार दृष्टि से देख सकते हैं—कथा की दृष्टि से, काव्य की दृष्टि से, धर्म और उपदेश की दृष्टि से और विचारों की दृष्टि से।

कथा

रामचरितमानस मुख्यतः कौशलेश दशरथ के पुत्र रामचंद्र की जीवन कथा है। उनका जन्म, विवाह, वन-गमन, रावण से युद्ध और फिर लौट कर राज्य करना—इन्हीं विषयों का वर्णन है। इस प्रधान कथा के साथ अन्य कथाएं भी सम्मिलित हैं, जैसे नारद मोह की कथा या प्रताप भानु की कथा इत्यादि। तुलसीदास का कथा कहने का ढंग बड़ा ही मनोहर है और उसमें एक बड़ी विशेषता यह है कि उसमें शिक्षा इस रीति से भरी है कि वह पाठक को नीरस उपदेश नहीं मालूम होती और सभी कथाएं आदर्श जीवन के लिए उपयोगी हैं। यों तो रामचंद्र की कथा पहले भी बहुत कही जा चुकी थी और भिन्न भिन्न भाषाओं में किन्तु तुलसीदास ने जिस ढंग से कहा है वह बड़ा ही सुंदर, सरस और ग्राह्य है।

काव्य की दृष्टि से यह ग्रंथ बहुत ही महत्वपूर्ण है और इसका अयोध्याकांड तो अनुपम ही है। तुलसीदास का चरित्र चित्रण मनोहर, स्वाभाविक और शिक्षाप्रद है। पिता-पुत्र प्रेम, भ्रातृसनेह, पतिभक्ति, पत्नीप्रेम और सेवकभाव का उच्च से उच्च आदर्श इन्होंने दिखलाया है। इनको पढ़ते समय हृदय का एक एक तार बज उठता है। इस रामायण में भरत जी का चरित्र अति प्रशंसनीय है, यहाँ तक कि स्वयं कवि ने कहा है:—

काव्य

"होत न भूतल भाव भरत को, अचर सचर चर अचर करत को"
"जो न होत जग जन्म भरत को, सकल धरमधुर धरनि धरत को"

भरत के चरित्र में इतना बल था।

इस भरत जी में इतनी भक्ति भरी थी कि कवि ने कहा है:—

"भरत सरिस को राम सनेही, जग जप राम राम जप जेही।"

चरित्र चित्रण के अतिरिक्त तुलसीदास ने संवाद और वर्णन बहुत अच्छे दिए हैं जिनकी तुलना अति कठिन है। वशिष्ठ और भरत जी का वार्तालाप; रामचंद्र और सीता का तथा केकई और मंथरा का तर्क वितर्क; रामचंद्र का लक्ष्मण को उपदेश; वर्षा और शरद का वर्णन; ज्ञान और विवेक का वर्णन इत्यादि बड़ा सुंदर, युक्तिपुष्ट, स्वाभाविक और आदर्श पूर्ण है। वंदना इनकी निसंदेह अतुल्य है और फुलवारी तथा सीय स्वयंबर पढ़ने ही की वस्तु है।

तुलसीदास ने जैसे भाव दर्शाए हैं बिलकुल वैसे ही शब्द भी रखे हैं। केवल पद पढ़ के पाठक बतला सकता है कि यह क्षेपक है या गोसांई जी का लिखा है। जब जैसा वर्णन आया झट शब्द भी वैसे ही हो गए। देखियेः—

"कंकण किंकिणि नूपुर धुनि सुनि, कहत लषण सन राम हृदय गुनि"
"सुनु सिय सत्य अशीश हमारी, पूजिहिं मन कामना तुम्हारी"
"नतरु बाँझ भलि बादि बियानी, राम विमुख सुत ते हितहानी"

"रे शठ सुनेसि स्वभाव न मोरा"
तथा "विश्व विदित क्षत्रिय कुल द्रोही"
"मो समान को पाप निवासी, जेहि लगि सीय राम बनबासी"
"हा जगदीश देव रघुराया, केहि अपराध बिसारेउ दाया"
"धरि गाल फारहिं उर विदारहिं गल अँतावलि मेलही"
"चिक्करहीं दिग्गज दशन गहि महि देखि कौतुक सुर हँसे"
"जइहौं अवध कवन मुख लाई, नारि हेतु प्रिय बंधु गँवाई"
"कट कटहिं मर्कट विकट भट तनु कोटि कोटिन धावहीं".

तुलसीदास ने उपमा, रूपक और अनुप्रास बहुत अच्छे कहे हैं। उपमा में इनका सामना संसार में केवल एक कालिदास ही कर सकते हैं। इनकी उपमाओं और रूपकों में यथार्थता और मनोहरता के अतिरिक्त एक भारी गुण यह है कि सुनते सुनते वे हृदयंगम हो जाते हैं। जैसेः

"लोचन जल रह लोचन कोना, जैसे परम कृपण कर सोना"
"लोचन मग रामहिं उर आनी, दीन्हें पलक कपाट सयानी"
"सुंदरता कहँ सुंदर करई छवि गृह दीप शिखा जनु बरई"
"जिमि पिपीलिका सागर थाहा"
"नवगयंद रघुवीर मन, राज अलान समान।
छूट जानि वन गवन सुनि, हृदय हर्ष अधिकान॥"
"सेवक कर पद नयन से, मुख से साहिब होय।"
"रामहिं चितइ चितइ महि, राजत लोचन लोल॥
खेलत मनसिज मीन युग जनु बिधु मंडल डोल।"
"राका शशि रघुपति पुरी, सिन्धु देखि हरषान॥
बढ़ेउ कोलाहल करत जनु, नारि तरंग समान।"

इनकी उपमाओं में एक दूसरी बड़ी विशेषता यह है कि इन्होंने सूक्ष्म या अमूर्त (abstract) वस्तुओं की उपमा देकर साधारण प्राकृतिक स्थूल या मूर्त (concrete) वस्तुओं का वर्णन किया है। किष्किंधा कांड में इसके उदाहरण भरे पड़े हैं। जैसे:—

"दामिनि दमकि रही घन माहीं, खल की प्रीति यथा थिर नाहीं"
"बुंद अघात सहैं गिरि कैसे, खल के बचन संत सह जैसे"
इत्यादि

इनसे कवि की कविता तो टपकती ही है, पाठकों को गूढ़ उपदेश सरस रीति से मिलता है और उनको उन सूक्ष्म वस्तुओं का भी ज्ञान हो जाता है। तुलसीदास को अवश्य ही सर्वश्रेष्ठ कवि मानना होगा।

धर्म और उपदेश

तुलसीदास ने भक्ति मार्ग का उपदेश किया है। वह भक्ति राम रूप ईश्वर की सेव्य-सेवक भाव से है। इसमें किसी प्रकार की अश्लीलता नहीं है और यह सदा उपयोगी रहेगी। वल्लभाचारी कवियों ने एक अश्लील साहित्य की धारा बहा दी जो अंत में चल कर हानिकारक हुई। दूसरी बात तुलसीदास के संबंध में यह ज्ञातव्य है कि इन्होंने अपनी रामायण में भिन्न भिन्न मतों का विचित्र, मनोहर और लाभदायक संयोग तैयार किया है। भक्ति और ज्ञान का अच्छा मिलान किया है। शैव और वैष्णव मतों को प्रायः एक ही कर दिया है। रामचरित मानस इस समय में भाषा भाषिओं का मुख्य धार्मिक ग्रंथ हो गया है। यह ग्रंथ बालक, युवा, वृद्ध, स्त्री, पुरुष सब के लिए शिक्षाप्रद है।

विचार

इन धार्मिक बातों के अतिरिक्त तुलसीदास ने भिन्न भिन्न विषयों पर अपने विचार भी प्रकट किए हैं। थोड़ा बहुत राजा और प्रजा का कर्तव्य भी बतलाया है

जो भारतीय विचार धारा के बिलकुल अनुकूल है। साहित्य के संबंध में इनका मत है कि जिस काव्य में राम का वर्णन नहीं है वह व्यर्थ है। एक स्थान पर इन्होंने काव्य की परिभाषा दी है जो यथोचित और सराहनीय है :—

" हृदय सिंधु मति सीप समाना, स्वाती शारद कहहिं सुजाना।
जो बरषै बर बारि विचारू, होहिं कवित मुक्ता मणि चारु।"

जाति भेद के संबंध में इनका मत है कि ब्राह्मणों को सदैव मानना चाहिये किंतु भक्ति मार्ग पर आ जाने से सब बराबर हो जाते हैं जैसे शबरी का उदाहरण। स्त्रियों को यह नीची दृष्टि से देखते थे, किंतु धर्म या भक्ति के शिखर पर चढ़ कर वे भी पूज्य और सराहनीय हैं जैसे सीता, अनुसूया, मंदोदरी इत्यादि। जीवन उत्तम बनाने के लिए गोसाईं जी का यह विचार है कि मनुष्य को सत्संगति करनी चाहिए। कहते हैं :—

" मुदमंगल मय संत समाजू, जो जग जंगम तीरथ राजू।"

× × ×

सुनि समुझहिं जन मुदित मन, मज्जहिं अति अनुराग।
लहहिं चारि फल अछत तनु, साधु समाज प्रयाग॥"

तुलसीदास के समकालीन छोटे बड़े बहुत से कवि थे, किंतु केवल गोस्वामी जी को छोड़ कर उस समय के सब कवियों में केशवदास का पद सर्वोच्च है। यह लगभग १६१२ वि० से लेकर १६७४ वि० तक जीवित रहे। महात्मा तुलसीदास से इनकी भेंट हुई थी और सुना जाता है कि उन्हीं के कहने से इन्होंने रामचंद्रिका नामक महाकाव्य ग्रंथ लिखा। यह ओड़छा के रहने वाले थे और वहाँ के दरबार में इनका विशेष आदर होता था। सम्राट अकबर के दरबारी बीरबल ने इनको एक छंद के लिए छ लाख रुपये देकर इनका आदर किया था।

केशवदास

केशवदास की भाषा है तो ब्रजभाषा किंतु उसमें संस्कृत बहुत मिली है जिससे तुलसीदास के असदृश वह बहुत कठिन हो गई है। इसके अतिरिक्त उसमें बुंदेल खंड़ी भाषा भी मिली है।

इनकी रचना के संबंध में दो तीन बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए। इन्होंने साथ आठ ग्रंथ बनाए जिनमें रामचंद्रिका, कवित-प्रिया और रसिक प्रिया सब से प्रसिद्ध हैं। रामचंद्रिका में रामचंद्र की कथा का वर्णन है। यह कथा अश्वमेध यज्ञ तक पहुँचाई गई है। यह ग्रंथ सवैया और घनाक्षरी इत्यादि कई छंदों में लिखागया है। केशवदास ने अपने इस महाकाव्य में परशुराम का वर्णन तथा धनुष यज्ञ और सीय स्वयम्बर का वर्णन बड़ा उत्कृष्ट किया है। परंतु यह गोसाईं जी की भांति भक्त न थे और रामचरित मानस और रामचंद्रिका में बड़ा अंतर हो गया है।

कवि प्रिया और रसिक प्रिया में कवि ने छंदों में कविता के दोष गुण, अलंकार और शृंगार रस का वर्णन किया है। कवि प्रिया में विशेषतः अलंकारों का और रसिक प्रिया में रसों का वर्णन है। इन ग्रंथों से कविता की अपेक्षा उनका पांडित्य अधिक टपकता है। केशवदास को साहित्य का आचार्य मानना चाहिए। ये संस्कृत के भारी विद्वान थे और इसमें संदेह नहीं कि जो कविता उन्होंने इन ग्रंथों में की है वह साधारण विद्वान कवि का काम नहीं है। कुछ लोगों ने यह मत प्रकट किया है कि केशवदास कवि नहीं थे बरन् आचार्य थे। वास्तव में वह आचार्य भी थे और कवि भी। रामचंद्रिका साधारण कवि की कृति नहीं हो सकती।

कवि प्रिया का एक छंद देखिये :—

" कोमल अमल चल चीकने चिकुर चारु,
चितयेते चित चक चौंधि मत केशौदास।

सुनहु छबीली राधा छूटे ते छुवै छुवानि,
कारे सटकारे हैं सुभाव ही सदा सुवास।"

इन्होंने अलंकारों का बहुत प्रयोग किया है। यह परिपाटी आगे चल कर विहारीलाल के हाथों में पड़ कर और पुष्ट होने वाली थी। यह श्रृंगार रस के बड़े कवि थे जैसा इनकी रसिक प्रिया से स्पष्ट है। इनकी विशेषता यह है कि यह वैष्णव सम्प्रदाय के भक्तों में से न थे और इनकी श्रृंगार रस की कविता और वैष्णव कवियों की श्रृंगार रस की कविता में बड़ा अंतर है। भक्ति तथा धर्म रहित श्रृंगार रस ने आगे चल कर उन्नति करके साहित्य को बहुत कुछ बिगाड़ दिया है।

केशवदास की गणना भी हिन्दी के सर्वोत्तम कवियों में होनी चाहिए, "उत्तम छंदों का इनके काव्य में बाहुल्य है"। किंतु इनकी रचना उतनी सरस और भावपूर्ण या सारगर्भित नहीं है। इनकी रचना कहीं कहीं बड़ी कठिन है और कठिनता से समझ में आती है, यहाँ तक कि इनकी कविता के संबंध में यह कहावत प्रसिद्ध है कि—

"कवि का दीन न चहै विदाई, पूछै केशव की कविताई।"
इनकी कविता तथा भाषा का उदाहरण देखिए :—

"सोहत मंचन की अवली गजदंत मई छवि उज्ज्वल छाई।
ईस मनौं बसुधा में सुधारि सुधाधर मंडल मंडि जुन्हाई॥
ता मँह केसवदास विराजत राजकुमार सबै सुखदाई।
देवन सों मिलि देवसभा मनु सीय स्वयंबर देखन आई॥"

"माखन सी जीभ मुख कंज सी कोमलता में,
काठ सी कठेठी बात कैसे निकरति है।"

" किधौं मुख कमल ये कमला की ज्योति होति,
किधौं चारु मुख चन्द्र चंद्रिका चुराई है।
किधौं मृग लोचनि मरीचिका मरीचि कैधौं,
रूप की रुचिर रुचि सुचि सों दुराई है।
सौरभ की सोभा की दसन घन दामिनी की
केसव चतुर चित ही की चतुराई है।
एरी गोरी भोरी तेरी थोरी थोरी हाँसी, मेरी
मोहन की मोहिनी की गिरा की गुराई है। "

भक्त कवि

तुलसीदास के समकालीन कवियों में कई एक ने भक्ति रस की कविता की है। अग्रदास ने राम भक्ति पर कविता लिखी है। इन्होंने छ सात ग्रंथ लिखे जिनमें एक का नाम श्रीराम भजन मंजरी है। यह जयपुर के रहने वाले थे और अच्छे कवि थे।

सुन्दरदास

दादू दयाल के एक प्रसिद्ध शिष्य सुन्दरदास थे जो वास्तव में बड़े सुन्दर थे। यह भी जयपुर के पास के रहने वाले थे और प्रसिद्ध योगी, बड़े भक्त और श्रेष्ठ कवि थे। यह अग्रदास के बहुत बाद हुए और इनका जन्म सं० १६५३ वि० में हुआ था। यह बाल्यावस्था ही से साधु हो गये थे। सुन्दरदास हिन्दी संस्कृत और फारसी के पूरे पंडित थे और वेद और दर्शन शास्त्र के भी अच्छे ज्ञाता थे। इन्होंने बहुत से ग्रंथ लिखे हैं और वेदांत विषयक अच्छी कविता की है। भाषा इनकी खड़ी बोली और पंजाबी मिली व्रजभाषा है। यह सेवक सेव्य भाव से भक्ति करते थे। अन्य बड़े भक्तों की भांति यह भी संसार को असार बतलाते हैं और सांसारिक जीवन को तुच्छ समझते हैं। कहते हैं :—

"देखहु दुरमति या संसार की।
हरि सो हीरा छाँड़ि हाथ तें, बाँधत मोट बिकार की॥
नाना विधि के करम कमावत, खबरि नहीं सिर भार की।
झूठे सुख में भूलि रहे हैं, फूटी आँख गँवार की॥
सुन्दरदास बिनस करि जैहै, देह छिनक में छार की॥"

इन्होंने पेट पर अच्छी और रोचक कविता की है :—

"कैधों पेट भूत कैधों प्रेत कैधों राकस है।
खाँव खाँव करै कहुँ नेक ना अघात है।
सुन्दर कहत प्रभु कौन पाप पायो पेट
जबते जनम लीन्हों तब ही ते खात है"॥

कृष्ण भक्तों में रसखान का नाम विशेष रूप से स्मरणीय है।

रसखान

जाति के यह मुसलमान दिल्ली के पठान थे किन्तु वास्तव में यह वैष्णव मत के भक्त और विट्ठलनाथ जी के शिष्य थे। २५२ वैष्णवों की वार्ता में इनका भी चरित्र दिया हुआ है। पहले इनका आचरण ठीक न था किन्तु वैष्णव हो जाने पर यह सुधर गये। इन्होंने शृंगार रस की बड़ी उत्तम कविता की है और प्रेम का बहुत ही उत्कृष्ट वर्णन प्रेम वाटिका नामक ग्रंथ में दिया है। इनका सुजान रसखान नामक ग्रंथ बड़ा प्रसिद्ध है। यह श्रीकृष्ण के आनंद में मग्न रहते थे और बहुत उच्च कोटि के कवि थे। वैष्णव संप्रदाय भी धन्य है जिसने एक मुसलमान को भी कृष्ण भक्ति का इतना उत्कृष्ट कवि बना दिया और उसको अपने में मिला लिया। इन्होंने लिखा है :—

"या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौं।
आठहू सिद्धि नवौ निधि को सुख नन्दकी गाय चराइ बिसारौं"॥

गदाधर भट्ट भी अच्छे कवि थे। यह चैतन्य महाप्रभु वाले गौड़ संप्रदाय के वैष्णव थे। राधावल्लभी संप्रदाय के एक आचार्य गोस्वामी श्रीहित लाल जी ने भी कई ग्रंथ बनाए। ये साधारण कवि थे परन्तु इनकी भाषा बड़ी मीठी है :—

"सुनु री सखी कदम तर ठाढ़ो मुरली मंद बजावै।
गनि गनि प्यारी गुनगन गावैं चितवत चितहिं रिझावै॥"

भक्त परिचय

कुछ महात्माओं ने भक्तों के वर्णन में अनेक ग्रन्थ लिखे। अनंतदास ने नामदेव और कबीर आदि का परिचय देते हुए आठ ग्रंथों की रचना की और फिर नाभादास जी ने भक्तमाल नामक प्रसिद्ध और बड़ा उपयोगी ग्रन्थ लिखा। नाभादास बड़े भारी भक्त थे इन्होंने अपने ग्रन्थ में बहुत से भक्तों ही का वर्णन अच्छे छंदों में दिया है। ये महात्मा अग्रदास जी के शिष्य थे और नारायणदास के नाम से भी प्रसिद्ध हैं। इनके बनाए हुए और भी ग्रन्थ मिले हैं और इन्होंने ब्रज भाषा में एक गद्य ग्रन्थ भी बनाया। इनके शिष्य प्रियादास ने भक्तमाल की टीका बनाई जिसमें उन भक्तों का यथायोग्य पूरा वर्णन दिया हुआ है जिनका वर्णन भक्तमाल में थोड़े में दिया है। ये दोनों गुरु-शिष्य बड़े भक्त और अच्छे कवि थे। भक्तमाल का एक वर्णन देखिए—यह मीराबाई का वर्णन एक छप्पय में दिया हुआ है :—

"सदृश गोपिका प्रेम प्रगट कलियुगहिं दिखायो।
निरअंकुश अति निडर रसिक जस रसना गायो॥
दुष्टनि दोष विचारि मृत्यु को उद्यम कीयो।
बार न बाँका भयो गरल अमृत ज्यों पीयो॥
भक्ति निशान बजाय कै काहूँते नाहिन लजी।
लोकलाज कुल शृंखला तजि मीरा गिरिधर भजी॥"

इस छप्पय की टीका दस कवित्तों में की गई है जिनमें मीरा के जन्म से उनके देहांत तक का विस्तृत वर्णन दिया हुआ है और विषपान इत्यादि का पूरा वर्णन किया है :—

"मेरतों जनमभूमि भूमि हित नैन लगे,
पगे गिरिधारीलाल पिताही के धाम में।
राना के सगाई भई करी व्याह सामानई,
गई मति बूड़ि वा रंगीले घनश्याम में॥

× × ×

सुनि विदा होन गई राय रणछोर जू पै,
छाँड़ौं राखौ हीन लीन भई नहिं पाइये॥"

अन्य विषय

अन्य विषयों पर भी इस समय के कवियों ने अच्छी कविता की। महाकवि केशवदास के बड़े भाई बलभद्र मिश्र भी अच्छे कवि थे। इन्होंने अच्छी उपमाओं के साथ शुद्ध ब्रजभाषा में नखशिख का एक उत्कृष्ट ग्रन्थ लिखा है। इसी एक ग्रन्थ के आधार पर इनको श्रेष्ठ कवि कह सकते हैं। इनका कवित्व देखिए :—

"लोचन सितासित में लोहित लकीर मानों,
बाँधे जुग मीन लाल रेसम के जाल में।"

इस समय नखशिख इत्यादि पर और भी ग्रन्थ निकले थे, जैसे ब्रजपति भट्ट आदि के लिखे हुए ग्रन्थ।

कुछ कवियों ने इतिहास ग्रन्थ भी लिखे। लालचंद ने इतिहास भाषा नामक ग्रन्थ लिखा जो हिन्दी में पहला इतिहास ग्रन्थ है। फिर एक ग्रन्थ ख्यात नाम का निकला जिसे किसी कवि ने महाराज उदैसिंह के नाम से बनाया था।

कुछ कवियों ने अपने तथा अन्य कवियों की रचनाओं के संग्रह भी निकाले जैसे नागरीदास और प्रवीन।

अनेक कवियों ने उपदेश संबंधी ग्रन्थ लिखे। बनारसीदास इस प्रकार के अच्छे कवि थे। इन्होंने जौनपुर में सं० १६४३ वि० में जन्म लिया था। जीवन के आदि भाग में इनका चरित्र ठीक न था किन्तु पीछे ये सुधर गए। इन्होंने भिन्न भिन्न छंदों में कविता की है और भिन्न भिन्न विषयों पर। इन्होंने अपना जीवन चरित्र भी लिखा है। बनारसीदास व्रजभाषा गद्य भी लिखते थे। रचनाएँ इनकी धर्मोपदेश पूर्ण हैं। शृंगार रस पर भी इन्होंने एक ग्रन्थ बनाया था, किन्तु उसे गोमती नदी के समर्पण कर दिया। इनके बाद उदयराज जैनजती ने राजनीति के संबंध में कुछ उपदेश किया।

घासीराम नामक कवि ने नीति और प्रेम आदि विषयों का वर्णन अच्छा किया है। ये उच्च कोटि के कवि थे और मनोहर कविता करते थे। खड़ी बोली में भी इन्होंने कुछ कविता की है। इसी समय में जटमल नामक कवि ने गद्य में गोरा बादल की कथा लिखी। इस गद्य में "महरबानगी" आदि फ़ारसी के शब्द आए हैं और "हुई" क्रिया के स्थान में "भई" का प्रयोग है, किन्तु "होता है" का भी प्रयोग हुआ है।

स्त्री कवि

इस समय की कुछ कविता करने वाली स्त्रियों के नाम भी प्रसिद्ध हैं, जैसे पद्मचारिणी और कल्याणी इत्यादि, किन्तु इनमें सब से प्रसिद्ध एक वेश्या थी जिसका नाम प्रवीण राय था और जो नृत्य गान आदि कलाओं में बड़ी निपुण थी। यह ओड़छा के महाराज इन्द्रजीत सिंह के यहाँ रहती थी। जब एक बार सम्राट अकबर ने उसे बुलाया था तो उसने इंद्रजीत से पूछा कि मैं क्या करूँ,

"जामैं रहै प्रभु की प्रभुता अरु मोर पतिब्रत भंग न होई।"

प्रवीणराय केशवदास की शिष्या थी और काव्य कला में निपुण थी।

मुसलमान कवियों में सब से प्रसिद्ध रसखान और रहीम थे जिनका वर्णन हो चुका है। उनके बाद कादिरबक्स और मुबारक ने भी अच्छी कविता की है। मुबारक हिन्दी, संस्कृत, फ़ारसी और अरबी के भारी विद्वान् थे। इनकी कविता चित्ताकर्षक है और इसमें अच्छे अच्छे रूपक इत्यादि मिलते हैं। भाषा इनकी सरस है। इसमें किसी किसी पद में फ़ारसी अरबी के शब्द भी आए हैं। कादिर बक्स की भी कविता अच्छी है। परंतु इनकी कविता वैसी सरस नहीं है। इनका एक पद कहावतों में भी आगया है।

मुसलमान कवि

"गुन ना हिरानो गुन गाहक हेरानो है"

एक उसमान नामक कवि ने भी कविता की। इन्होंने दोहा और चौपाई छंदों में एक प्रेम कहानी लिखी जिसका नाम चित्रावली है। उसके बाद ताहिर नामक कवि ने कुछ कविता की। इन्होंने एक कोकसार लिखा। शेख़नबी आदि ने भी कविता की गोलकुंडा का बादशाह भी कविता लिखता था।

इस काल के अन्य कवियों में लालनदास और अमरेश तथा मुक्तामणिदास और लीलाधर के नाम स्मरणीय हैं। मुक्तामणिदास की कविता स्वयं तुलसीदास को अच्छी मालूम हुई थी। लालनदास और अमरेश भी अच्छी कविता करते थे। लालनदास ने अनुप्रास अच्छा लिखा है।

अन्य कवि

जैन कवियों ने भी इस समय कुछ कविता की किन्तु वह बहुत साधारण श्रेणी की है। हरि विजयसूरि के शिष्य हेम विजय ने कुछ पद्य लिखे। रूप चंद ने दो ग्रंथ लिखे और मालदेव जैन ने भी दो ग्रंथ लिखे।

कुछ रासो भी लिखे गए जैसे माधवदास का गुणरामरासो और दयालदास का राणारासो।

ताहिर ने कोकसार लिखा था। मुकुंद दास ने एक कोक भाषा नामक ग्रंथ लिखा।

तीसरा प्रकरण

तुलसीदास के बाद से लल्लू जी लाल के पहले तक

(१७ वीं शताब्दी के आदि भाग के बाद से १८ वीं शताब्दी तक)

इस काल में बहुत से कवि हुए जिनमें तीन चार बहुत ही उच्च कोटि के थे जैसे बिहारीलाल, भूषण, मतिराम, और देव, किन्तु यदि हम इस काल को दो भागों में विभाजित करें तो ये सब बड़े कवि पहले ही भाग में आ जायंगे। क्योंकि दूसरे भाग में अर्थात् १८ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में उनके टक्कर का कोई कवि नहीं हुआ। बस देव के बाद से कविता गिरने लगी और हिन्दी कवियों की कवित्वशक्ति का ह्रास होने लगा। अतः इस काल को दो भागों में विभाजित कर सकते हैं—एक १८ वीं शताब्दी के मध्य तक और दूसरा उसके बाद।

पहला भाग

तुलसीदास के बाद से देव तक

(१७ वीं शताब्दी के आदि भाग के बाद से १८ वीं के मध्य तक)

गोस्वामी तुलसीदास ने सं० १६८० वि० में शरीर त्याग किया। इस समय भारत वर्ष में अकबर के पुत्र सम्राट जहाँगीर का शासन था और जहाँगीर के बाद शाहजहाँ का राज हुआ। ये दोनों सम्राट हिन्दू माताओं की संतान थे। इन्होंने शासन में अकबर ही का सा ढंग रखा और उदारता दिखलाई। साधारणतः देश में शान्ति फैली हुई थी; प्रजा सुखी थी; हिन्दू और मुसलमानों में

आपस में मेल रहता था और एक दूसरे का आदर करते थे। जब औरंगजेब का राज हुआ तो कुछ वर्षों तक तो पुरानी ही अकबर की चलाई नीति पर शासन चला किन्तु फिर औरंगजेब ने बिलकुल विपरीति नीति चलाई जिससे देश में अशांति फैलने लगी और स्थान स्थान पर मुग़ल साम्राज्य के विरुद्ध शक्तियां उठने लगीं। एक ओर मरहठों ने ऐसा विरोध खड़ा किया कि अंत में विजय प्राप्त कर के मुग़ल सम्राट को अपने वश ही में कर लिया। यह दशा तो औरंगज़ेब के बहुत बाद हुई किन्तु उसके समय में भी छत्रपति शिवाजी ने राजा होकर हिन्दू जाति को बड़ा प्रोत्साहित किया और उस समय एक नई जागृति पैदा हो गई। दूसरी ओर राजपूताने में राजाओं ने औरंगज़ेब की नीति का कट्टर विरोध किया और बहुत कुछ सफलता भी प्राप्त की। मध्य भारत में छत्रशाल आदि राजाओं ने बड़ी वीरता दिखलाई। उत्तर में सिक्खों ने धार्मिक और राजनैतिक आंदोलन बड़े ज़ोर का खड़ा किया।

ऐसे काल में भिन्न भिन्न प्रकार के साहित्य का विकास अथवा वृद्धि हुई किन्तु मुख्यतः वीर रस और शृंगार रस का काव्य उत्कृष्टता को पहुँचा। हिन्दू जागृति, धर्म का उत्साह और व्यापक सफलता ने वीर साहित्य उत्पन्न किया। शताब्दियों से भारत वर्ष ने अपने को मुसलमानों द्वारा पराजित स्वीकार कर रखा था वह विचार अब दूर होने लगा और नया उत्साह बढ़ने लगा। भूषण की रचना यह सब दर्शाती है।

दूसरी प्रबल धारा शृंगार की रही। अकबर ही के समय से केशव आदि ने भक्ति शून्य शृंगार रस की कविता लिखना प्रारम्भ कर दिया था, किन्तु इस समय में इस ढंग की कविता परमोत्कृष्टता को प्राप्त हुई। बिहारी इत्यादि कुछ कवियों में कुछ कृष्ण भक्ति की धारा प्रवाहित थी, किन्तु अधिकांश कवि केवल

श्रृंगारी ही थे। इस श्रृंगार के साथ काव्य रचना अथवा काव्य कला और काव्य कौशल की ओर कवियों ने अधिक ध्यान दिया; शब्दों का सौंदर्य और माधुर्य, उनकी रसपूर्ण और भावगर्भ योजना और उनके अर्थ बाहुल्य का समय आया; अलंकारों की भरमार होने लगी। आरम्भ में तो यह विशेषता भाव तथा अर्थ के अन्य गुणों के साथ साथ थी, किंतु आगे चलकर बस शब्दों और अलंकारों ही पर ज़ोर दिया जाने लगा। शब्द मानो सजाए जाने लगे और कविता अलंकृत की जाने लगी।

यह स्मरण रखना चाहिए कि वह काल ही कला का था। संगीत में, साहित्य में, चित्रकारी में अथवा स्थापत्य में चारों ओर कला की प्रधानता थी—सुंदरता की सब जगह पूछ गछ थी; सुंदर सुंदर महल बनवाए गए; सुंदर चित्र खींचे गए; साहित्य भी इसी के अनुरुप था, और काव्य कला के सर्व श्रेष्ठ ककि बिहारी लाल हुए। इस प्रकार के साहित्य में नायिका वर्णन, नखशिख वर्णन, षटऋतु वर्णन इत्यादि बड़े मनोहर हैं। एक बात और भूलनी न चाहिए। हिन्दू मस्तिष्क की यह विशेषता है कि जिस विषय पर वह विचार करता है उसको तार्किक या नैयायिक अंतिम सीमा तक पहुंचा देता है। यह बात भारत के एक एक अनुष्ठान से प्रकट है। दार्शनिक विचार, धार्मिक विचार, वैराग्य, सेवा, पातिव्रत, कर्तव्य, भक्ति, तपस्या इत्यादि सभी से इसका समर्थन होता है। साहित्य में भी यही बात दीख पड़ती है। कृष्ण संप्रदाय के कवियों की रचनाएं, तुलसी दास की रचनाएं, उधर कबीर दास की रचनाएं, इधर बिहारी देव, पद्माकर आदि की रचनाएं दृष्टांत स्वरूप हैं।

इस कलापूर्ण कविता काल में काव्य कला ही पर बहुत से ग्रंथ लिखे गए। अलंकारों और रसों इत्यादि का विस्तृत और

यथार्थ वर्णन किया गया। अन्य विषयों पर भी कविता की गई किंतु उनका प्राधान्य नहीं है। भक्त कवि भी इने गिने हुए किंतु वे इतने उच्च कोटि के न थे।

अब एक दो और बातों पर ध्यान देना चाहिए। भारत वर्ष में प्राचीन काल से ही राजाओं और महाराजाओं के यहाँ कवियों का सम्मान या पालन पोषण होता था। इस समय में भी मुग़ल सम्राट से लेकर बूंदी और कृष्णगढ़ आदि तक के राजाओं ने कवियों को आश्रय और सहायता देके उत्साहित किया। इसके अतिरिक्त उस समय के बहुत से प्रसिद्ध राजा सुकवि थे। इन कारणों से इस काल में बहुत ही अधिक कवि हुए और उच्च श्रेणी के कवि भी गणना में इस काल में सबसे अधिक हुए और इन कवियों ने भिन्न भिन्न विषयों पर अपनी लेखनी सफलता पूर्वक चलाई। भाषा इस समय की अधिकांश में ब्रज रही और वह भी बड़ी सुन्दर मनोहर और अलंकृत थी। देव आदि की भाषा ऐसी श्रुतिमधुर है जैसे देखने में पवन से लहलहाते हुए धान इत्यादि के पौधे।

इस काल में इतने अधिक और इतने बड़े बड़े कवि हुए कि सुगमता से उनका वर्णन करने के लिए इस काल को और छोटे छोटे भागों में विभाजित करना आवश्यक है। इसको तीन विभागों में बांटना उचित जान पड़ता है—पहले में महाकवि सेनापति, बिहारी लाल, मतिराम और अन्य समकालीन कवियों का वर्णन होगा, दूसरे में भूषण और उनके समकालीन कवियों का वर्णन होगा और तीसरे में देव और उनके समकालीन कवियों का।

सेनापति

प्रथम विभाग में सूरदास और तुलसी दास की प्रवाहित धारा में अभी कुछ बल था जो धीरे धीरे कम होता गया। आरम्भ ही में सेनापति बड़े भारी भक्त और

ऋषि हुए जिन्होंने बड़ी अच्छी कविता की। इनका सब से प्रसिद्ध ग्रंथ कवित्तरत्नाकर है। एक दूसरा ग्रंथ काव्यकल्पद्रुम नामक है। कवित्तरत्नाकर में कई विषयों पर कविता की गई है। एक खंड (तरंग) में शृंगार रस की कविता है; एक में षट्ऋतु का वर्णन है; एक में रामायण की कथा है और एक में भक्ति रस की कविता है। फिर और विषय भी हैं। इनकी कविता स्वतंत्र रूप की होती थी और इनके बहुत से विचार भी स्वतंत्र होते थे। प्रकृति का वर्णन इन्होंने बड़े उत्कृष्ट रूप से किया है और विशेषतः इनका षट्ऋतु वर्णन सराहनीय है। केवल देव को छोड़ कर और सब हिन्दी कवियों की अपेक्षा इन्होंने षट्ऋतु का वर्णन अच्छा किया है। शरद् ऋतु के वर्णन में लिखते हैं :—

"कातिक की राति थोरी थोरी सियराति सेना-
पति को सुहाति सुखी जीवन के गन हैं।
फूले हैं कुमुद फूली मालती सघन वन,
फूलि रहे तारे मानौ मोती अनगन हैं॥

उदित बिमल चंद चाँदनी छिटकि रही,
राम कैसो जस अध ऊरधगगन है।
तिमिर हरन भयो सेत है बरन सब।
मानहुँ जगत छीर सागर मगन है॥"

इनकी भक्ति राम और कृष्ण दोनों की थी किंतु विशेषतः राम की ही। रामायण तो इन्होंने लिखी ही थी फिर यह भी लिखा कि काशी जाकर "शंकर सों राम नाम पढ़िबे को मन है"। जीवन की संध्या में ये महाशय वैराग्य और सन्यास की ओर बहुत झुके। ये दरिद्र न थे किंतु संसार को असार समझते थे और माया मोह का जीवन दुखपूर्ण समझते थे। इनका विचार होता था कि सब

छोड़ छाड़ के वृंदावन में बैठ रहें। कदाचित इन्होंने ऐसा किया भी। कहते हैं :—

" आवै मन ऐसी घरबार परिवार तजौं,
डारौ लोक लाज के समाज विसराय कै।
हरिजन पुंजनि में वृन्दावन गुंजनि मैं,
रहौं बैठि कहुँ तरवर तर जाय कै॥"

सेनापति एक बड़े ही उत्कृष्ट कवि थे। इनकी भाषा बड़ी सजीव, सुंदर, अलंकृत और अतिमधुर शुद्ध ब्रजभाषा थी। केवल कहीं कहीं प्राकृत के शब्द आए हैं। अलंकारों में उपमा, रूपक, श्लेष, यमक और अनुप्रास का इन्होंने बाहुल्य रखा है और इनका प्रयोग भी बहुत अच्छा किया है। इन्होंने अपनी भाषा कहीं कहीं जान बूझ कर कठिन करदी है जिससे मूर्ख लोग न समझ सकें। यह सोच बिचार के और चुन चुन के छंद लिखते थे जिससे इनकी कविता के प्रायः सभी छंद उत्कृष्ट हैं।

अन्य भक्त तथा ज्ञानी कवि

महाकवि सेनापति के समकालीन एक ध्रुवदास नामक अच्छे कवि थे। ये हित हरिवंश जी के शिष्य थे। अतः इनकी कविता बड़ी भक्ति और श्रृंगार पूर्ण है। इस में पुराने वैष्णव संप्रदाय की कविता की झलक मिलती है। इनकी भाषा मनोहर शुद्ध ब्रजभाषा और कविता सरस है। श्रीकृष्ण की लीलाओं का इन्होंने अच्छा वर्णन दिया है। ये रासलीला के प्रेमी थे और ब्रजलीला, दानलीला इत्यादि ग्रंथ भी लिखे। अन्य भक्त तथा वैष्णव कवियों या ज्ञान इत्यादि पर कावता करने वालों में मलूकदास, नरहरि दास तथा व्यास जी और प्राणनाथ के नाम स्मरणीय हैं। इनमें प्रथम दो अच्छे कवि थे और दूसरे दो मत-प्रवर्तक और धर्म-प्रचारक थे। मलूक दास ने एक

मलूक रामायण लिखी। इनके लिखे और भी ग्रंथ मिले हैं। मलूक दास की साखी का यह दोहा बड़ा प्रसिद्ध है :—

" अजगर करै न चाकरी, पंछी करै न काम।
दास मलूका यों कहै, सबके दाता राम॥"

कविता इनकी ज्ञान पूर्ण, सरस और मनोहर होती थी। इसी समय के लगभग एक और बड़ी अच्छी रामायण महाकवि भूषण के बड़े भाई चिन्तामणि त्रिपाठी ने लिखी और मानदास ब्रजवासी ने रामचरित्र लिखा और रायचंद ने सीताचरित्र। नरहरिदास ने रामचरित्र कथा, अवतार चरित्र, दशम स्कंध भाषा और बानी इत्यादि ग्रंथ लिखे। इन्होंने उत्तम कथाएं अच्छे ढंग से और अनुरूप छंदों में कही हैं। भाषा इनकी अच्छी, मधुर और संस्कृत मिश्रित है। व्यास जी मथुरा के रहने वाले थे और इन्होंने हरि व्यासी मत चलाया। श्री महाबानी और नीति के दोहे इत्यादि इनके ग्रंथ हैं। प्राण नाथ जी बड़े प्रसिद्ध साधु और भक्त थे और पन्ना में रहते थे। इन्होंने हिन्दू मुसलमानों को मिलाने के लिये एक मत चलाया। इन्होंने ब्रह्म बाणी, प्रगटबानी और कयामतनामा इत्यादि ग्रंथ लिखे। स्पष्ट है कि इन्होंने फारसी के शब्दों का बहुत प्रयोग किया है। इनकी धर्मपत्नी इंदामती भी कवि थीं। एक जैनी कवि लूण सागर ने ज्ञान विषयक एक ग्रंथ बनाया।

इसी समय के लगभग सबल सिंह चौहान ने भी कविता की इन्होंने पाँच ग्रंथ बनाए जिनमें महाभारत सबसे प्रसिद्ध है। जिस प्रकार तुलसी दास ने रामायण लिखी उसी प्रकार इन्होंने महाभारत लिखी। एक चौपाई देखिये :—

" धन्य धन्य अभिमनु गुन आगर, सब क्षत्रिन महँ बड़ो उजागर "

यह बहुत बड़ा ग्रंथ दोहा और चौपाइयों में लिखा है। यों तो इन्होंने १८हों पर्व लिख डाला है किंतु उन्हें क्रमशः नहीं लिखा,

यहाँ तक कि पहले भीष्म पर्व ही लिखा। इन्होंने यह ग्रंथ बनाकर हिन्दी की सेवा अवश्य की किंतु इसमें कोई उच्च कोटि का कवित्व नहीं है।

इन कवियों के अतिरिक्त स्वामी चतुर्भुज दास, दामोदर स्वामी, माधुरी दास, सरस दास और अनन्यशीलमणि और ताज ने भी इस ढंग की कविता की है। इनमें दामोदर स्वामी, माधुरीदास सरसदास और ताज की कविता प्रधानतः कृष्ण संबंधी है। दामोदर स्वामी ने रास लीला, रासविलास, भक्ति सिद्धान्त इत्यादि ग्रंथ बनाए। दामोदरदास नामक एक और कवि और गद्य लेखक इनके बाद हुए। दामोदरदास के पद्य शिक्षा प्रद हैं। उन्होंने राजपूतानी गद्य में मार्कंडेय पुराण का अनुवाद किया। माधुरीदास राधा-वल्लभी थे। इन्होंने श्रीकृष्ण की लीलाओं का वर्णन और उनका यशगान कई छोटे छोटे ग्रंथों में किया है जैसे श्रीराधारमण बिहारी माधुरी, बृंद्रावन केलि माधुरी, मानलीला इत्यादि। सरसदास भी साधारण कवि थे किंतु ताज की कविता बहुत अच्छी होती थी। यह मुसलमान स्त्री थी जो कृष्ण जी की बड़ी भक्त थी। यह कृष्ण चंद के रूप और प्रेम में मग्न रहती थी और उन्हीं को अपना इष्ट समझती थी।

" नंद के कुमार कुरबान ताड़ी सूरत पै,
तौंड़ नाल प्यारे हिन्दूवानी हो रहूँगी मैं।
" नंद जू का प्यारा जिन कंस को पछारा, वह
बृंदावन वारा कृष्ण साहेब हमारा है॥

ताज की भाषा अन्य कृष्ण भक्तों की भाँति ब्रज न होकर खड़ी बोली थी जिसमें पंजाबी बहुत मिली थी। इसमें फ़ारसी के बहुत शब्द आए हैं। बहुत खेद है कि इस स्त्री के जीवन के संबंध में कुछ ज्ञात नहीं है।

स्वामी चतुर्भुजदास दूसरे हैं, पहले चतुर्भुजदास श्री विट्ठलदास जी के शिष्य अष्टछाप में से थे। इन्होंने धर्म विचार, भक्त प्रताप और हित उपदेश इत्यादि तेरह चौदह ग्रंथ बनाए। अनन्य शील-मणि ने सीता और राम का भी वर्णन राधा और कृष्ण की भाँति श्रृंगार रस में किया। यह राम भक्तों की प्रथा के अनुकूल नहीं है।

बिहारीलाल

इस विभाग के श्रृंगार रस के कवियों में बिहारी और मतिराम सर्वश्रेष्ठ हैं और इन दोनों महाकवियों की गणना हिन्दी नवरत्नों में होती है। महाकवि बिहारीलाल की जीवन कथा निश्चित रूप से नहीं ज्ञात है। यह बात प्रायः सभी हिन्दी कवियों के संबंध में कही जा सकती है। अनुमान से ये माथुर ब्राह्मण थे और इनका जन्म ग्वालियर के पास हुआ था। ये बचपन में बुंदेलखंड में रहे। फिर विवाह होने के बाद मथुरा में रहने लगे जहाँ इनकी ससुराल थी। मिर्ज़ा राजा जैसिंह जो औरंगज़ेब के समय में जैपूर के महाराजा थे इन पर विशेष कृपा रखते थे।

बिहारीलाल द्वारा रचित आज कल केवल एक ही ग्रंथ प्राप्त है जो विहारी सतसई के नाम से प्रसिद्ध है। कहा नहीं जा सकता कि इन्होंने वास्तव में इतना ही लिखा या और कुछ भी लिखा था जो किसी कारण से अब लुप्त हो गया है। किंतु केवल एक सतसई ही के आधार पर इनको हिन्दी के सर्व श्रेष्ठ कवियों में एक उच्च पद मिला है।

सतसई

सतसई मुख्यतः श्रृंगार रस का ग्रंथ है जिसमें प्रेम, प्रेम केलि, विरह आदि विषयों का सुंदर वर्णन है। देखिये :—

"जाति मरी बिछुरी घरी जल सफरी की रीति।
खिन खिन होति खरी खरी अरी जरी यह प्रीति ॥"

"बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाय।
सौंह करै भौंहनि हँसै देन कहै नटि जाय॥"

इनके वर्णनों में कहीं कहीं अश्लीलता भी आगई है। किंतु यह स्मरण रहे कि भक्ति और वैराग्य वाली धारा सतसई में भी बहती है। सूरदास और तुलसीदास की भाँति विहारीलाल ने भी कृष्ण और राम से विनय की है। जैसे :—

"कीजै चित सोई।तरे जिहिं पतितनु के साथ।
मेरे गुन अवगुन गननु गनौ न गोपीनाथ॥"

शृंगार और भक्ति वैराग्य के अतिरिक्त सतसई में कुछ ऐसे दोहे हैं जो मनुष्यों के व्यवहार, संसार की गति और उपदेश से संबंध रखते हैं। इस ग्रंथ के सभी विषयों के दोहे परमोत्कृष्ट हैं। बिहारीलाल ने संस्कृत के पदों के भाव पर भी बहुत से दोहे कहे हैं। यह निर्भय रूप से कहा जा सकता है कि बिहारी जैसे अर्थपूर्ण, भाव दर्शक, सुगठित और अलंकृत दोहे किसी ने नहीं कहे। इन्होंने जो प्रकृति और मानव प्रकृति का वर्णन किया है वह बहुत ही श्रेष्ठ, स्वाभाविक और चित्ताकर्षक है। इनकी निरीक्षण शक्ति बहुत प्रबल थी और यह मनुष्यों को खूब समझते थे। कहते हैं :—

"नरकी अरु नल नीर की।गति एकै करि जोइ।
जेतौ नीचौ ह्वै चलै ते तौ ऊँचौ होइ॥"
"जपमाला छापैं तिलक सरै न एकौ काम।
मन काँचै नाचै वृथा साँचै राँचै राम॥"

सतसई की भाषा विशेष ध्यान देने योग्य है। इसमें कई गुण हैं। एक तो यह मधुर ब्रज भाषा है जिसमें बुन्देलखंडी भी मिली हैं। दूसरे इसमें उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, मीलित श्लेष आदि बहुत से अलंकार बड़ी सुंदरता के साथ भरे हुए हैं। तीसरे थोड़े शब्दों में अधिक अर्थ भर देना बिहारी का विशेष गुण है। इन्होंने शब्द ऐसे

ढूँढ़ ढूँढ़ कर रखे हैं जिनसे हृदय के सामने एक पूरा चित्र खड़ा हो जाता है। इन सब कारणों से यह ग्रंथ बहुत कठिन हो गया है और इस पर अनेकों टीकाएँ टिप्पणियाँ लिखी जा चुकी हैं। कुछ प्रसिद्ध कवियों ने भी इसकी टीकाएँ लिखी हैं और एक टीका संस्कृत में भी है। पाश्चात्य समालोचकों ने भी इस ग्रंथ की बड़ी प्रशंसा की है। इसे काव्य कला का परमोत्तम ग्रंथ मानते हैं। बिहारी की काव्य रचना देखिये :—

"जोग जुगुति सिखयै सबै मनो महामुनि मैन।
चाहत पिय अद्वैता कानन सेवत नैन॥"

"सोहत ओढ़ैं पीतपट श्याम सलौने गात।
मनौ नील मनि सैल पर आतप परयो प्रभात॥"

"मानहु विधि तन अच्छ छबि स्वच्छ राखिबे काज।
दृग पग पोंछन को किए भूषन पा अंदाज॥"

बिहारी के बाद के बहुत से कवियों ने इसका असफल अनुकरण किया।

मतिराम

महाकवि मतिराम बिहारीलाल के समकालीन थे। ये भाषा के बड़े भारी आचार्य भी समझे जाते हैं। मतिराम महाकवि भूषण के भाई और कानपूर ज़िला के रहने वाले थे। इन्होंने शुद्ध और बड़ी मधुर ब्रजभाषा में कविता की है। पहले यह बूँदी नरेश महाराज राव भाऊसिंह के यहाँ थे और उनकी प्रशंसा में इन्होंने अपना अलंकार का प्रसिद्ध ग्रंथ ललित-ललाम बनाया। फिर उसके बाद यह राजा शम्भूनाथ सुलंकी के यहाँ रहे और उनके नाम पर इन्होंने छंदसार पिंगल नामक ग्रंथ बनाया। इनके दो और बड़े प्रसिद्ध ग्रंथ रसराज और मतिराम सतसई हैं।

मतिराम एक बड़े ही उच्चकोटि के कवि थे। यह मनुष्य प्रकृति का वास्तविक वर्णन करने में बड़े सफल रहे। इनका नायिका भेद वर्णन बड़ा ही उत्कृष्ट है। इनके कुछ दोहे बिहारीलाल के दोहों के समान हैं। मतिराम की भाषा बड़ी मनोहर है। यह बिहारी जैसी अर्थ पूर्ण या अलंकृत तो नहीं है किंतु उससे अधिक सुंदर और मधुर है। इन्होंने और अलंकारों का तो कम प्रयोग किया है किंतु उपमाएँ बड़ी अच्छी दी हैं। भाषा के सौंदर्य में देव के बाद इन्हीं की गणना होनी चाहिए। भाषा की सुंदरता देखिये :—

"ता बन के बीच कोऊ संग ना सहेली कहि,
कैसे तू अकेली दधि बेचन को जाति है।"

"वा मुखकी मधुराई कहा कहौं मीठी लगै अँखिआनि लोनाई"

"कुंदन को रंग फीको लगै झलकै अति अंगनि चारु गोराई।
आँखिन मैं अलसानि चितौनि मैं मंजु बिलासन की सरसाई॥
को बिनु मोल बिकात नहीं मतिराम लखे मुसुकानि मिठाई।
ज्यों ज्यों निहारिये नेरे ह्वै नैननि त्यों त्यों खरी निखरै सुनिकाई॥"

इनकी कविता सरल और शैली साधारण है जिसमें भाषा और भाव साथ साथ चलते हैं। परमोत्कृष्ट कवियों में भाषा की अपेक्षा अर्थ और भाव अधिक होते हैं और स्पष्ट अर्थ अन्य अस्पष्ट बातों को सूचित करते हैं। यह गुण विहारीलाल में पाया जाता है। शृंगार रस के अतिरिक्त इन्होंने वीररस की भी कविता की है जिसके उदाहरण ललित ललाम में मिलेंगे, किन्तु वीर रस की कविता को अभी भूषण की बाट देखनी थी।

कवि के अतिरिक्त मतिराम भाषा-आचार्य भी थे। ललित ललाम में इन्होंने अलंकारों का बड़ा विशद वर्णन दिया है और उनको सुगमता पूर्वक उदाहरण देकर समझाया है। रसराज में भाव भेद वर्णित है। इसका नायिका भेद अंश बड़ा ही उत्कृष्ट है।

इसमें भी बड़े अच्छे उदाहरण सुस्पष्टता से दिए हुए हैं। नायिका भेद का एक छंद देखिए :—

"साँचि विरंचि निकाइ मनोहर लाजति सूरतिवन्त बनाई।
तापर तो बड़ भाग बड़े मतिराम लसै पति प्रीति सुहाई॥
तेरे सुशील सुभाव भटू कुल नारिन को कुल कानि सिखाई।
नेही जने पति देव तके गुण गौरि सबै गुण गौरि पढ़ाई॥"

फिर छंद सार पिंगल और साहित्यसार इत्यादि भी इन्होंने लिखे हैं।

चिंतामणि

इस समय शृंगार रस के कवि और भाषा के आचार्य अर्थात् अलंकार, रस, छंद आदि पर कविता करने वाले बहुत से कवि हुए। मतिराम के एक भाई चिंतामणि त्रिपाठी थे जिन्होंने बड़ी अच्छी कविता की है। शाहजहाँ बादशाह के दरबार में और अन्य अन्य दरबारों में इनका बड़ा सम्मान था। यह नागपूर से भोंसला राजा के यहाँ भी बहुत दिन तक रहे। इन्होंने भिन्न भिन्न विषयों पर कविता की है। भाषा इनकी मुख्यतः मधुर और शुद्ध ब्रजभाषा है जिसमें अनुप्रास का बहुत अच्छा प्रयोग किया है। इनका एक प्रसिद्ध ग्रंथ कविकुलकल्पतरु है। इसमें इन्होंने काव्य, अलंकार, रस, भाव और दोष गुण इत्यादि का विस्तृत वर्णन किया है। इसके अतिरिक्त काव्य विवेक और काव्य प्रकाश भी बनाया। पिंगल पर इनका बनाया हुआ एक वृहत् ग्रंथ छंद विचार है। इन्होंने कवित्त आदि छंदों में एक अच्छी रामायण भी लिखी। इनके और ग्रंथ भी मिले हैं। ये मुख्यतः शृंगार रस के कवि थे।

जसवंतसिंह

चिंतामणि के थोड़े दिनों बाद महाराज जसवंत सिंह भाषा के प्रसिद्ध आचार्य हुए। यह बड़े अच्छे कवि भी थे और शाहजहाँ और औरंगजेब के समय में मारवाड़

के महाराज थे। ये मुग़लों की ओर से कई लड़ाइयाँ भी लड़े। इनका अलंकार ग्रंथ भाषा भूषण वास्तव में भाषा भूषण ही है। इसमें पहले भाव भेद का वर्णन है किंतु उदाहरण नहीं दिए गए हैं। उसके बाद अलंकारों का वर्णन है। यह वर्णन बहुत ही उत्तम है और उदाहरण भी अच्छे दिए गए हैं। व्यतिरेक और अवज्ञा की परिभाषा और उदाहरण देखिये :—

"व्यतिरेक जु उपमान तें उपमेयाधिक देखि।
मुख है अंबुज सों सखी मीठी बात बिसेखि॥"
"होत अवज्ञा और के लगै न गुन अरु दोष।
परसि सुधाकर किरन कों खुलै न पंकज कोष॥"

इस ग्रंथ के अतिरिक्त इन्होंने अन्य ग्रंथ भी लिखे जो वेदांत विषयक हैं जैसे उपरोक्त सिद्धान्त, सिद्धांत सार, इत्यादि।

तोष

भाषा के आचार्यों में तोष कवि भी माननीय हैं। इनका सब से प्रसिद्ध ग्रंथ सुधानिधि है जिसमें इन्होंने रस भेद और भाव भेद का बड़ा ही उत्कृष्ट वर्णन किया है और उदाहरण भी बहुत अच्छे दिये हैं। इसमें नायिका भेद का वर्णन बड़ा ही प्रशंसनीय है। आगतपतिका नायिका का वर्णन देखिए :—

"पैजनी चढ़ाइ चोंच सोन में मढ़ाइ दैहौं,
कर पर लाइ पर रुचि सों सुधारिहौं।
कहै कवि तोष छिन अटक न लैहौं कबौं,
कंचन कटोरे अच्छा खीर भरि धरिहौं॥
एरे कारे काग तेरे सगुन संजोग आज,
मेरे पति आवैं तो बचन ते न टरिहौं।
करती करार तौन पहिले करौंगी सब,
आपने पिया को फिरि पीछे अंक भरिहौं॥"

इनकी रचना भावपूर्ण और शैली अच्छी है। इन्होंने एक ग्रंथ नखशिख भी लिखा है और इनका एक तीसरा ग्रंथ विनय शतक भी मिला है। तोष कवि इलाहाबाद ज़िला के रहने वाले थे। कुछ लोगों ने इनको तोष निधि लिखा है। किंतु तोष निधि नामक एक दूसरे कवि प्रतीत होते हैं जो बहुत पीछे हुए। तोष का एक छंद देखिये :—

"श्री हरि की छवि देखिबेको अँखियाँ प्रति रोमन में करि देतो।
बैनन के सुनिबे कहँ श्रौन जितै तित सो करतो करि हेतो॥
मो ढिग छोड़ि न काम कछू कहि तोष यहै लिखितो विधि एतो।
तौ करतार इती करनी करिकै कलि में कल कीरति लेतो॥"

नायिका भेद और नखशिख

इस समय नायिका भेद तथा नखशिख आदि लिखने की परिपाटी सी पड़ गई। नायिका भेद में स्त्रियों अर्थात् प्रेमिकाओं की अवस्था, दशा, गुण इत्यादि के अनुसार श्रेणी बद्ध करते हैं और उनके लक्षण बतलाते हैं। नख शिख में स्त्री या पुरुष के अंग प्रत्यंग का वर्णन करते हैं और उनकी शोभा दिखलाते हैं। इन विषयों पर इस काल में बड़े छोटे सभी कवि कविता करने लगे। ऐसी कविता में अनुप्रास या यमक आदि अलंकार बहुत मिलते हैं। ग्वालियर के रहने वाले सुंदर कवि ने एक सुंदर श्रृंगार नामक ग्रंथ लिखा जिसमें नायिका भेद का मनोहर वर्णन है। इन्होंने बारहमासी और सिंहासन बत्तीसी नामक ग्रंथों की भी रचना की। शाहजहाँ बादशाह ने इन्हें कविराय और फिर महाकविराय की उपाधि देकर इनका आदर किया था। राजा शंभुनाथ सुलंकी भी एक प्रसिद्ध और उच्चकोटि के कवि थे जो सितारा के राजा थे। इन्होंने नायिका भेद का एक बड़ा उत्तम ग्रंथ लिखा है और इनका नखशिख तो बहुत ही सराहनीय है। इनकी भाषा भी बड़ी सुंदर है।

कुछ लोगों का विचार है कि इनका नखशिख हिन्दी भाषा में सर्वोत्तम है। संभा जी कवि ने भी नायिका भेद और नख शिख लिखा। एक बेनी कवि थे। उनके स्फुट छंदों से ज्ञात होता है कि उन्होंने भी नखशिख संबंधी कोई ग्रंथ लिखा होगा। कवि हरिराम ने भी नखशिख लिखा। पिंगल और छंद रत्नावली उनके दो और ग्रंथ हैं। गुजरात के पुहकर नामक कवि ने भी एक नखशिख लिखा था। किंतु इनका सब से प्रसिद्ध ग्रंथ रसरतन है जिसमें इन्होंने रंभावती और सूरकुमार की कथा दोहा चौपाइयों और अन्य छंदों में विस्तार पूर्वक वर्णन की है। भाषा इनकी भी ब्रज है किन्तु स्थान स्थान पर प्राकृत भी मिली हुई है। यह सुना जाता है कि यह ग्रंथ इन्होंने कारागार में बनाया था। उस समय सम्राट जहांगीर था। वह इस ग्रंथ पर प्रसन्न होकर उन्हें छोड़ दिया।

अन्यकवि

बहुत से ऐसे कवि भी थे जो कविता तो अच्छी करते थे किंतु किसी कारण से उनकी कविता पर्याप्त रूप से सुलभ नहीं है। इस प्रकार के एक कवि सदानंद थे जिन्हों ने मनोहर कविता की। जोयसी ने भी बड़ी अच्छी कविता की। ऐसे ही एक कवि भरमी थे।

नीलकंठ और मंडन कवि के नाम भी स्मरणीय हैं। नीलकंठ महाकवि मतिराम के सबसे छोटे भाई थे। इन्होंने अमरेश विलास नामक ग्रंथ लिखा जिसमें यमकालंकार का अच्छा प्रयोग है। मंडन का नाम मणिमंडन मिश्र था। यह भी अच्छे कवि थे। इन्होंने कई ग्रंथों की रचना की। इसी समय में भीष्म नामक कवि ने बालमुकुन्द लीला नामक ग्रंथ लिखा। इसमें श्री मद्भागवत के दशम स्कंध के पूर्वार्द्ध का सुंदर छंदों में भाषा अनुवाद किया है।

बहुत दिनों से भाषा साहित्य में वीर रस का अभाव चला आता था। युद्ध इत्यादि के वर्णन भी नहीं होते थे और राजाओं महाराजाओं की प्रशंसा में कवि लोग लेखनी नहीं उठाते थे। किंतु अब भूषण का समय आने वाला था। रास्ता पहले ही से तैयार हो रहा था। एक ओर कवि कविन्द्राचार्य ने सम्राट शाहजहाँ और उसके पुत्रों की प्रशंसा की और शाहजहाँबाद के संबंध में यहाँ तक किखा कि

वीररस

" छहो ऋतु छाई छाजै आछी छवि देखन को
मानुष की कहा कहै इन्द्र तरसत है "

इन्होंने कवींद्र कल्पलता और समरसार दो ग्रंथ लिखे। इनकी भाषा में अनुप्रास का अधिक प्रयोग है। ये संस्कृत के भारी विद्वान थे और उस भाषा में भी कविता करते थे। दूसरी ओर वनवारी कवि ने अमरसिंह की प्रशंसा लिखी।

" धन्य अमर छिति छत्रपति अमर तिहारो मान।
साहजहाँ की गोद में हन्यो सलावत खान॥ "

यह भी उच्च कोटि के कवि थे और शृंगार रस की कविता इनकी बड़ी अच्छी है। मतिराम ने भाऊसिंह की प्रशंसा में एक ग्रंथ ही लिखा था और युद्ध की कविता भी की थी। एक हरिवल्लभ नामक कवि ने श्री मद्भगवत् गीता का भाषा अनुवाद दोहों में किया और शिरोमणि कवि ने राम रावण के युद्ध के संबंध में कुछ लिखा।

इस अपूर्वकाल में भारत वर्ष में व्यापक लहरें चल रही थीं। एक ओर मुग़ल सम्राट समस्त देश को अपने वश में लाना चाहता था। दूसरी ओर मरहठे लोग दक्षिण से सिर उठा रहे थे और सारे भारत

व्यापकता, हिन्दी का फैलाव

को अपने अधिकार में लाना चाहते थे। हिन्दू जाति के हृदय में एक नई जीवन धारा प्रवाहित हो रही थी। इसी समय हिन्दी कविता देश के हर कोने से अपनी छटा दिखलाने लगी। उत्तरी भारत तो हिन्दी का स्थान ही था। उधर गुजरात में पुहकर और रघुराम आदि नामक कवियों ने हिन्दी में कविता की। उधर बुंदेलखंड में मणिमंडन मिश्र ने कविता की। पूरब में मुर्शिदाबाद में कवि रामचन्द नागर ने दो काव्य ग्रंथ लिखे। दक्षिण में सितारा के राजा शंभुनाथ सुलंकी स्वयं प्रसिद्ध कवि थे और बहुत से कवियों के आश्रय दाता थे। मरहठों में शाहजी के यहाँ जयराम कवि था जिसने हिन्दी में भी कुछ कविता की। जयराम ने लिखा है कि शाहजी के यहाँ ४० और हिन्दी कवि थे जिनमें कुछ मुसलमान भी थे। फिर महाराज शिवाजी स्वयं हिन्दी में कविता करते थे जिसमें फ़ारसी के भी शब्द प्रयुक्त हैं। उनके समय में महाराष्ट्र में बहुत से लोगों ने हिन्दी में कविता की और उनके गुरु स्वयं रामदास हिन्दी में कविता करते थे। मराठी भाषा का प्रसिद्ध कवि महीपति भी हिन्दी का कवि था।

इस काल में कोई प्रसिद्ध मुसलमान कवि न हुआ केवल एक ताज का नाम प्रसिद्ध है जिसे वैष्णव ही कहना अधिक उचित है।

जैन लोगों में भी इस समय अच्छे अच्छे कवि हुए। यशोविजय हिन्दी के अतिरिक्त गुजराती और प्राकृत तथा संस्कृत में भी कविता करते थे। यिनय विजय, मनोहर लाल और आचार्य अचल कीर्ति ने भी हिन्दी कविता की।

इस काल में राजाओं महाराजाओं ने बड़ी कविता की और वह भी उच्च कोटि की जैसे जसवंत सिंह और शंभुनाथ इत्यादि।

गद्य लेखक भी इस काल में बहुत अच्छे नहीं हुए। कुछ गद्य

गद्य

कवि दामोदर दास ने लिखा है। कुशल धीर मणि ने गद्य लिखा। मनोहर दास निरंजनी ने ज्ञान और वेदाँत संबंधी कई ग्रंथ लिखे जिनमें एक गद्य में है। हेम चंद्र पांडे ने भी गद्य लिखा है और अच्छा लिखा है। जगोजी एक और गद्य लेखक थे।

हिन्दी में आत्म कथा लिखने की प्रथा प्रायः बिलकुल ही नहीं है किंतु इस समय में कवि दीन दत्त ने अपना आत्म चरित्र लिखा। दीन दत्त भारत के सब प्रांतों में घूमे थे। इन्होंने हर एक प्रांत का वर्णन उसी प्रांत की भाषा में किया है।

अन्य स्फुट विषयों पर भी इस समय में कविता लिखी गई

अन्यविषय

सुखदेव कवि ने वाणिज्य के भेद वर्णन और वणिक प्रिया नामक ग्रंथों की रचना की जिनमें वाणिज्य संबंधी बातों का उल्लेख है। हरगोविंद कवि ने अहमद नगर बसने का हाल दिया है। भजनों के अतिरिक्त अन्य गीत भी लिखे गए और धार्मिक कथाओं के अतिरिक्त अन्य कथाएं भी लिखी गईं। बलभद्र कवि ने वैद्य विद्या विनोद नामक ग्रंथ लिखा। सामुद्रिक पर भी कई ग्रंथ लिखे गए जिनके ग्रंथकारों में हिन्दू मुसलमान दोनों थे।

स्त्री कवियों में ताज, इंद्रामती और चाँपादे रानी (महारानी

स्त्री कवि

बीकानेर) के नाम स्मरणीय हैं।

दूसरे विभाग में भूषण और उनके समकालीन कवियों का

दूसरा विभाग

वर्णन होगा। इस काल में हिन्दी साहित्य वीर रस से पूर्णतया सिंचित था। हिन्दी साहित्य के इतिहास में कभी ऐसा समय नहीं आया था और न फिर

आया जिसमें भूषण ऐसे वीर रस के कवियों ने हिन्दी को सुशोभित किया हो। और भारत वर्ष के मध्य युग तथा आधुनिक युग में ऐसा समय दूसरा नहीं हुआ जिसमें हिन्दू जाति ने अपनी पतित दशा में मुग़ल साम्राज्य की ऐसी प्रबलतम शक्ति का सफलता पूर्वक सामना किया हो। इसमें संदेह नहीं कि खिलजी और तुग़लकों का सामना किया गया था और फिर बाबर और अकबर का भी वीरता पूर्वक सामना हुआ किन्तु उन दिनों हिन्दू जाति में उत्साह भरा था और मुसलमान लोगों ने भारत को अभी तक उचित रूप से वश में नहीं कर लिया था। किन्तु औरंगज़ेब के समय में भारत मुग़लों के अधीन होगया था और कोई ऐसी शक्ति नहीं थी जो अपना सिर उठावे। तथापि परिस्थितियों ने मरहठों, सिक्खों और बुंदेलखंडियों इत्यादि को खड़ा ही कर दिया और अंत में इन्हीं लोगों ने मुग़ल सम्राट के नाकों चने चबवा दिये। अतः यह उपयुक्त समय था जब वीर रस की कविता पराकाष्ठा को पहुँचती। इस समय के वीरों में छत्रपति महाराज शिवाजी और पन्ना नरेश महाराज छत्रसाल प्रसिद्ध थे। हर्ष की बात है कि ये दोनों महाराज स्वयं कवि थे और अन्य कवियों के आश्रय दाता थे। किन्तु महाकवि भूषण की रचनाओं के नायक बन कर इन लोगों ने हिन्दी साहित्य का और भी अधिक उपकार किया। महाराज छत्रसाल के यहाँ वीर रस के प्रसिद्ध कवि हरिकेश भी थे।

दूसरी विशेषता इस काल की यह है कि इस समय में भाषा-आचार्य बहुत हुए। भूषण कवि ने स्वयं अलङ्कारों पर एक विशद ग्रंथ लिखा है। काव्यरीति, रस, अलङ्कार आदि पर कुलपति मिश्र और सुखदेव मिश्र ने भी अच्छे अच्छे ग्रन्थ लिखे हैं।

शृङ्गार रस संबंधी कविता का दौर्वल्य हुआ और उस भयानक अशांत काल में इसका स्थान ही कहाँ था। तथापि हिन्दी

साहित्य से श्रृंगार रस का अलग होना ही कब संभव था और वह भी जब केशव, विहारी, मतिराम आदि महाकवि पहले हो चुके थे। अस्तु नेवाज कवि और घनश्याम शुक्ल ने भी श्रृंगार रस की कविता की और राम जी ने नायिका भेद लिखा तथा कुलपति मिश्र और शुकदेव मिश्र आदि ने नखशिख लिखा।

भक्ति, वैराग्य और नीति संबंधी कविता का भी बड़ा दौवल्य रहा किन्तु इसमें भी कुछ अच्छे कवि हो गए। वृंदकवि के नीति संबंधी दोहे सदा प्रसिद्ध रहेंगे। बालअली और भगवान हित ने भक्ति और वैराग्य आदि पर कविता लिखी और ईश्वरी प्रसाद ने एक रामायण ग्रन्थ लिखा।

भूषण

भूषण इस काल के सर्वश्रेष्ठ कवि थे और इनकी गणना हिन्दी के सर्वोत्तम कवियों में हैं। भूषण चार भाई थे और चारों कवि थे जिनमें भूषण और मतिराम तो सर्वोच्च कोटि के कवि थे। भूषण ने लगभग १०० वर्ष की अवस्था पाई। इनकी बहुत सी रचनाएँ समय इत्यादि के प्रभाव से लुप्त हो गई हैं। इनका सब से प्रसिद्ध प्राप्त ग्रन्थ शिवराज भूषण है। यह बड़ा ही उत्तम ग्रन्थ है जो अनुमान से ७ वर्ष में बना था अर्थात् सं० १६६६ ई० से सं० १६७३ ई० तक में। यों तो यह अलङ्कार ग्रन्थ है जिसमें प्रत्येक अलङ्कार का वर्णन उदाहरण सहित दिया हुआ है किन्तु वास्तव में यह समूचा ग्रन्थ महाराज शिवाजी की प्रशंसा और यश गान है। अलङ्कारों का वर्णन बड़े उत्तम ढंग से दिया गया है और उदारहणों ने एक अद्भुत रंग दे दिया है। ये उदाहरण अलङ्कार के अच्छे उदाहरण तो हैं हीं महाराज शिवाजी के गुणों, उनकी वीरता, हिन्दू जाति के गौरव और जातीयता के भाव से भरे हुए भी हैं। इस ग्रन्थ का नाम कवि ने बड़ा ही उत्तम और अभिव्यंजक (suggestive) चुना है। यह भूषण का बनाया ग्रन्थ सब तरह से भूषण है।

इनके रचित भूषण उल्लास और भूषण हज़ारा नामक ग्रन्थ प्राप्त नहीं है किन्तु तीन छोटे छोटे इनके ग्रन्थ प्रकाशित हैं—एक शिवाबावनी, दूसरा छत्रसाल दशक और तीसरा स्फुट छंद। इनमें सब से बड़ा शिवाबावनी है जिसमें कुल ५२ छंद हैं। इसमें भी भूषण ने शिवाजी की प्रशंसा की है। छत्रसाल दशक केवल दश छंदों का ग्रन्थ है जिसमें महाराज छत्रसाल की प्रशंसा है और तीसरे ग्रन्थ में तो दुर्भाग्य से केवल नौ ही छंद हैं। यह स्मरण रखना चाहिये कि भूषण ने जो शिवाजी और छत्रसाल की प्रशंसा की है वह केवल पद्य में प्रशंसा सूचक शब्दों का सार्थक संग्रह ही नहीं है, वरन् वीरता का रूप और जातीयता का चित्र भी है। महाराज शिवाजी के संबंध में इन्होंने लिखा है :—

"इंद्र जिमि जम्भ पर बाड़व सुअंभ पर,
रावन सदम्भ पर रघुकुलराज है।
पौन बारि बाह पर सम्भु रतिनाह पर,
ज्यों सहस्रबाहु पर राम द्विजराज हैं॥
दावाद्रुम दंड पर चीता मृग झुंड पर,
भूषन वितुण्ड पर जैसे मृगराज हैं।
तेज तम अंस पर कान्ह जिमि कंस पर,
त्यों मलिच्छ बंस पर सेर सिवराज हैं॥"

"राजा सिवराज के नगारन की धाक सुनि,
केते बादसाह की छाती दरकति है।"

"राजन की हद्द राखी तेग बल सिवराज,
देव राखे देवल स्वधर्म राख्यो घर मैं।"

जान पड़ता है कि महाकवि भूषण ने शृंगार रस की ओर भी कुछ ध्यान दिया किन्तु इस संबंध में उनका कोई ग्रंथ प्राप्त नहीं है।

भूषण की भाषा व्रजभाषा है किन्तु इसमें और भाषाओं के शब्द भी प्रयुक्त हैं। भूषण ने बहुत भ्रमण भी किया था। ये कई दरबारों में गए और इनका सम्मान भी बहुत हुआ किंतु शिवाजी और छत्रसाल के यहाँ यह अधिक रहे और दोनों की प्रशंसा इन्होंने ख़ूब की है। एक बार इन्होंने कहा था कि "शिवा को सराहौं कि सराहौं छत्रसाल को"। छत्रसाल इनको इतना मानते थे कि कहा जाता है कि एक बार महाराज ने स्वयं इनकी पालकी कंधे पर ले ली। कदाचित ही विश्व के किसी अन्य कवि का ऐसा सम्मान हुआ होगा। छत्रसाल की प्रशंसा में यह कहते हैं:—

"निकसत म्यान ते मयूखैं प्रलै भानु कैसी,
फारैं तम तोम से गयंदनके जाल को।
लागत लपटि कंठ बैरिन के नागिनिसी,
रुद्रहिं रिझावै दै दै मुण्डन के माल को॥
लाल छितिपाल छत्रसाल महाबाहु बली,
कहाँ लौं बखान करौं तेरी करवाल को।
प्रतिभट कटक कटीले केते काटि काटि,
कालिकासी किलकि कलेऊ देति काल को॥"

महाराज छत्रसाल के यहाँ एक हरिकेश नामक प्रसिद्ध कवि थे।

हरिकेश

यह भी उच्चकोटि के कवि थे। इन्होंने छत्रसाल की प्रशंसा की है। युद्ध संबंधी कविता इनकी उत्तम है जो उत्साह वर्द्धक है।

भूषण स्वयं भाषा के आचार्य थे। उनके अतिरिक्त कुलपति मिश्र और सुखदेव मिश्र के नाम प्रसिद्ध हैं।

कुलपति मिश्र

कुलपति मिश्र महाराज रामसिंह के यहाँ रहते थे। यह रामसिंह उसी जयसाह (महाराज जैसिंह) के पुत्र थे जिसके यहाँ महाकवि बिहारीलाल रहते थे। सुनने में आया है

कि बिहारीलाल कुलपति मिश्र के मामा होते थे। जो हो इनकी जीवनी का ठीक पता नहीं। इनका सब से प्रसिद्ध ग्रंथ रस रहस्य है। इसका नाम तो केवल रस ही का रहस्य है किंतु वास्तव में इसमें काव्य के अनेक अंगों का वर्णन है। यह एक बड़ा ग्रंथ आठ अध्यायों में है जिसमें काव्य की परिभाषा, उसके लक्षण और कारण, प्रयोजन आदि के पश्चात रसों इत्यादि और फिर काव्य के दोष गुण का वर्णन है और अंत के दो अध्यायों में अलंकारों का वर्णन है।

कुलपति ने अपने ग्रंथ में बड़ा पांडित्य दिखलाया है और कविता भी अच्छी की है। अलंकार वर्णन में इन्होंने भूषण की प्रथा ग्रहण की अर्थात उदाहरण में अपने आश्रयदाता महाराजा रामसिंह की प्रशंसा के छंद कहे। किंतु रामसिंह तो शिवाजी थे नहीं, इसलिए वह प्रशंसा केवल शब्द समूह ही रह गई है। उदाहरणों में यद्यपि वह शोभा नहीं है तथापि इनके वर्णन अच्छे हैं। जान पड़ता है कि यह बहुत अध्ययन और सोच विचार के बाद कुछ कहते थे। काव्य का लक्षण बतलाने में यह लिखते हैं :—

"जग ते अद्भुत सुख सदन शब्दरु अर्थ कवित्त।
यह लक्षण मैंने कियो समुझि ग्रंथ बहु चित्त॥"

ज्ञात होता है कि इन्होंने बहुत से और ग्रंथ लिखे। इनके द्रोणपर्व और संग्रामसार आदि छ ग्रंथ और मिले हैं जिनमें एक नखशिख भी है।

मिश्र जी ने भाषा अच्छी लिखी है जो मुख्यतः ब्रजभाषा है। किंतु कहीं कहीं इसमें प्राकृत भाषा का भी मिश्रण है और कहीं कहीं फ़ारसी आदि के शब्द भी ख़ूब आए हैं जैसे :—

"हूँ मैं मुशताक़ तेरी सूरत का नूर देखि"

इनका एक छंद देखिए :—

" नीति बिना न बिराजत राज न राजत नीति जु धर्म बिना है।
फीको लगै बिन साहस रूप रू लाज बिना कल की अवला है॥
सूर के हाथ बिना हथियार गयंद बिना दरबार न भा है।
मान बिना कविता की न ओप है दान बिना जस पावै कहा है॥

सुखदेव मिश्र

सुखदेव मिश्र कंपिला के रहने वाले थे किंतु कुछ दिनों बाद दौलतपूर में चले गए। वहाँ राजा देवीसिंह ने इनके रहने सहने का उचित प्रबंध कर दिया। यह बड़े भारी पण्डित थे और कई राजाओं ने इनका बड़ा सम्मान किया। कुछ समय तक यह फ़ाज़िल अली के यहाँ भी रहे। फ़ाज़िल अली सम्राट औरंगज़ेब का मंत्री था। अल्लाहयार खां ने भी इनका बड़ा सम्मान किया और इनको कविराज की उपाधि दी। जान पड़ता है कि गौड़ के राजा राजसिंह ने भी यही उपाधि इनको दी थी। यह वास्तव में बड़े विद्वान, पूरे पण्डित, साधु-चरित और अच्छे कवि थे। यह भाषा के आचार्य थे। इन्होंने पिंगल, छंद, और रस संबंधी कई ग्रंथ लिखे हैं। इनको पिंगल का सब से बड़ा आचार्य समझना चाहिए।

मिश्र जी ने कई ग्रंथ बनाए जिनमें कुछ संदिग्ध भी हैं। इनके ग्रंथों में बहुत से एक एक राजा इत्यादि के नाम पर बने हैं। वृत्त-विचार राजसिंह गौड़ के नाम पर बना। छंद विचार राजा हिम्मत सिंह के कहने पर बना जिसमें उनके वंश का वर्णन दिया हुआ है। रसार्णव मर्दन सिंह की आज्ञा से बना और शृंगारलता राजा देवी सिंह के लिए बनाई गई और फ़ाज़िल प्रकाश तो फ़ाज़िल अली के नाम पर है ही। इस प्रकार इन्होंने कृतज्ञता प्रकट की यहाँ तक कि इन्होंने औरंगज़ेब की भी स्तुति की। साथ ही साथ यह स्मरण रखना चाहिये कि इन्होंने अपनी मातृभूमि के प्रति भी

कविता द्वारा बड़ी कृतज्ञता दिखलाई। यद्यपि इन्होंने अपना निवास स्थान दौलतपूर ही बना लिया और इनके वंशज अब तक वहीं पाए जाते हैं तथापि इन्होंने अपनी रचनाओं में कंपिला का बड़ा विस्तृत वर्णन दिया है। वृत्तविचार और फाज़िल प्रकाश दोनों ग्रंथों में इसका वर्णन मिलता है।

इनका सब से प्रसिद्ध ग्रंथ वृत्त विचार है। यह पिंगल का एक उत्कृष्ट ग्रंथ है जिसमें पिंगल के संबंध में प्रायः सभी बातों का वर्णन है और इसमें छंदों के लक्षण अच्छे उदाहरण सहित दिए हुए हैं। इन उदाहरणों में एक बात विशेष ध्यान देने योग्य है। केशव, मतिराम आदि कवियों ने अपने उदाहरण शृंगार रस के दिए हैं, भूषण वीर रस के दिए हैं, किंतु सुखदेव के उदाहरण भक्ति और वैराग्य के हैं। इनमें अधिकतर देवताओं ही का वर्णन है। वृत्तविचार के अतिरिक्त छंद विचार भी पिंगल का ग्रंथ है जो उससे छोटा है परंतु यह भी एक उत्कृष्ट रचना है। इसके उदाहरण प्रशंसात्मक और शृंगार रस के हैं। ज्ञात होता है कि इन्होंने पिंगल पर इन दो उत्कृष्ट ग्रंथों के अतिरिक्त एक पिंगल नामक ग्रंथ भी रचा।

मिश्र जी ने नव रसों का वर्णन अपने रसार्णव नामक ग्रंथ में बहुत अच्छा दिया है। यह एक बहुत ही उत्कृष्ट ग्रंथ है। फाज़िल अली प्रकाश में भी इन्होंने रसों का वर्णन किया है। इसके अतिरिक्त इसमें कविवंश और नृपवंश आदि अन्य विषयों का भी वर्णन है। यह भी अच्छा ग्रंथ है। इन्होंने शृंगारलता और नखशिख नामक दो ग्रंथ और बनाए थे।

सुखदेव मिश्र साधु प्रकृति के मनुष्य थे। इन्होंने काशी में किसी सन्यासी के यहाँ विद्याध्ययन किया था। वृत्तविचार के उदाहरणों से इनकी यह प्रवृत्ति स्पष्ट है। फिर इन्होंने एक अध्यात्म प्रकाश नामक ग्रंथ भी लिखा जिसमें वेदांत संबंधी बातों का वर्णन है।

मिश्र जी ब्रजभाषा में कविता करते थे। उपमाओं का यह अच्छा प्रयोग करते थे और कभी कभी यमक अनुप्रास आदि भी लिखते थे। इनकी भाषा मनोहर है। जान पड़ता है कि इन्होंने प्राकृत और संस्कृत भाषाओं में भी कुछ कविता की थी। इनकी रचना देखिए :—

" जोन्हसी जोन्है गई मिलि यों,
मिलि जाति ज्यों दूध में दूध की धार है।"

" आपदा के हरन हैं संपदा के करन हैं,
सदा के धरन हैं सरन असरन को।"

" पीतम को गौन सुखदेव न सुहात भौन,
दारुन बहत पौन लाग्यो मेघ झरु है।"

घनश्याम

भूषण और हरिकेश के अतिरिक्त घनश्याम शुक्ल ने भी वीररस की कविता की। इनके समय का ठीक पता नहीं है और न इनका कोई ग्रंथ ही मिला है। इनके बनाए फुटकर छंद ही मिलते हैं। इनकी रचना में प्राबल्य की मात्रा अधिक है इन्होंने वीर और शृंगार दोनों रसों की कविता की है और इनकी दोनों रसों की कविता ज़ोरदार है। इन्होंने महाराज रीवाँ की प्रशंसा में बहुत से छंद कहे हैं। जान पड़ता है कि इस समय भाषा में अंगरेज़ी के भी एक आध शब्द आने लगे थे क्योंकि घनश्याम जी ने कम्पनी शब्द का प्रयोग किया है। इन्होंने भाषा अच्छी लिखी है जिसमें अनुप्रास का अधिक प्रयोग है। देखिये :—

" बाँकुरो बहादुर बलीन बीर बरछी लै,
बापहि बचायो है बिलायत गिलासीते।"

" हिए बिरहानल की तपनि अपार उर,
हार गजमोतियन के चटकि चटकि जात।"

कालिदास भी इस समय के प्रसिद्ध कवि हो गए हैं जो उच्च-कोटि के कवि थे। यह पहले औरंगज़ेब के साथ किसी राजा के यहाँ थे। फिर जंबू नरेश के यहाँ रहे। इन्होंने गोलकुंडा और बीजापुर से औरंगज़ेब की लड़ाई का वर्णन किया है। किंतु इनका सब से अधिक उपकारी ग्रंथ हज़ारा नामक है। इसमें उन्होंने १००० छंदों का संग्रह किया है। यह छंद लगभग ३ शताब्दियों के २०० से अधिक कवियों के हैं। अतः यह साहित्य के इतिहास का एक उत्तम ग्रंथ है।

कालिदास

कालिदास का एक और प्रसिद्ध ग्रंथ वारवधूविनोद है जिसमें नखशिख और नायिका भेद का वर्णन कई अध्यायों में दिया हुआ है। इनकी भाषा अच्छी, मधुर और अनुप्रास युक्त होती थी देखिए :—

"कैसी छवि छाजत है छाप औ छलान की,
सकंकन चुरीन की जड़ाऊ पहुँचीन की"

नायिका भेद का वर्णन रामजी नामक कवि ने अच्छा किया है। यह अच्छे कवि थे और इनकी भाषा मधुर होती थी किंतु उस समय शृंगार रस के सर्वोत्कृष्ट कवि नेवाज थे। यह ब्राह्मण हिन्दू थे और बड़ी उच्च कोटि की कविता करते थे। यह पन्ना के महाराज छत्रसाल के यहाँ रहते थे। इन्होंने शकुंतला नाटक लिखा है और इनके फुटकर छंद भी मिले हैं जिनसे ज्ञात होता है कि यह बड़ी प्रशंसनीय कविता करते थे। इनकी कविता शृंगार रस की है जिसमें स्वाभाविक बातों का सच्चा और स्पष्ट वर्णन है जिससे इनकी रचना में बहुत अश्लीलता आगई है। इनकी भाषा का एक विशेष गुण यह है कि शब्दों में अश्लीलता नहीं आई। दूसरा बड़ा गुण यह है कि शब्दों का प्रयोग मनोहर और सुगठित है। अतएव इनकी कविता भावपूर्ण

रामजी, नेवाज

और सरस है। शृंगार विषयक कविता एक अभू नामक कवि ने भी की।

भक्ति इत्यादि विषयक काव्य

भक्ति, वैराग्य, ज्ञान आदि विषयों पर भी इस समय में अच्छी कविता की गई। भगवान हित कवि ने अमृतधारा नामक ग्रंथ लिखा। यह भक्ति योग और वैराग्य आदि विषयक ग्रंथ दोहा और चौपाइयों में लिखा हुआ है। इन्होंने रामायण नामक भी एक ग्रंथ लिखा। इसी समय में ईश्वरी प्रसाद कवि ने रामविलास रामायण लिखी। यह अच्छे कवि थे और इन्होंने हिन्दी छंदों में वाल्मीकीय रामायण का अनुवाद किया है। बाल अली एक अच्छे भक्त कवि थे। इनकी भक्ति सखी भाव की थी। इन्होंने सीता राम ध्यानमंजरी नामक एक ग्रंथ लिखा जिसमें सीता और राम तथा उनके राजमंदिर आदि का सुन्दर वर्णन दिया है। इन्होंने एक और ग्रंथ नेह प्रकाश नामक लिखा। इसमें भी रामचंद्र और सीता का यशगान है। यह ग्रंथ दोहा और सोरठा छंदों में लिखा हुआ है। ज्ञान और योग आदि विषयक बहुत से ग्रंथ अनन्य कवि ने लिखे। यह दतिया राज के एक कायस्थ थे जिन्होंने ज्ञान बोध, ज्ञान योग, ब्रह्म ज्ञान, विवेक दीपिका, वैराग्य तरंग, भवानी स्तोत्र आदि बीसों ग्रंथ बनाए। वैराग्य विषयक एक ग्रंथ मोहन विजय जैन और वेदांत विषयक कई ग्रंथ विचार माला इत्यादि जन अनाथ ने लिखे और देवदत्त ने योगतत्व नामक ग्रंथ लिखा।

वृंद

नीति और शिक्षा के इस समय के सबसे प्रसिद्ध कवि वृंद थे। वृंद कवि के दोहे अबतक विख्यात और लोकप्रिय हैं। प्रत्येक हिन्दी का ज्ञाता इनका कोई न कोई दोहा अवश्य जानता होगा। इन्होंने तीन चार ग्रंथ लिखे जिनमें एक शृंगार शिक्षा भी है। किन्तु इनका सबसे प्रसिद्ध ग्रंथ

वृन्द सतसई है। यह सातसौ दोहों का ग्रंथ बड़ा उपयोगी, उत्तम और शिक्षाप्रद है। इसकी भाषा सरल, अच्छी और प्रभाव डालने वाली है। इस ग्रंथ में कहावतों तथा सांसारिक नीति व्यवहारों पर कविता की गई है और बर्ताव का ढंग बतलाया गया है। कहीं कहीं संस्कृत के श्लोकों का हिन्दी में अनुवाद भी कर दिया गया है। वृन्द कवि के दोहे बहुधा सुनने में आया करते हैं जैसे :—

> " सबैं सहायक सबल के, कोइ न निबल सहाय।
> पवन जगावत आग को, दीपहिं देत बुझाय॥ "
> " अपनी पहुंच बिचारि कै, करतब करिये दौर।
> तेतै पाँव पसारिये, जेती लाँबी सौर॥ "
> " बुरे लगत सिख के बचन, हिये विचारो आप।
> करुवी भेषज बिन पिये, मिटै न तन की ताप॥ "
> " फीकी पै नीकी लगै, कहिए समय बिचारि।
> सब को मन हरखित करै, ज्यौं विवाह में गारि॥ "

इनके उदाहरणों से इनकी कविता में विशेष बल आ जाता है। नीति तथा राजनीति संबंधी कुछ कविता बुंदेलखंड के देवीदास ने भी की है।

कथाएं, इतिहास

इस समय में रामायण की कथा के अतिरिक्त अन्य बहुत सी कथाएं लिखी गईं जिनका धर्म से कोई संबंध नहीं। नेवाज कवि ने शकुंतला नाटक लिखा; विजय हर्ष ने सुरसुंदरी प्रबंध लिखा और रसिक कवि ने चंद्र कुंवर की वार्ता लिखी। धर्म संबंधी और धर्म से न संबंध रखने वाली बहुतसी कथाएं लिखी गईं। एक ओड़छा के कवि ने दशावतार कथा लिखी फिर कृष्ण दास कवि ने महालक्ष्मी की कथा, तीजा की कथा और हरिश्चंद्र कथा इत्यादि लिखी और भगवान दास ने नल राजा की कथा लिखी। मोहन नामक एक अच्छे कवि थे

जिन्होंने रामाश्वमेध नामक ग्रंथ बनाया। और बहुत से ग्रंथ चरित्र नाम के बनाए गए जैसे पीतंकर चरित्र। दो ऐतिहासिक ग्रंथ भी इस काल में लिखे गए और दोनों राजपूताना से संबंध रखते हैं। उस समय में कवियों के लिये यह उचित भी था। जोधपूर के नेणसीमूता नामक कवि ने मूतानेणसी की ख्यात नामक ग्रंथ लिखा। इसमें राजपूताना का इतिहास दिया हुआ है। यह ग्रंथ डिंगल भाषा में लिखा है। दूसरा ग्रंथ रणछोर नामक कवि ने लिखा जिसका नाम राजपट्टन है। इसमें मेवाड़ के राजवंश की कथा दी है।

टीका, माहात्म्य, गद्य

इस समय में दो प्रकार की साहित्यिक रचनाएं ऐसी मिलती हैं जिनसे ज्ञात होता है कि काव्य का प्राबल्य जाता रहा। एक तो कई कवियों ने टीकाएं रचीं, दूसरे कुछ कवियों ने केवल माहात्म्य लिखा। पन्ना के कवि विष्णुदास ने एकादशी माहात्म्य लिखा और कवि कृष्ण दास ने भी इसी नाम का एक ग्रंथ लिखा। गद्य लेखक वैकुंठ मणि ने दो गद्य ग्रंथ लिखे—अगहन माहात्म्य और वैसाख माहात्म्य। टीकाएं भी भिन्न भिन्न विषयों पर लिखी गईं। मौनी जी ने एक सटीक विचारमाला और धरणीधर दास ने सटीक चौरासी लिखा; उधर कल्याण मिश्र ने अमरकोष भाषा और फिर उधर चरण दास ने बिहारी सतसई की टीका लिखी।

अन्य विषय

अन्य विषयों पर भी कुछ कविता की गई। वैद्यक संबंधी दो ग्रंथ चिकित्सा दर्पण और भिषज प्रिया नामक सुदर्शन कवि ने लिखे और रतन भट्ट ने एक सामुद्रिक नामक ग्रंथ लिखा। गंगा राम ने रागरागिनियों पर एक ग्रंथ लिखा।

भाषा

इस समय की भाषा विशेषतः ब्रजभाषा ही रही किंतु डिंगल और मिश्रित भाषाओं में भी कुछ कविता की गई। चतुरसिंह राना नामक एक बहुत ही साधारण कवि ने खड़ी बोली में रचना की। उर्दू का प्रवेश किसी किसी रचना में खूब हो गया था और अंग्रेज़ी के घुसने की भी आशा बंधी। ब्रजभाषा गद्य में भी दो ग्रंथ लिखे गये।

स्त्री कवि

भूषण काल में स्त्री कवियों का प्रायः अभाव ही रहा। राजपूताना में काकरेजीजी नामक स्त्री ने कुछ कविता की थी।

मुसलमान कवि

इस जातीय जागरण के समय में स्वाभाविक ही था कि मुसलमान कवि कम और अप्रसिद्ध होते। पहले के अधिकतर मुसलमान कवियों ने हिन्दू विचारों ही के अनुसार कविता की थी। अब विरोध के कारण वह बात कठिन हो गई। दूसरे अब हिन्दू जाति विजय के शिखर पर चढ़ने लगी और मुसलमान जाति और बल का पतन होने लगा। इसलिए मुसलमान लोग हिन्दी के अच्छे कवि न रहे। धीरे धीरे वे लोग उर्दू की ओर उन्नति किये और फारसी इत्यादि के ढंग की कविता करने लगे। यद्यपि औरंगज़ेब को कविता इत्यादि से शौक न था तथापि उसके एक दरबारी दानिशमंद ने कुछ कविता की। सैयद रहमतुल्ला एक उच्च पदाधिकारी थे। उन्होंने भी हिन्दी में कविता की। जैनदीन महम्मद और मीर रुस्तम भी कविता करते थे।

छत्र साल, जैन कवि, मरहठा कवि इत्यादि

इस काल के कुछ अन्य कवियों के नाम भी स्मरणीय हैं। महाराज छत्रसाल जिनका नाम उपर आचुका है स्वयं कवि थे। इन्होंने भाषा का उपकार कई ढंग से किया। एक तो अपनी वीरता से, दूसरे अपनी उदारता से और तीसरे अपनी कविता से।

ये कवियों का बहुत सम्मान करते थे और इनके दरबार में बहुत से कवि रहते थे। इनकी कविता साधारण श्रेणी की है। जैन कवियों में ज्ञानसागर, भगवती दास और जिनहर्ष सूरि के नाम स्मरणीय हैं। ज्ञानसागर ने रास नामक ग्रंथ और जिन हर्ष ने श्रीपाल रास और श्रीपाल नृप रास नामक ग्रंथ लिखे। इन दोनों की भाषा प्राकृत मिश्रित है । भगवती दास "भय्या" ने ब्रह्मविलास नामक ग्रंथ की रचना की। एक और जैन कवि धर्म मंदिर गणि नामक थे। मरहठा कवियों ने भी हिन्दी में कुछ कविता की। श्रीधर कवि और भारतीय विश्वनाथ मराठी के अच्छे कवि थे जिन्होंने हिन्दी में भी काव्य रचना की। मानपुरी जी ने भी हिन्दी कविता लिखी। ये श्रीधर कवि के गुरु थे। इस समय के दो तीन और कवियों का ध्यान रखना चाहिए। इन्द्रजी त्रिपाठी और कोविद मिश्र अच्छे कवि थे। कोविद मिश्र ने भाषा हितोपदेश और राजभूषण नामक ग्रंथ लिखे और बलवीर ने पिंगल और नखशिख आदि का वर्णन किया।

तीसरा विभाग
देवकाल

महाकवि देव के समय में भूषण, मतिराम आदि ऊपर लिखे हुए अनेक कवि उपस्थित थे जिनका वर्णन हो चुका है। अब शेष कवियों का वर्णन होगा जिनका रचना काल प्रधानतः देव ही के समय में रहा। देव जी ने बड़ी अवस्था पाई थी और सौभाग्य से वे छोटी ही अवस्था से कविता करने लगे थे। इसलिए इनका समय बहुत बड़ा है और इसमें बहुत से कवि हुए।

इस काल में हिन्दी कविता कुछ नीचे अवश्य गिरी। यद्यपि देव कवि एक बड़े ही उच्चकोटि के कवि थे तथापि सब कवियों को मिला कर यही कहना पड़ता है कि साहित्य शिखर पर न रहा। थोड़े दिनों से भाषा-आचार्यों की संख्या बढ़ने लगी थी। इस काल में

भी बहुत से भाषा आचार्य हुए। देव स्वयं बड़े पण्डित थे फिर सूरति मिश्र, कवीन्द्र और श्रीपति भी अच्छे आचार्य थे किंतु पहले के आचार्य अधिक प्रसिद्ध हो चुके थे। टीकाओं का लिखना भी आरम्भ हो चुका था और इस समय में बहुत से टीकाकार हुए जिनमें सूरति मिश्र, प्रियादास, हरिचरणदास और कृष्ण प्रसिद्ध हैं। तीसरी विशेषता इस समय के साहित्य की यह थी कि कथा प्रांसगिक कविता बहुत लिखी गई। ये कथाएँ अधिकतर धर्म संबंधी न थीं। लाल और सूरति मिश्र इस ढंग के अच्छे कवि थे। छत्र कवि ने अपने विजय मुक्तावली नामक ग्रंथ में महाभारत की धर्म और भक्ति संबंधी कथा लिखी है किंतु वास्तव में धर्म या भक्ति इत्यादि का समय अब जाता रहा। गुरु गोविंदसिंह ने इस विषय की कविता की और नागरीदास ने शृंगारात्मक भक्ति संबंधी कविता की फिर घनानंद भी एक अच्छे भक्त और प्रेमी थे और जैन कवि भूधर दास ने जैन धर्म संबंधी ग्रंथ लिखा किंतु इन लोगों की रचनाओं से पहले के भक्त कवियों की रचनाओं की कोई तुलना नहीं है।

देव

इस काल के सर्वश्रेष्ठ कवि देव थे। इनका जन्म इटावा में सं० १७३० वि० में हुआ था। इनके मृत्यु का समय निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है किंतु इतना अवश्य कहा जा सकता है कि ये बहुत दिन तक जीवित रहे। इनकी अवस्था ७० और १०० वर्ष के बीच में थी। इनका नाम देवदत्त था और यह सोलह ही वर्ष की अवस्था से अच्छी कविता करने लगे। इन्होंने बहुत से ग्रंथ लिखे। कुछ लोगों का मत है कि इन्होंने ७२ ग्रंथों की रचना की किंतु आज कल इसके आधे भी नहीं मिलते।

साधारणतः हिन्दी कवियों को बहुत से आश्रयदाता मिल जाते थे जो उनका बड़ा सम्मान करते थे। परंतु देव के भाग्य में यह बात न थी। इन्होंने सारे देश में भ्रमण किया लेकिन उनका कोई

उचित आश्रयदाता न मिला। इसके कारण देव के हृदय में जो कुछ भी भाव उत्पन्न हुए हों हिन्दी कविता का तो इससे उपकार ही हुआ। उन्होंने चारों तरफ घूम घूम कर भिन्न भिन्न स्थानों के लोगों का सच्चा वर्णन मनोहर छंदों में किया है। यों तो देव जी के साधारण रूप से कई आश्रयदाता थे लेकिन राजा भोगीलाल सब से मुख्य थे और उन्होंने उनका यशगान भी किया है।

देव ने बहुत ग्रंथों की रचना की और एक ग्रंथ संस्कृत में भी बनाया। यह मुख्यतः भाषा के आचार्य थे। इनकी रचना रीति ग्रंथों और नायिका भेद से भरी है। इनके काव्यरसायन नामक ग्रंथ में रस, अलंकार, पिंगल इत्यादि का अच्छा वर्णन है और यह एक उत्तम ग्रंथ है। इसके अतिरिक्त भाव विलास, भवानी विलास और कुशल विलास भी रीति ही के ग्रंथ हैं। इसी विषय पर प्रेम तरंग और सुजान विनोद नामक ग्रंथ भी हैं। देव की अधिकांश कविता प्रणय संबंधी है। ये शृंगार रस के बड़े भारी कवि थे। इन्होंने नायिका भेद का सुखसागर तरंग नामक ग्रंथ लिखा। इनका संस्कृत का ग्रंथ भी इसी विषय का है। प्रेम चंद्रिका, प्रेम दीपिका और नख-शिख प्रेम दर्शन भी इनके ग्रंथ हैं। देव ने देश देश की नायिकाओं का बड़ा मनोहर और वास्तविक वर्णन किया है और जातियों का अच्छा वर्णन जातिविलास और रसविलास नामक ग्रंथों में किया है। भवानी विलास के उदाहरण देखिये :—

"आवन सुन्यौ है मनभावन को भामिनि,
सु आँखिनि अनन्द आँसू ढरकि ढरकि उठै।
देव दृग दोऊ दौरि जात द्वार देहरी लौं,
केहरी साँसे खरी खरकि खरकि उठै॥"

"कल न परति कहूँ ललन चलन कह्यौ,
बिरह दवा सो देह दहकै दहक दहक।"

"जेठी बड़ीन में बैठी बहू उत
पीठि दिये पिय दीठि सकोचन।
आरसी की मुदरी द्वढ दै, पिय को
प्रतिविम्व लखै दुख मोचन॥"

इन विषयों के अतिरिक्त देव कवि ने अन्य बहुत से विषयों पर कविता की है। इनके दो ग्रंथ वैराग्य शतक और नीति शतक नामक भी हैं। कृष्णजी की कथा उन्होंने देव चरित्र नामक ग्रंथ में लिखी है और अनुमान होता है कि इन्होंने रामचंद्र की भी कथा लिखी थी। फिर राग रागिनियों का वर्णन अपने राग रत्नाकर में अच्छा दिया है। देव ने एक अष्टयाम नामक ग्रंथ लिखा। इसमें पहर और घड़ियों पर काव्य रचना की गई है।

देव ने एक नाटक भी लिखा है। हिन्दी साहित्य में नाटक ने अभी तक कोई उच्च स्थान नहीं ग्रहण किया। आधुनिक समय में तो कुछ नाटक लिखे भी गए हैं किंतु पूर्वकाल में इसका प्रायः अभाव ही था। विहार में विद्यापति ने दो नाटक लिखे थे किंतु विहारी नाटकों में और हिन्दी नाटकों में बहुत अंतर है। हिन्दी में जो नाटक पहले पहल लिखे गए थे वे केवल नाम ही मात्र को नाटक थे। वास्तव में वे नाटक के ढंग के न थे। नेवाज कवि ने शकुंतला नाटक लिखा था। देव कवि ने देव माया प्रपंच नाटक लिखा। यह ग्रंथ "कोई नाटक नहीं है, परंतु कुछ कुछ नाटक की भाँति लिखा गया है"।

देवदत्त एक बहुत ही उच्चकोटि के कवि थे। इन्होंने भिन्न भिन्न विषयों पर भिन्न भिन्न मनोहर छंदों में कविता की है। इनकी भाषा रस और माधुर्य पूर्ण है और इसके प्रयोग में इन्होंने सचमुच बड़ा ही कौशल दिखलाया है। अलंकारों का बड़ा मनोहर प्रयोग है और इनकी उपमाएँ और रूपक विशेष रूप से अच्छे हैं और अनुप्रास

और यमक भी बड़े अच्छे हैं। भाषा की मधुरता और उत्तमता में इनको सर्वश्रेष्ठ स्थान देना चाहिए। यह भाषा शुद्ध व्रजभाषा है। इनके छंद पढ़ते समय ऐसे सुहावने मालूम होते हैं जैसे हवा में लहलहाते हुए खेतों के छोटे छोटे पौधे। इनका वर्णन और विशेषणों का प्रयोग बहुत अच्छा होता है। इनकी रचना और शब्द प्रयोग देखिये :—

"रंगराती हरी हहराती लता
झुकि जाती समीर के झूकनसों।"
"देखि न परत देव देखि देखि परी बानि,
देखि देखि दूनी दिख साध उपजति है।"
"देखे विना दिख साधनहीं मरै,
देखुरी देखत हूँ न अघैये।"
"प्यौ सुधि द्योस गँवावति देवजू,
जामिनि जाम मनौ युग चारो।
"नीरज नैनी निहारिये नैनन,
धीरज राखत ध्यान तिहारो।"

सूरतिमिश्र

सूरति मिश्र देव काल के एक प्रसिद्ध भाषा-आचार्य थे। ये आगरा के रहने वाले बड़े भारी पण्डित थे। इन्हों ने अलंकार माला नामक एक उत्कृष्ट ग्रंथ दोहा छंदों में लिखा। इसमें उदाहरण सहित अलंकारों का वर्णन बहुत अच्छा दिया है। इनके काव्य सिद्धांत आदि ग्रंथों का भी पता मिला है। इनका नखशिख नामक ग्रंथ भी बहुत अच्छा है। सूरति मिश्र एक विख्यात टीकाकार भी थे। विहारी लाल की सतसई की इन्होंने बड़ी उत्तम टीका की है। इसी ग्रंथ पर जोधपूर के महाराज अमरसिंह ने इनको कविकुलपति की पदवी दी। यह टीका अमरचंद्रिका के नाम से प्रसिद्ध है। अमर महाराजा का नाम

था। केशवदास की कवि प्रिया की भी टीका इन्होंने अच्छी लिखी है। इसमें केवल कठिन छंदों ही की टीका की गई है। इसका नाम कवि प्रिया का तिलक है। रसिक प्रिया पर भी इन्होंने टीका बनाई। सूरति मिश्र ने गद्य भी लिखा है जो ब्रजभाषा में है। इन्होंने बैताल पंचविंशति नामक ग्रंथ का अनुवाद किया। जान पड़ता है कि इन्होंने राम चरित्र और कृष्ण चरित्र ग्रंथ भी लिखे। मिश्र जी एक उच्चकोटि के कवि थे जिनको रचना पाण्डित्य पूर्ण और भाषा मधुर है। देखिये :—

" एरी मृगनैनी पिकनैनी सुखदेनी अति,
तेरी यह बेनी तिरबेनी ते सरस है।" नखशिख

श्रीपति कवि भी अच्छे आचार्य थे, जो कालपी के रहने वाले थे।

श्रीपति

इनका लिखा हुआ श्रीपति सरोज या काव्य सरोज एक उत्तम ग्रंथ है जिसमें काव्य का पूरा और उत्कृष्ट वर्णन दिया हुआ है। इन्होंने कुछ और भी ग्रन्थ लिखे हैं जिनमें एक अलंकार ग्रन्थ भी है। श्रीपति एक उच्च कोटि के कवि थे जिनकी कविता प्रत्येक विषय पर उत्कृष्ट है। अनुप्रास इन्होंने जहाँ तहाँ अच्छे लिखे हैं किन्तु इनकी उपमाएं और रूपक बहुत ही अच्छे हैं। देखिये :—

" गहगही गरुवी गुराई गोरी गोरे गात,
श्रीपति बिलौर सीसी ईंगुर सौं भरीसी।
विज्जु थिर धरीसी कनक रेख करी सी,
प्रबाल छबि हरी सी लसत लाल लरी सी॥"
" श्रीपति विलोकि सौति बारिज मलिन होति,
हरषि कुमुद फूले नंद को दुलारो है॥"

कवींद्र भी भाषा के एक आचार्य थे। कवींद्र इनकी पदवी थी जो इन्हें राजा हिम्मतसिंह से मिली थी। नाम इनका उदयनाथ था। कई दरबारों में इनका सम्मान हुआ था और इन्होंने भी वहाँ के राजाओं की प्रशंसा लिख चर कृतज्ञता प्रकट की। कवींद्र की पदवी इनको रस चंद्रोदय नामक ग्रन्थ बनाने पर मिली थी। कवींद्र ने शृंगार रस और वीर रस दोनों की अच्छी कविता की। युद्ध और वीरता का इन्होंने उत्कृष्ट वर्णन किया है। ये एक उच्च कोटि के कवि थे जिन्होंने उत्तम व्रजभाषा में कविता की है। देखिये :—

कवींद्र

"पगनि में छाले परे नाँघिबे को नाले परे,
तऊ लाल लाले परे रावरे दरस के।"

"तरल तिहारी तरवारि पन्नगी को कहूँ,
मंत्र है न तंत्र है न जंत्र है न जरी है।"

इनके पिता कालीदास और पुत्र दूलह भी प्रसिद्ध कवि थे।

इसकाल में टीकाकार अच्छे अच्छे हुए। सूरति मिश्र का वर्णन हो चुका है। कृष्ण कवि भी अच्छे कवि थे। सुना जाता है कि ये कविवर बिहारीलाल के पुत्र थे। इन्होंने बिहारी सतसई की टीका की है जो प्रशंसनीय और कविता-पूर्ण है। यह टीका घनाक्षरी और सवैया छंदों में है जो अनुवाद होते हुए भी इनके कवित्व का पूरा परिचय देती है। बिहारी के इस दोहे का :—

टीकाकार

"थोरेई गुन रीझते, बिसराई वह बानि।
तुमहूँ कान्ह भयो मनौ, आजु कालिह के दानि॥"

इन्होंने इस प्रकार अर्थ लिखा है :—

"रीझते रंचक ही गुन सों वह बानि बिसारि मनौ अब दीनी।
जानि परी तुमहू हरिजू कलिकाल के दानिन की गति लीनी॥"

कुछ दिन बाद हरिचरणदास कवि हुए जिन्होंने सतसई, कवि प्रिया, रसिक प्रिया और भाषा भूषण की उत्तम टीकाएँ रचीं।

इसी समय में एक प्रसिद्ध भक्त कवि टीकाकार हुए जिनका नाम प्रियादास था। ये नाभादास जी के शिष्य थे और उन्हीं की आज्ञा से उनके भक्तमाल नामक विख्यात ग्रंथ की टीका बनाए। यह टीका अपने ढंग की अनोखी है। इसमें किसी प्रकार का अर्थ या व्याख्या नहीं है। कहना चाहिये कि यह टीका वास्तव में वृहत् भक्तमाल है क्योंकि जिन भक्तों का वर्णन भक्तमाल में थोड़े में दिया है उन्हीं का वर्णन टीका में विस्तृत रूप से दिया है और बहुत सी नई बातें बताई हैं। अतएव यह मूल से भी अधिक उपयोगी है। यह ग्रन्थ अधिकतर घनाक्षरी छंदों में लिखा है और इसका आकार भक्तमाल से लगभग दो गुना हो गया है। (नाभादास का वर्णन भी देखिये)।

भक्तकवि

यह काल भक्त कवियों के लिये अधिक प्रसिद्ध नहीं है तथापि कुछ अच्छे अच्छे भक्त कवि हुए। प्रियादास जी एक बड़े भक्त और अच्छे कवि थे। घनानंद और नागरीदास महाराज ने अच्छी भक्तिपूर्ण कविता की। सिक्ख गुरुगोविंद सिंह ने भी धर्म और भक्ति संबंधी कविता की और छत्रसिंह ने महाभारत की भक्ति पूर्ण कथा लिखी। घनानंद दिल्ली के रहने वाले थे। इनकी कविता में भक्ति भरी हुई है और प्रेम का वर्णन अच्छा है। लिखते हैं :—

"अति सूधो सनेह को मारग है जहाँ नेको सयानप बाँक नहीं।
तहाँ साँचे चलैं तजि आपनपौ झिझकैं कपटी जो निसाँक नहीं॥"

इन्होंने व्रज लीलाओं का भी वर्णन किया है और व्रज वर्णन नामक इनका एक ग्रंथ भी है। इनकी भाषा सरस होती थी। जानने की बात

है कि इनके एक ग्रन्थ का पता मिला है जिसका नाम इश्क़लता है—हिन्दी और उर्दू शब्दों को कैसा जोड़ा है।

नागरीदास

नागरीदास रूपनगर के महाराज थे और इनका जन्म भी वहीं हुआ था। पीछे कृष्णगढ़ राजधानी हुई। इनका वास्तविक नाम सावंतसिंह था। नागरीदास या नागरि इत्यादि नाम इन्होंने अपनी कविता में रखाथा। नागरीदास नामधारी कई कवि हो चुके हैं। ये सभी श्रीकृष्ण के भक्त थे। महाराज नागरीदास बड़े वीर पुरुष थे और अपनी वीरता का परिचय यह दस ही वर्ष की अवस्था से देने लगे। अंत में इनको अपने भाई ही से बहुत युद्ध करना पड़ा। नागरीदास जीत तो गए लेकिन वह "कलह" उनसे न सहा गया और राज अपने पुत्र को सौंप कर आप ब्रज में वास करने लगे और श्रीकृष्ण के पूरे भक्त हो गए। इन्होंने लिखा भी है :—

"कबहुँ नागरीदास अब, तजै न ब्रज को बास।"

संसार के लिये लिखा है :—

"कहूँ न कबहूँ चैन जगत दुख कूप है।
हरि भक्तन को संग सदा सुखरूप है॥"

ये बड़े उच्च कोटि के कवि और भारी महात्मा हो गए और इनका सम्मान भी बहुत होता था।

नागरीदास ने ७५ ग्रंथ रचे हैं। इनकी भाषा मुख्यतः ब्रजभाषा थी जिसमें कहीं कहीं संस्कृत, फ़ारसी या मारवाड़ी इत्यादि प्रांतीय भाषाओं का भी मिश्रण है। कहीं कहीं खड़ी बोली में भी इन्होंने कविता की है और कहीं कहीं गद्य भी लिखा है।

नागरीदास ने बहुत से विषयों पर कविता की है। एक ओर तो वैराग्य के छंद लिखे और भक्ति की कविता की; दूसरी ओर होली और दीवाली का वर्णन किया; एक ओर नखशिख और शिखनख

लिखा; दूसरी ओर राम चरित माला लिखा; एक ग्रन्थ सिंगार सार लिखा, दूसरा भोजनानंदाष्टक, तीसरा भक्तिसार और चौथा वैरागवल्ली। इनका एक ग्रन्थ इश्क़चमन और एक मजलिस मंडन नामक भी है। ये फ़ारसी के भी बड़े भारी पंडित थे और कहीं कहीं फ़ारसी के शब्द ख़ूब भरे हैं जैसे :—

"फिर चश्म बिन बिचारी शायर ज़बान क्या है।"

इन्होंने कहीं कहीं सूरदास के ढंग के पद लिखे हैं :—

"हमारी सबही बात सुधारी,
कृपा करी श्रीकुंजबिहारिनि अरु श्रीकुंजबिहारी।"
"हम ब्रज सुखी ब्रज के जीव,
प्रान तन मन नैन सरबस राधिका को पीव।" इत्यादि

नागरीदास की कविता बड़ी ही उत्तम, सरस और मनोहर है।

ब्रज मण्डल में इन महात्मा के साथ इनकी उपपत्नी बनीठनी जी भी रहती थीं। यह भी एक भक्त कवि थीं और इनकी कविता भी सरस होती थी। इन्होंने ब्रजभाषा में कविता की जिसमें राजपूतानी भाषा का मिश्रण है। जैसे :—

"सुन्दर रूप लुभाई गति मति हौं गई ज्यूँ मधु माँखड़ियाँ।"

यह पुरुष वाचक रसिक बिहारी नाम से कविता करती थीं, नागरीदास के पिता महाराज राजसिंह भी कविता करते थे।

धर्म संबंधी कविता करने वालों में सिक्ख गुरुगोविंदसिंह और जैन भूधरदास प्रसिद्ध थे। गुरुगोविंद सिंह ने कई ग्रन्थ लिखे। साधारण दृष्टि से यह अच्छे कवि थे। यह कवि, धार्मिक गुरु और जातीय नेता थे। भूधरदास ने भूधर विलास, जैन शतक और पार्श्वपुराण नामक ग्रंथों की रचना की जिनमें अंतिम ग्रन्थ बड़े ही आदर की दृष्टि से देखा जाता था। यह अच्छे कवि थे और ब्रजभाषा में कविता करते थे जिसमें अवधी और खड़ी बोली का भी मिश्रण

है। इनके उपदेश बहुत अच्छे हैं, और इनके उपदेशों में कबीर की सी आलोचना झलकती है। कहते हैं :—

"पोथी के पत्रा बाँचता घरघर कथा कहता फिरै,
निज ब्रह्म को चीन्हा नहीं ब्राह्मण हुआ तो क्या हुआ ॥"

कथाप्रासंगिक कवि

छत्र कवि ने भक्तिपूर्ण कथा महाभारत की लिखी। इन्होंने कहीं कहीं संस्कृत की कथा में अदल बदल भी कर दिया है। इनके ग्रन्थ का नाम विजय मुक्तावली है जिसमें महाभारत की कथा का संक्षिप्त वर्णन है। छत्र कथा वर्णन करने में सफल हुए हैं और इनका ग्रन्थ अच्छा उतरा है। जानकी रसिक शरण नामक कवि ने एक अवध सागर ग्रन्थ लिखा जिसमें श्रीराम-चंद्र जी का वर्णन तथा यशगान है। यह एक बड़ा ग्रन्थ है जिसमें विस्तृत वर्णन दिए हुए हैं। यह अच्छी कविता करते थे। एक और कवि ने सीतायन नामक ग्रंथ लिखा जिसमें श्रीसीता जी की कथा विस्तृत रूप से वर्णित है। कथा प्रासंगिक कवियों में श्रीधर का नाम भी प्रसिद्ध है। इन्होंने कई ग्रन्थ लिखे जिनमें एक जंगनामा है, (यह फारसी शब्द है) इसमें फर्रुखसियर और जहाँदारशाह के युद्ध का वर्णन भिन्न भिन्न छंदों में दिया है। इन्होंने कृष्ण चरित्र और जैन मुनियों का वर्णन भी किया और नायिका भेद तथा राग रागिनियों का ग्रंथ बनाया। किन्तु कथा प्रासंगिक कवियों में सब से श्रेष्ठ और प्रसिद्ध लाल कवि थे।

लाल

लाल कवि का पूरा नाम गोरेलाल था। प्रसिद्ध महाराज छत्रसाल ने इन्हें पाँच गाँव दिये और उन्हीं एक में यह रहने लगे। इन्होंने अपनी कविता में महाराज का विस्तृत वृतांत दिया है। इनके तीन प्रसिद्ध ग्रंथ हैं—छत्र प्रकाश, राज विनोद और विष्णु विलास। छत्र प्रकाश एक उच्च कोटि का काव्य ग्रंथ है जिसमें बहुत ही उत्कृष्ट वर्णन दिए हैं। इन वर्णनों में

एक विशेष गुण यह भी है कि वे इतिहास से मिलते हैं। इसमें महाराज छत्रसाल और उनके पिता की विस्तृत जीवनी दी हुई है। इसके अतिरिक्त बुंदेलखंड के पूर्वकालीन राजाओं का भी हाल दिया है। चंपतिराय की विजयों और छत्रसाल की वीरता पूर्ण लड़ाइयों का सच्चा और उत्तम वर्णन है। लाल ने केवल प्रशंसा न करके सच्ची बातों का वर्णन किया है। इसके पढ़ने से छत्र साल की वीरता, भक्ति और वीरों पर श्रद्धा का पूरा परिचय मिलता है। यह छत्रप्रकाश केवल दोहा और चौपाइयों में लिखा हुआ है और इसमें अलंकारों का आडम्बर न होते हुए भी यह बड़ा ही मनोहर ग्रंथ है। यों तो इसके सभी वर्णन उत्कृष्ट हैं किंतु युद्ध वर्णन बहुत ही अच्छे और विस्तार पूर्वक हैं। युद्ध के संबंध में लिखते हैं :—

"लै अवतार बड़े कुल आवै, जुद्धन जुरै जगत जस गावै"

इन्होंने जिस विषय पर लेखनी उठाई है उसी को भली भाँति निबाहा है। उद्यम पर यह बड़ा जोर देते थे और ठीक ही था। इनके नायक ने उद्यम ही से इने गिने सिपाहियों की सहायता से मुग़ल सम्राट के विरुद्ध सफलता पाई थी। देखिये :—

"समुद उतरि उद्यम ते पर जैये। उद्यमते परमेसुर पैये॥
"साहस तजि उर आलस माँड़ै, भाग भरोसे उद्यम छाँड़ै।
ताहि तजे जग संपति ऐसे, तरुणी तजै वृद्ध पति जैसे॥"

इत्यादि

फिर उपदेश भी अच्छा दिया है :—

"विपति माँह हिम्मत ठिक ठानै, बढ़ती भए छिमा उर आनै"

संसार और काल के विषय में लिखते हैं :—

"यह संसार कठिन रे भाई, सबल उमड़ि निरबल को खाई"
"छनिक राज संपति के काजै, बंधुन मारत बंधु न लाजै"

"कछू काल गति जानि न जाई, सब ते कठिन काल गति भाई" जान पड़ता है कि तुलसीदास जी की चौपाइयां पढ़ रहे हैं। लाल की भाषा अवधी और बुंदेलखंडी मिश्रित ब्रजभाषा है जो सुंदर और सुपाठ्य है। यह बड़े उच्च कोटि के कवि थे।

राज विनोद नामक ग्रंथ में श्रीकृष्ण जी का वर्णन है और विष्णु विलास में नायिका भेद का वर्णन है। पहले ग्रंथ में भिन्न भिन्न छंदों का प्रयोग है किंतु दूसरे में केवल बरवै छंद लिखा है।

बैताल

इस काल में बहुत से अच्छे अच्छे कवि हुए और बहुतों ने अनेक विषयों पर कविता की। एक कवि बैताल नामक थे। ये उच्च कोटि के कवि थे और इन्होंने भिन्न भिन्न विषयों पर कविता की है विशेषतः नीति और सामान्य जीवन की बातों पर। इन्होंने बतलाया है कि किन किन के मरने पर रोना न चाहिए; धन क्या क्या कर सकता है इत्यादि। चंचलता के संबंध में लिखते हैं :—

"हैं ये चारो चंचल भले राजा पंडित गज तुरी।
बैताल कहै विक्रम सुनो तिरिया चंचल अति बुरी॥"

"सून" होने के संबंध में कहते हैं :—

"ससि बिन सूनी रैन ज्ञान बिन हिरदै सुनो।
कुल सूनो बिन पुत्र पत्र बिन तरवर सुनो॥
× × ×
बैताल कहै विक्रम सुनो पति बिन सूनी कामिनी॥

विक्रम का नाम इनके सभी छंदों में आता है। ज्ञात होता है कि यह राजा विक्रमशाह थे और बैताल उन्हीं के यहाँ रहते थे।

बैताल ने कई विषयों पर कविता की और पहेलियां इत्यादि भी लिखीं किंतु श्रृंगार रस पर लेखनी न उठाई। इनकी भाषा अवधी मिली ब्रज भाषा है। यह बड़े ही उदंड कवि थे।

इनके अतिरिक्त रसनिधि, कुमार मणि, सीतल और गंजन भी उच्चकोटि के कवि थे। रसनिधि का नाम पृथ्वी सिंह था। इनका सबसे प्रसिद्ध ग्रंथ रतन हज़ारा है। इन्होंने और भी ग्रंथ लिखे जैसे रस निधि सागर, गीत संग्रह, बारहमासी, स्फुट दोहा इत्यादि। कुमार मणि संस्कृत और हिन्दी दोनों के बड़े पंडित और कवि थे। हिन्दी में इन्होंने रसिक रसाल नामक ग्रंथ बनाया। यह रीति का एक अच्छा ग्रंथ है। इनकी कविता चित्ताकर्षक है और उसमें अनुप्रास अच्छे हैं। सीतल हिन्दी, संस्कृत और फ़ारसी के बड़े विद्वान थे। इन्होंने गुलज़ार चमक नामक ग्रंथ लिखा। इसमें कई विषयों का वर्णन है किंतु नखशिख प्रधान है। यह वैष्णव संप्रदाय के एक महंत थे। इनके छंद बहुत मनोहर और सरस हैं। इनकी भाषा खड़ी बोली है जिसमें कहीं कहीं संस्कृत और कहीं कहीं फ़ारसी मिली है। देखिये :—

अन्य कवि

मुख सरद चंद्र पर स्रमसीकर जगमगैं नखत गन जोती से।
कै दल गुलाब पर शबनम के हैं कनके रूप उदोती से॥"

इनकी कविता में उर्दू का ढंग भी है।

खड़ी बोली के कवियों में सीतल का नाम बहुत प्रसिद्ध है क्योंकि इनके पहले खड़ी बोली का पूरा पद्य ग्रंथ नहीं लिखा गया था। गंजन ने क़मरूद्दीनख़ाँ हुलास नामक ग्रंथ लिखा। कमरूद्दीन ख़ाँ मुहम्मदशाह बादशाह के वज़ीर थे और उन्हीं की आज्ञा से यह ग्रंथ बनाया गया था। इस ग्रंथ में इनकी बड़ी प्रशंसा की गई है। इसके अतिरिक्त उसमें रस भेद और भाव भेद का भी वर्णन है। इनका षट्ऋतु वर्णन बहुत अच्छा है। गंजन की भाषा में फ़ारसी के शब्द भी आए हैं यहाँ तक कि चंद्रमुखी के लिए महताब मुखी लिखा है। इनकी भाषा मनोहर है।

बख़्शी हंसराज भी एक उच्च कोटि के कवि थे। यह पन्ना के रहने वाले कायस्थ और वैष्णव कवि थे। इनका एक उत्कृष्ट ग्रंथ सनेह सागर है। इसमें राधा कृष्ण की लीलाओं का वर्णन बड़ी मनोहरता के साथ दिया है। इनके तीन चार ग्रंथ और मिले हैं। उनमें भी राधा कृष्ण ही का विषय वर्णित है। इनकी रचना बड़ी सरस है। इस काल में वैष्णव मत के अन्य कई साधारण कवि हुए। अनन्य अली और लोकनाथ राधावल्लभी संप्रदाय के कवि थे। रूप लाल गोस्वामी जी वल्लभी संप्रदाय के थे। इन्होंने कई ग्रंथ लिखे। अनन्य अली ने सब मिलाकर १०० ग्रंथ लिखे हैं। लोकनाथ की धर्मपत्नी भी कविता करती थीं। एक वैष्णव कवि रस रंग जी थे जो पहले मुसलमान थे। इन्होंने ब्रज भाषा और खड़ी बोली में बानी नामक ग्रंथ लिखा।

वैष्णवकवि

इस काल में मुसलमान कवि भी बहुत हुए। इनमें आलम का नाम सब से प्रसिद्ध है और यह उच्चकोटि के कवि थे किंतु दुर्भाग्य वश इनका कोई ग्रंथ देखने में नहीं आया और न इनका समय ही निश्चित रूप से ज्ञात होता है। जान पड़ता है कि ये एक ब्राह्मण थे जो किसी मुसलमान स्त्री के प्रेम में पड़ कर मुसलमान हो गए और उससे विवाह कर लिया। उस स्त्री का नाम शेख़ था। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि आलम और शेख़ एक ही पुरुष का नाम था। आलम बड़े प्रेमी कवि थे और इनकी कविता बड़ी सरस और मनोहर है। इन्होंने भाव भी अच्छे दर्शाए हैं। विरह के छंद में लिखा है :—

मुसलमान कवि

"आलम जौन से कुंजन मैं करी केलि तहाँ अब सीस धुन्यौ करैं।
नैनन में जो सदा रहते तिनकी अब कान कहानी सुन्यौ करैं॥"

फिर प्रेम का प्रभाव देखिए :—

"कारो कान्ह कहत गँवारी ऐसी लागत है,
मोहिं वाकी स्यामताई लागति उज्यारी है।"

इस समय में कई दम्पति कवि हुए जैसे लोकनाथ और उनकी स्त्री तथा नागरीदास और उनकी स्त्री। आलम की स्त्री भी कवि थी और अच्छी कविता करती थी। यह रंगरेज़िन थी जिन्होंने आलम के एक पद का जोड़ा लगा कर उनको मोहित कर लिया यहाँ तक उन्होंने अपना धर्म भी उसी के लिए छोड़ दिया। पद यह थे :—

"कनक छरी सी कामिनी काहे को कटि खीन" आलम
"कटि को कंचन काटि विधि कुचन मध्य धरि दीन" शेख

आलम ने शेख को आपनी पगड़ी रंगने के लिए दी थी। उसी में ऊपर का पद लिखा हुआ किसी काग़ज में बँधा था। शेख ने उसका उत्तर बनाकर पगड़ी ही में रख दिया। जब आलम ने पढ़ा तो उसको बहुत रुपया दिया। दोनों में प्रेम हो गया और अंत में विवाह भी हुआ। शेख की कविता मधुर और प्रेम मय है। इसकी भाषा मनोहर व्रज भाषा है। देखिये :—

"एरे बैरी बार ये रहे हैं पीठि पाछे तातें
बार बार बाँधति हैं बार बार कसि कै।"

अब्दुल रहमान और महबूब भी अच्छे कवि थे। अब्दुल रहमान भाषा के अच्छे ज्ञाता थे और इन्होंने अपनी भाषा कठिन बना दी है। यमक और श्लेष इन्होंने अधिक लिखा है, इनके एक ग्रंथ का नाम ही यमक शतक है, दूसरा ग्रंथ इनका नखशिख है। महबूब भी अच्छी कविता करते थे। इनकी कविता सानुप्रास होती थी।

इनके अतिरिक्त दत्तण, प्रीतम और याकूबख़ाँ के नाम भी स्मरणीय हैं। दत्तण का असली नाम अहमदुल्लाह था। इन्होंने

दूषण विलास नामक ग्रंथ लिखा जिसमें रसों का वर्णन है। प्रीतम का असली नाम अली मुहिब्ब ख़ाँ था। इन्होंने खटमल बाईसी नामक एक ग्रंथ लिखा। हास्य विषय का यह अच्छा ग्रंथ है जो सुंदर ब्रज भाषा में लिखा है। इसमें लिखते :—

"विधि हरिहर और इनते न कोऊ तेऊ,
खाट पै न सोवैं खटमलन को डरि कै।"

याक़ूब ख़ाँ ने रसिक प्रिया पर एक टीका लिखी और रसभूषण नामक एक अलंकार ग्रंथ बनाया और दिल्ली के आज़मखाँ ने नायिका भेद का शृंगारदर्पण नामक ग्रंथ बनाया।

स्त्री कवि

इस समय के कवियों में कुछ हिन्दू और मुसलमान स्त्रियाँ भी थीं जैसे शेख रंगरेज़िन, रसिक विहारी और लोकनाथ जी की स्त्री। इनका वर्णन हो चुका है।

मराठी और जैन कवि

महाराष्ट्र के कवियों ने भी कुछ हिन्दी में कविता की किंतु पहले की भाँति अधिक संख्या में नहीं। इस समय उत्तरी भारत नादिरशाह और अबदाली के आक्रमणों तथा मुग़लराज्य की दुर्बलता और अनुचित शासन से पीड़ित था जान पड़ता है कि इन्हीं कारणों से हिन्दी फैलने नहीं पाई जैसी कि वह मुग़ल साम्राज्य के सुदिनों में फैली थी। तथापि दो तीन मरहठा कवियों ने हिन्दी में भी कविता की। मराठी भाषा के प्रसिद्ध कवि मोरोपंत ने कुछ हिन्दी कविता रची; मराठी कवि दयाल नाथ ने भी कुछ हिन्दी में कविता बनाई और अमृतराय ने हिन्दी और मराठी दोनों में कविता की।

जैन कवि भी इस समय में बहुत कम और साधारण थे। केवल भूधरदास उत्कृष्ट कविता करते थे जिनका वर्णन हो चुका है। खुशालचंद काला ने हरिवंश पुराण, पद्म पुराण और

उत्तरपुराण इत्यादि कई ग्रंथों की रचना की। भूधरमिश्र और द्यानति राय भी जैन कवि थे।

अन्य कवि

जैसा ऊपर कहा जा चुका है इस काल में बहुत से कवि हुए और उन्होंने बहुत से विषयों पर कविता की। एक बात और देखने में आती है कि इस समय के कवियों में कई ऐसे थे जिन्होंने ५०, ५० से भी अधिक ग्रंथों की रचना की। कुछ ऊपर वर्णन किए हुए कवियों के अतिरिक्त कुछ और के नाम स्मरणीय हैं। इनमें चंद, ऋषिनाथ और जोधराज अच्छी कविता करते थे। चंद ने कविवर बिहारीलाल के दोहों पर कुंडलियाँ लगाईं जो अच्छी और मनोहर हैं। ये कुंडलियाँ चंद ने पठान सुलतान के नाम पर बनाई हैं जो भूपाल के नवाब थे। शायद इन्होंने एक महाभारत भाषा नामक ग्रंथ भी रचा है। ऋषिनाथ ने अलंकारमणि मंजरी नामक ग्रंथ लिखा। यह ग्रंथ ब्रजभाषा में भिन्न भिन्न छंदों में लिखा है जिनमें दोहे अधिक हैं। इनकी कविता मनोहर और भावपूर्ण होती थी। इनके पुत्र ठाकुर भी एक प्रसिद्ध कवि थे। जोधराज ने हम्मीर काव्य लिखा। इसमें हम्मीर का वर्णन दिया हुआ है जो अधिकांश ऐतिहासिक है। यह एक उत्तम ग्रंथ है जिसमें घटनाओं का सच्चा और विस्तृत वर्णन दिया हुआ है। यह ग्रंथ एक राजा की आज्ञा से बनाया गया था।

आचार्य

भाषा के आचार्यों का वर्णन हो चुका है किंतु रस, अलंकार, नायिका भेद इत्यादि विषयों पर अन्य बहुत से कवियों ने भी ग्रंथ रचना की। केशवराय बघेलखंड के कवि थे। इन्होंने रसलतिका और नायिका भेद नामक ग्रंथ लिखे। बुंदेलखंड के कुंदन कवि ने भी एक नायिका भेद लिखा और दिल्ली के बीर नामक कवि ने कृष्णचंदिका लिखी। यह ग्रंथ सुन्दर ब्रजभाषा में है और इसमें नायिका भेद और रस भेद का

वर्णन भिन्न भिन्न छंदों में किया हुआ है। इस काल में इन विषयों पर अधिक कविता की गई और भिन्न भिन्न प्रान्तों में।

कथाएँ

इनके अतिरिक्त कथा लिखने वाले कवि भी बहुत हुए जिनमें कुछ का वर्णन हो चुका है। शेष में केशवराज ने जैमुनी की कथा लिखी; रामदास ने उषा अनिरुद्ध की कथा और प्रह्लादलीला लिखी; हरिसेवक ने कामरूप की कथा लिखी और खंडन ने राजा मोहमर्दन की कथा लिखी। जोधपूर दरबार में एक करनीदान नामक कवि थे। इन्होंने सूर्यप्रकाश नामक एक इतिहास ग्रंथ लिखा जिसमें राठौरों का वर्णन है। भगवानमिश्र ने एक शिलालेख गद्य में लिखा है। उसके भाषा में लिखे जाने का कारण यह दिया हुआ है कि कलियुग में संस्कृत के पढ़ने वाले कम हैं। इस लेख में राजा दिक्पालदेव का वर्णन और उनकी प्रशंसा है और उनके पूर्वजों का नाम अर्जुन तक बतलाया गया है।

भक्ति इत्यादि

भक्ति, ज्ञान, वेदांत इत्यादि विषयों की कविता कुछ शिथिल रही। वेदांत का एक ग्रंथ ब्रह्मविलास इच्छाराम अवस्थी ने लिखा और एक ग्रंथ विज्ञान विलास गंगापति ने लिखा। चरणदास धूसर ने योग और भक्ति पर अनेक ग्रंथ बनाए और सुखदेव ने गद्य और पद्य में मानसहंस रामायण की रचना की और आनंददास ने भगवद्गीता लिखी।

अन्य विषय तथा कवि

और विषयों पर भी कुछ कवियों ने कविता की। लोकमणि ने वैद्यक ग्रंथ लिखा; कृपाराम ने समयबोध नामक ज्योतिष का ग्रंथ लिखा; शारदापुत्र और दशसीस ने एकएक कोकसार बनाया। गोपालसिंह ने रागरत्नावली लिखी और देवी बंदीजन ने सूमसागर लिखा। इसमें सूमों का वर्णन दिया है। घाघ भी इसी समय में हुए। यह कन्नौज

के रहने वाले थे। गांव गांव में इनका नाम विख्यात है। यह कोई बड़े कवि न थे किंतु इन्होंने सामान्य जीवन के संबंध में बहुत सी नीति बतलाई है। कृषी संबंधी नियम तथा जीवन निर्वाह की बातें इन्होंने ज़ोरदार भाषा में बतलाई हैं जो आजकल भी उपयोगी हैं। किसान लोग बहुधा इनके दोहे इत्यादि कहा करते हैं। जैसे

"माघ के ऊखम जेठ के जाड़, पहिले बरिखे भरिगे गाड़।
कहै घाघ हम होब वियोगी, कुआँ खोदि कै धोई हैं धोबो"
"जेठ मास जो तपै निरासा, तो जानो बरसा की आसा"

इत्यादि

अन्य कवियों में मोहन भट्ट, महाराज अजीतसिंह, कुंवर मेदिनीमल्ल और हिम्मतसिंह के नाम जानने योग्य है। मोहन भट्ट बांदा के रहने वाले बड़े भारी पंडित थे। ये कविता भी करते थे। ये कई राजाओं के यहाँ रहे और इनाम पाये। जैपूर के महाराज ने इन्हें कविराज शिरोमणि की उपधि भी दी। इनके पुत्र पद्माकर भट्ट बड़े प्रसिद्ध कवि हुए। महाराज अजीतसिंह जोधपूर के राजा थे। इनके पिता का नाम महाराज जसवंतसिंह था जिन्होंने भाषा भूषण नामक प्रसिद्ध ग्रंथ की रचना की थी। अजीतसिंह को जन्म ही से घोर कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, तिस पर भी इनको कविता करने का समय मिल जाता था। इन्होंने राजपूतानी मिश्रित ब्रजभाषा में छः सात ग्रंथों की रचना की। कुंवर मेदिनी मल्ल पन्ना महाराज छत्रसाल के पोते थे। इन्होंने भी मनोहर कविता की है। हिम्मतसिंह भी पन्ना ही के थे। इन्होंने फारसी ग्रंथ दफ़्तर नामा का हिन्दी अनुवाद किया है।

तीसरा प्रकरण

दूसरा भाग

देव के बाद से लल्लू जी लाल के पहले तक

(१८ वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध)

भारत के इतिहास में १८ वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध एक पतन काल है। मुग़ल साम्राज्य बिलकुल दुर्बल हो गया था। सम्राट कभी मरहठों के हाथ, कभी अंगरेज़ों के हाथ और कभी किसी वज़ीर के हाथ में एक जीव धारी पुतली स्वरुप था। एक ओर अंगरेज़ों और फ़्रांसीसियों का द्वन्द्व चल रहा था; दूसरी ओर अंगरेज़ों और भारतीय शक्तियों में लड़ाई हो रही थी और तीसरी ओर भारतीय शक्तियाँ स्वयं आपस में युद्ध कर रही थीं, किंतु धीरे धीरे घटनाएं यही बतला रही थीं कि अंगरेज़ों ही का राज्य स्थापित होगा। थोड़े ही दिनों में भारत की स्वतंत्रता जो कुछ थी वह भी अब जाने वाली थी। ऐसे समय में साहित्य की उन्नति की आशा भी न करनी चाहिए। कम से कम साहित्य की कोई स्वतंत्र धारा निकलने की तो बिलकुल ही आशा न करनी चाहिए और वास्तव में बात भी ऐसी ही हुई। पहले के समय के कवियों ने जो धाराएं प्रवाहित की थीं उन्हीं का अनुसरण होता रहा और इस अनुसरण में स्वभावतः वास्तविक गुणों की कमी और वाह्य आडम्बर की वृद्धि होती गई। इसमें संदेह नहीं कि इस काल में कवियों की संख्या बहुत अधिक थी और वे कवि भी अच्छे थे किंतु बहुत उच्चकोटि का एक भी कवि न था।

पूर्व काल के कवियों ने काव्य और काव्य रचना इत्यादि विषयों पर कविता करके अपनी आचार्यता प्रकट की थी। इस काल में

यह प्रथा इतनी बढ़ी और रीति ग्रंथ इतने लिखे गए कि स्वतंत्र और मूल कविता पीछे पड़ गई। आचार्यता से काव्य संबंधी सब बातों का ज्ञान अवश्य होता है तथापि मूल कविता का स्थान आचार्यता की कविता नहीं ग्रहण कर सकती। इसके अतिरिक्त केशव और भूषण आदि ने जो इस विषय पर ग्रंथ लिखे उन ग्रंथों की कविता उच्चकोटि की है। उनमें आचार्यता और कवित्व का मनोहर संयोग है। परन्तु बाद वाले कवियों में कवित्व का बल कम था जिससे आचार्यता ही प्रधान हो गई। दास इस काल के सब से प्रसिद्ध आचार्य थे। इनके अतिरिक्त सोमनाथ, रघुनाथ और मनीराम इत्यादि ने भी अच्छी आचार्यता दिखलाई।

इस काल की दूसरी विशेषता शृंगार है। हिन्दी में शृंगार रस की कविता कई ढंग की है। यों तो चंदबरदाई ही ने शृंगार प्रधान कविता पृथ्वीराज रासो ऐसे ग्रंथ में की थी और विद्यापति ने इस रस की अच्छी कविता लिखी थी किंतु हिन्दी साहित्य में शृंगार ने वैष्णव कवियों के समय में ज़ोर पकड़ा। इस शृंगार की विशेषता यह थी कि वह भक्ति और धर्म से युक्त था। एक तो वह ईश्वर रूप कृष्ण और उनकी धर्म पत्नी राधा के आधार पर था। दूसरे उसे सदाचारी महात्माओं और धर्म-प्रवर्तकों ने अपनाया था और इसके अतिरिक्त बड़े उच्च कोटि के कवियों ने इसपर लेखनी उठाई थी। इन सब कारणों से उस समय की शृंगार-कविता हानिकारक न हो सकी। जब वह समय बीत गया तो बिहारी लाल का समय आया। इन्होंने कुछ कविता तो भक्ति इत्यादि रस पर की किंतु अधिकतर शृंगार की ओर ध्यान रखा। यह एक बड़े उच्च कोटि के कवि थे और इन्होंने अपने उच्च कवित्व को शृंगार के साथ रखा। लेकिन इनके बाद देव इत्यादि ने भक्ति और धर्म का मार्ग बिलकुल ही छोड़ दिया। केवल अपने कवित्व बल से कविता को

ऊँचा रखा। अब इस काल में दुर्भाग्य वश दोनों बातें जाती रहीं। श्रृंगार को महत्व पूर्ण बनाने के लिए न तो वह धर्म और भक्ति का बल था और न उसे कवित्व पूर्ण बनाने के लिए वह कवित्व ही का बल था। इस से श्रृंगार रस की कविता अब केवल श्रृंगार ही श्रृंगार रह गई और श्रृंगार का बल इतना बढ़ा कि प्रायः सभी कवियों ने इस रस की कविता की। इस कविता की एक विशेषता यह थी कि इसमें नायिका भेद और नायक नायिकाओं का अधिक वर्णन है अर्थात् श्रृंगार आचार्यता के साथ है। फिर नखशिख और षटऋतु का अधिक वर्णन है। इन वर्णनों में बहुधा उच्च भाव रहित पद्य ही पद्य मिलता है। कविता उच्चकोटि की न होने से ये वर्णन या तो केवल हानिकारक हो गए हैं या विलासिता प्रिय पाठकों के लिए मानोरंजक। वास्तव में उस समय के वायु मंडल में कोई उच्च आदर्श ही न था—न धर्म, न भक्ति, न सदाचार, न जातीयता, न स्वतंत्रता, न शांति। जब कवित्व शक्ति का किसी ओर संचार न हुआ तो कवियों ने एक ओर तो पुरानी रचनाओं की छान बीन करके अपनी आचार्यता दिखलाई दूसरी ओर स्त्री पुरुष संबंधी बातों को छेड़ दिया। उर्दू के कवि भी आशिक़ और माशूक़ ही की ओर ढले। इस समय के साहित्य पढ़ने से ऐसा जान पड़ता है कि वह आदर्श रहित और जीवन शून्य है तथापि श्रृंगार रस की दृष्टि से बहुत से कवियों ने अच्छी कविता की। इनमें दास, भूपति, दत्त, रघुनाथ, ठाकुर इत्यादि के नाम प्रसिद्ध हैं।

श्रृंगार रस की कविता के साथ साथ भाषा का भी अधिक श्रृंगार होने लगा। अलंकृत भाषा पूर्वही काल में बहुत थी इस काल में और भी बढ़ती गई यहाँ तक कि स्वाभाविकता का गुण जाता रहा। तुलसी दास और कबीर दास इत्यादि की भाषा स्वाभाविक होती थी और उसमें भाव इतने भरे रहते थे मानों

फूट निकलते हों। इनके बाद विहारी आदि कवियों ने भाषा को अलंकृत किया। उनकी कविता में भी भाव ऐसे भरे थे कि भाषा और भाव का मनोहर संयोग था। किंतु इस समय के कवियों ने भाषा केवल अलंकार मय कर दिया और उसमें भावों की बड़ी कमी पड़ गई। जान पड़ता है कि कवियों ने भाव की ओर ध्यान ही नहीं दिया। किंतु यह मानना ही पड़ेगा की भाषा में मधुरता पूरी रही। देखिये :—

" चंप चमेली कली चुनि कै अलवेली सी फूलनि सेज सँवारी।
कुंज की देहरी बैठि रही मग जोवत स्यामहि गोपकुमारी॥"

(शिवनाथ)

" बैठी रंग भरो है रँगीली रंग रावटी में,
कहां लौं सराहौं सुंदराई सिरताज की।
चाँदनी की, चंपक की, मैनका तिलोत्तमा की,
रंभा रमा रति की निकाई कौन काज की॥'

(हठी)

कथा प्रासंगिक कविता करने की भी प्रथा पुरानी थी। इस समय में साधारण कथाओं के अतिरिक्त धर्म संबंधी कथाएं अधिक लिखी गईं। ऐसे कवियों में गोकुल नाथ, गोपी नाथ, मधुसूदन दास, रघुराज सिंह इत्यादि के नाम प्रसिद्ध हैं।

वीर रस की कविता इस समय में बहुत कम हुई और ठीक ही था। इस समय में वीर ही कहाँ थे। यदि छत्रसाल और शिवाजी होते तो भूषण अवश्य निकलते। भरतपूर के एक राजा सूरज मल थे जिनका दूसरा नाम सुजानसिंह था। ये वीर पुरुष थे और इन्होंने बहुत सी लड़ाइयाँ सफलता पूर्वक लड़ीं। इनके आश्रय में सूदन नामक प्रसिद्ध कवि रहते थे। सूदन ने सूरजमल पर वीर रस की कविता की है जो बहुत प्रशंसनीय है।

भक्ति रस की कविता का प्रायः अभाव ही रहा। कुछ साधारण कवियों ने इस रस पर भी लेखनी उठाई किंतु वास्तव में इस समय में भक्ति रस तथा धर्म का प्रचार कहाँ होता क्योंकि ऐसी कविता तो शांत वायुमंडल में होती है या ऐसे समय में जब प्रचलित प्रथाओं के विरुद्ध कोई नया मत का प्रचार हो। इस समय इन दोनों में कोई बातें न थीं। हिन्दी कवि तो किसी न किसी राजा के आश्रित रहे किंतु उर्दू कवियों की ओर बड़ी दुर्दशा हो गई। ये बेचारे कुछ दिनों दिल्ली में रहे फिर उसका पतन होने पर लखनऊ भागे। तथापि भारत वर्ष से भक्ति तथा शांत रस का पूर्णतया अलोप भी नहीं हो सकता। कम से कम हिन्दू स्त्रियां तो अवश्य ही इस ओर झुकी रहती हैं। इस समय में सचमुच इन्हीं ने कुछ लाज रखी। सहजो बाई ने उच्चकोटि की भक्ति मयी कविता की। सुंदरिकुंवरि बाई ने अच्छी भक्तिपूर्ण कविता की। जगजीवन दास और चंद इत्यादि ने भी शांत रस या भक्ति रस की साधारण कविता की। चाचा वृन्दावन ने अच्छी कविता की। नीति संबंधी कविता गिरिधर और सहजो बाई इत्यादि ने की है।

इस काल को हम दो उपविभागों में विभाजित कर सकते हैं। दोनों में बहुत अधिक अंतर नहीं है और न कविता के विषय अथवा भाषा में कोई विशेष परिवर्तन ही हुआ। तिस पर भी यह विभाग करना इस कारण से उचित है कि दूसरे विभाग में गिरती हुई कविता कुछ सँभल गई। देव कवि के बाद ही से हिन्दी कविता की उत्तमता घटती गई और यह पतन दिन प्रति दिन बढ़ता गया। किंतु दूसरे उपविभाग में चल कर कविता ने फिर अपना गौरव बढ़ाया। पहला उपविभाग दूसरे से बड़ा है और उसमें बहुत से कवि भी हुए।

इस विभाग में आचार्य बहुत हुए जिनमें दास सब से प्रसिद्ध

प्रथमविभाग

दास

थे। ये बुंदेलखंड के प्रतापगढ़ परगना निवासी श्रीवास्तव कायस्थ थे। ये अच्छे पंडित और उच्च कोटि के कवि थे। इनके आश्रयदाता हिन्दूपति सिंह राजा पृथ्वी पति के भाई थे। दास कवि का पूरा नाम भिखारीदास था। इन्होंने काव्य कला पर कई ग्रंथों की रचना की है। इनके सब से उत्तम ग्रंथ शृंगार निर्णय और काव्य निर्णय हैं। शृंगार निर्णय में इन्होंने नायक नायिकाओं का वर्णन बहुत अच्छा दिया है और भाव अनुभाव इत्यादि का भी वर्णन किया है। इसमें जो नखशिख लिखा है वह बहुत ही अच्छा है। नैनों का वर्णन देखिये कितना मनोहर और कवित्व पूर्ण है :—

"कंज सकोच गड़े रहे कीच में मीनन बोरि दियो दह नीरन,
दास कहै मृगहू को उदास के बास दियो है अरन्य गंभीरन।
आपुस में उपमा उपमेय ह्वै नैन ए निंदत हैं कवि धीरन,
खंजन हू को उड़ाय दियो हलुके करि डारे अनंग के तीरन॥"

काव्य निर्णय एक बृहत् ग्रंथ है जिससे दास की पूरी आचार्यता का परिचय मिलता है। यह रीति ग्रन्थ का एक परमोत्तम ग्रन्थ है जिसमें अलंकार, ध्वनि, रसांग, भाव और दोष गुण इत्यादि का उत्कृष्ट वर्णन है।

रसों का वर्णन भिखारीदास ने अपने रससारांश नामक ग्रन्थ में किया है। इस ग्रंथ में दोहे अधिक आए हैं। इन्होंने साधारणतया स्वीकृत हावों और भावों के अतिरिक्त कुछ अपने विचार से हाव और भाव जोड़ दिए हैं। इन्होंने दूतियों को भिन्न भिन्न जाति में बाँट कर स्त्रियों का विस्तृत वर्णन किया है।

इनका एक ग्रंथ पिंगल पर भी है जो छंदोर्णव पिंगल के नाम

से प्रसिद्ध है । इन्होंने छंद प्रकाश नामक एक ग्रन्थ की भी रचना की है ।

काव्य कला के ग्रन्थों के अतिरिक्त इनके दो और ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं—विष्णु पुराण और नाम प्रकाश। ये दोनों संस्कृत ग्रन्थों के अनुवाद हैं। विष्णु पुराण संस्कृत विष्णु पुराण का अनुवाद है। यह बड़ा ग्रन्थ दोहों और चौपाइयों में लिखा है किंतु कहीं कहीं और छंद भी आए हैं। इस विचार से या भाषा के विचार से भी यह ग्रन्थ रामचरित मानस से मिलता है। किंतु कविता इसकी साधारण है तथापि ग्रन्थ उत्कृष्ट और रोचक बना है। नाम प्रकाश संस्कृत ग्रंथ अमरकोष का अनुवाद है। यह भी एक बड़ा ग्रन्थ है जो भिन्न भिन्न छंदों में लिखा है। इसकी कविता भी अच्छी है।

दास की भाषा माधुर्य पूर्ण शुद्ध व्रजभाषा है। भाषा की मधुरता में इनका स्थान बहुत उच्च है। इनकी भाषा में अलंकारों का उत्तम और सराहनीय प्रयोग है और वह भाषा बड़ी मधुर हो गई है। केवल एक ही पद देखिये :—

" चंदमुखी तनु पाय नवीनो भई तरुनाई अनंद मई है। "

परंतु इनकी कविता में प्रथम कोटि के काव्य की प्रगाढ़ता या भाव पूर्णता नहीं है। तथापि यह बड़े अच्छे कवि थे। इनकी रचना में एक यह भी दोष है कि इन्होंने अन्य कवियों की चोरी बहुत की है विशेषतः श्रीपति कवि की। इन्होंने कभी कभी दूसरों का भाव भी लिया है किंतु उसको ऐसे ढंग से वर्णन किया है कि वह उन्हीं का सा मालूम होता है। दास कवि साहित्य के समालोचक भी थे।

दास जी ने सांसारिक अनुभव की कुछ बातों का भी अच्छा वर्णन किया है। देखिये :—

" सूर को सूर सती को सती अरु दास जती को जती पहचानै। "

फिर संगति के संबंध में कहते हैं :—

"धूरि चढ़ै नभ पौन प्रसंगते कीच भई जल संगति पाई,
फूल मिलै नृप पै पहुँचै कृमि कीटनि संग अनेक बिथाई।
चन्दन संग कुदारु सुगन्ध ह्वै नीच प्रसंग लहै करुआई,
दास जू देख्यो सही सब ठौरनि संगति को गुन दोष न जाई॥"

सोमनाथ

दास ही की बराबरी के एक सोमनाथ नामक आचार्य कवि थे। इन्होंने अपना नाम कहीं सोमनाथ कहीं शशिनाथ और कहीं केवल नाथ लिखा है। रसपियूष-निधि इनका बड़ा उत्कृष्ट और प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसमें इन्होंने रीति का विषय बहुत सुपाठ्य बना दिया है। इस ग्रन्थ में कविता के लक्षण, रस, भाव, ध्वनि, गुण दोष, अलंकार इत्यादि का बड़ा स्पष्ट वर्णन है। सोमनाथ ने इस ग्रंथ में नायिका भेद बहुत विस्तार के साथ लिखा है।

इनकी भाषा भी माधुर्य पूर्ण शुद्ध ब्रजभाषा है। इनको संस्कृत शब्दों का प्रयोग करना पसंद न था। देखिये :—

" और कहा कहिए सजनी कठिनाई गरे अति आनि परी है,
मानत हैं बरज्यो न कछू अब ऐसी सुजानहि बानि परी है।"

रघुनाथ

भाषा के आचार्यों में रघुनाथ कवि भी अच्छे समझे जाते हैं। ये उच्चकोटि के कवि थे और भिन्न भिन्न विषयों पर कविता करते थे। इनके बनाए हुए चार पाँच ग्रंथों का पता लगता है। भाषा की आचार्यता काव्य कलाधर और रसिक मोहन नामक ग्रंथों से मालूम होती है। काव्य कलाधर में रस भेद और भाव भेद का अच्छा वर्णन दिया है। नायक भेद और नायिका भेद दोनों को इन्होंने बड़े विस्तारपूर्वक लिखा है। रसिक मोहन में अलंकारों का अच्छा वर्णन है और उनके उदाहरण भी अच्छे ढंग से दिए हुए हैं।

इन ग्रंथों के अतिरिक्त रघुनाथ ने एक ग्रंथ जगतमोहन नामक लिखा है यह एक बड़ा ग्रंथ है जिसमें नाना प्रकार के विषयों का वर्णन है। इसमें श्रीकृष्ण जी की दिन-चर्या का वर्णन है। श्रीकृष्ण इस ग्रंथ में राजा और शासक रूप हैं। उनके दरबार और दरबारियों का विस्तृत वर्णन है और सेना, मृगया, घोड़ा, हाथी, इत्यादि का भी वर्णन है। प्रसंगानुसार न्याय, राजनीति और ज्योतिष इत्यादि का भी वर्णन आया है। हिन्दी साहित्य में राजनीति आदि विषयों पर बहुत कम ध्यान दिया गया है। इसका मुख्य कारण यही है कि हिन्दी का प्रचार उस समय में हुआ जब भारत वर्ष परतंत्र था। साधारणतः यह देखा गया है कि राजनैतिक साहित्य की उन्नति स्वतंत्र देशों में हुआ करती है। हिन्दी के कुछ कवियों ने राजनीति का वर्णन अवश्य किया है किन्तु वह वर्णन बहुधा श्रीरामचंद्र और श्रीकृष्ण के वर्णनों के अंतर्गत है। हिन्दी काव्य साहित्य इन दोनों महापुरुषों को ईश्वर मानता है और ईश्वर सब का राजा है। इसलिए उनके वर्णन में राजनीति का भी वर्णन आ जाता है क्योंकि हिन्दू मस्तिष्क साधारणतः किसी बात या विचार को अधूरा नहीं छोड़ता वरन् किसी भी वस्तु के हर एक पहलू को एक साथ रखता है। अर्थात् उसकी विचार धारा पूर्ण रीति से संश्लेषणात्मक है। इसके अतिरिक्त यह दोनों व्यक्ति इस पृथ्वी पर भी राजा ही रूप में प्रकट हुए। इस कारण से भी इनके वर्णन में राजनीति का कुछ वर्णन आ जाता है। रघुनाथ ने जो वर्णन किया है वह इस प्रकार आया प्रातः काल जब श्रीकृष्ण उठे तो पंडितजन आशीर्वाद देने को आए और आशीर्वाद के बाद उन्हीं लोगों ने राजनीति का वर्णन सुनाया। यह वर्णन अच्छा है।

इनका एक इश्क़ महोत्सव नामक ग्रंथ भी है। इश्क़ तो इसके नाम ही में है यह शृंगार प्रधान ग्रंथ है, किन्तु इसमें भी बहुत से

विषयों का वर्णन है। यह ग्रंथ खड़ी बोली में लिखा है यद्यपि रघुनाथ कवि साधारणतः ब्रजभाषा ही में कविता करते थे। लिखते हैं :—

"आप दरियाव पास नदियों के जाना नहीं,
दरियाव पास नदी होयगी सो धावैगी"

जान पड़ता है कि इन्होंने सतसई की एक टीका भी बनाई। रघुनाथ की कविता उत्कृष्ट होती थी किंतु उसमें परमोत्तम कविता का अभाव रहता था। अलंकारों का उदाहरण देते हुए इन्होंने एक ही छंद में एक अलंकार के कई उदाहरण दिये हैं। इनकी भाषा ब्रजभाषा थी। जो साधारणतः अच्छी होती थी। श्रीकृष्ण के स्वरूप का वर्णन करते हुए इन्होंने लिखा है :—

"खेलत ग्वालन सों रघुनाथ औ डोलै गलीन मैं री उतपाती।
जो रँग साँवरो होतो न ईठ तौ काहु की डीठि कहूँ लगि जाती॥"

राधिका जी के सौंदर्य वर्णन में लिखते हैं :—

"ऐसी गई मिलि जोन्ह की जोति में रूपकी रासि न जाति बखानी।
बारनते कछु भौंहन ते कछु नैनन की छवि तें पहिचानी॥"

रसिक मोहन में एक अलंकार का कई उदाहरण देते हुए कहते हैं :—

"धनुष पै ठाढ़े राम रवि से लसत आजु,
भोरकैसे नखत नरिंद भए पियरे।"

दूलह

अलंकार विषयक कविता करने वालों में इस समय दूलह और रतन श्रेष्ठ कवि थे और दत्त और बैरीसाल भी अच्छे कवि थे। दूलह ने कवि कुलकंठाभरण नामक एक बड़ा ही उत्कृष्ट ग्रंथ लिखा है। इनके बनाए हुए कुछ और छंद भी मिलते हैं। कविकुलकंठाभरण एक छोटा सा ग्रंथ है जिसमें अलंकारों का वर्णन दिया है। है तो यह ग्रंथ देखने में

छोटा किंतु बहुत उत्तम बना है । इसकी भाषा तो अच्छी है ही इसकी कविता भी उच्चकोटि की है। दूलह कवि को अलंकार विषय का भारी आचार्य और श्रेष्ठ कवि समझना चाहिए। इन्होंने एक ही छंद में अलंकार के लक्षण और उदाहरण बड़े अच्छे ढंग से दे दिये हैं। प्रतीप अलंकार का वर्णन करते हुए दूसरे प्रतीपके लिए कहते हैं :—

"उपमान जहाँ उपमेयता लै फिरि ताहि निरादरै दूजो भनो।
सखि नैनन को जनि जोम करौ इनके सम सोहत कंज बनो ॥"

इसमें द्वितीय पद की मधुरता तथा जोमशब्द का प्रयोग देखिए।

रतन कवि ने भी अलंकार संबंधी बड़ी उत्कृष्ट कविता की है। अलंकारों का विस्तृत और अच्छा वर्णन देकर इन्होंने उदाहरण भी बहुत अच्छे दिए हैं। ये उदाहरण अधिकतर फतेहशाह नामक राजा की प्रशंसा सूचक है। अलंकारों के अतिरिक्त रस, ध्वनि और काव्य गुण इत्यादि का वर्णन भी इन्होंने दिया है। इनकी भाषा बड़ी मनोहर और शुद्ध ब्रजभाषा है। देखिये :—

रतन

"नीक नथुनी के तैसे सुन्दर सुहात मोती,
चंद परच्वै रहे सु मानौ सुधा बुंद द्वै।"

दत्त नाम के कई कवि हो गए हैं। लालित्य लता नामक अलंकार के उत्कृष्ट ग्रंथ के रचयिता जाजमऊ के कवि देवदत्त थे। जाजमऊ कनौज से कुछ दूरी पर है। इनकी कविता अच्छी, अलंकृत और मधुर है। बैरीसाल ने भाषाभरण नामक अलंकार ग्रंथ लिखा। यह एक उत्तम ग्रंथ है

दत्त, बैरीसाल

जिसमें अलंकारों का वर्णन अच्छे और सरल ढंग से किया गया है। यह ग्रंथ मुख्यतः दोहों में लिखा है।

ये कवि अलंकार ग्रंथों के रचयिता थे। रस विषय पर एक रसलीन नामक मुसलमान कवि ने बड़ी अच्छी कविता की है। यह बिलगराम के रहने वाले थे और जैसे बहुत से उर्दू के कवियों ने अपने को देहलवी और लखनवी लिखा है वैसे यह अपने को बिलगरामी कहते थे। बिलगराम विद्या के लिए प्रसिद्ध था और अब भी है। रसलीन के रचे हुए दो ग्रंथ रस प्रबोध और अंगदर्पण विख्यात हैं। रस प्रबोध में रसों का विस्तृत और उत्तम वर्णन दिया गया है और प्रसंगानुसार भावभेद, नायक और नायिका भेद और षट्ऋतु का भी अच्छा वर्णन दिया है। यह एक बड़ा ग्रंथ है जो दोहों में लिखा हुआ है। अंगदर्पण भी दोहों में लिखा है। यह नखशिख का ग्रंथ है जिसमें अच्छी अच्छी उपमाओं उत्प्रेक्षाओं इत्यादि द्वारा नायिका के नखशिख का मनोहर वर्णन है।

रसलीन

रसलीन एक तो मुसलमान थे दूसरे अरबी और फ़ारसी के बड़े भारी पंडित थे। तिस पर भी उन्होंने शुद्ध और ठेठ व्रजभाषा में कविता की है। जिस समय बहुत से हिन्दू कवियों तक ने फ़ारसी और अरबी के शब्दों की भरमार लगा दी थी उस समय एक इन भाषाओं का विद्वान और मुसलमान कवि ठेठ व्रजभाषा में कविता करता था। इनकी कविता और भाषा दोनों प्रशंसनीय हैं। उदाहरण देखिये :—

"कत देखाय कामिनि दई दामिनि को यह बाँह।
थरथराति सी तन फिरै फरफराति घन माँह॥"

तथा "धरति न चौकी नगजरी, याते उर मैं लाइ।
छाँह परे पर पुरुष की, जिनतिय धरम नसाइ॥"

इस काल में पिंगल विषय के बड़े भारी आचार्य पंडित मनीराम मिश्र हुए। इन्होंने पिंगल पर परम प्रशंसनीय छंदछप्पनी नामक एक छोटा सा ग्रंथ लिखा है।

मनीराम

इसमें केवल छप्पन छंद हैं परन्तु इन्हीं में मनीराम ने पिंगल का विषय पूर्ण रूप से बतलाया है। यह सूत्रों की भाँति लिखा है और छंद विषय के विद्यार्थियों के लिए रट लेने योग्य है। सूत्ररूप होने से यह ग्रंथ कुछ कठिन हो गया है।

नायिका भेद का विषय भी आचार्यता ही से संबंध रखता है। बहुत से आचार्यों ने इसका उत्तम वर्णन किया है। वास्तव में यह रस विषय के अंतर्गत आ

नायिका भेद

जाता है किंतु कुछ कवियों ने नायिका भेद ही की ओर अधिक ध्यान दिया। शंभूनाथ मिश्र, किशोर और शिवनाथ ने नायिका भेद विषयक अच्छी कविता की। शंभुनाथ सरस और माधुर्य पूर्ण कविता करते थे। यह अनुप्रास का अच्छा प्रयोग करते थे। इन्होंने अपने एक ग्रंथ की गद्य में टीका भी स्वयं दे दी है। किशोर भी उच्चकोटि की कविता करते थे। इनके षट्ऋतु विषयक छंद अच्छे होते थे और इनकी भाषा भी अच्छी है। शिवनाथ भी अच्छे कवि थे। इन्होंने सुन्दर ब्रज भाषा में रस वृष्टि नामक एक ग्रंथ की रचना की है जिसमें रस और भाव का वर्णन है। इस ग्रंथ में नखशिख भी अच्छा दिया है।

जैसा ऊपर वर्णन आचुका है इस काल में शृंगार की ओर कवियों का अधिक ध्यान रहा। उपर वर्णन किए हुए कवियों में बहुत से शृंगार रस के श्रेष्ठ कवि थे। इस समय की आचार्यता भी भूषण की आचार्यता की भांति वीर रस की ओर न झुक कर शृंगार ही की ओर झुकी। अतः प्रायः सभी आचार्य कवि इस समय के शृंगारी थे किंतु आचार्यों के अतिरिक्त और भी शृंगार रस के

बहुत से कवि हुए जिनमें भूपति, ठाकुर और बोधा बड़े प्रसिद्ध हैं। मनभावन और तीर्थराज ने भी इस विषय की अच्छी कविता की।

भूपति

भूपति का वास्तविक नाम गुरुदत्त सिंह था और ये अमेठी के राजा थे। यह कवियों के आश्रयदाता और स्वयं बड़े कवि थे। इन्होंने बिहारी लाल की भाँति एक सतसई लिखी है। यह सात सौ दोहों का ग्रंथ अच्छा उतरा है। इसकी कविता सरस और भावों से भरी है जिसमें बिहारी ही की भाँति थोड़े शब्दों में अधिक भाव रखने की चेष्टा की गई है। भाषा भी इसकी बड़ी मधुर है और इसमें उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का बड़ा सुंदर प्रयोग किया गया है। सब मिलाकर इनके दोहे बहुत ही उत्तम बने हैं। देखिये :—

"घूंघट पट की आड़ दे हँसति जबै वह दार।
ससि मंडल ते तब कढ़ति जनु पियूष की धार॥"

इनके बनाए हुए चार और ग्रंथों के नाम मिलते हैं— कंठाभरण, रसरत्नाकर, रसदीप और भागवत भाषा।

ठाकुर

ठाकुर एक बड़े प्रसिद्ध कवि हो गए हैं जो असनी के रहने वाले थे। इनके नाम के तीन चार और कवि हुए हैं किंतु वे इतने प्रसिद्ध न थे। ज्ञात होता है कि सरस्वती देवी ने कविता का कोई स्रोत ही इनके वंश में बहा दिया था। इनके पिता ऋषिनाथ एक प्रसिद्ध कवि थे। इनके पुत्र धनीराम भी अच्छे कवि थे और इनके पौत्र सेवक भी बड़े प्रसिद्ध कवि हुए। ठाकुर का बनाया हुआ ठाकुर शतक नामक ग्रंथ प्रसिद्ध है। किसी महाशय की आज्ञा से इन्होंने सतसई की एक टीका भी बनाई। इनकी कविता में प्रेम कूटकूट के भरा है यहाँ तक कि इन्होंने वैध अवैध प्रेम का ध्यान ही नहीं रखा है। इसमें संदेह नहीं कि इनकी रचना प्रशंसनीय है और भाषा मधुर तथा प्रभावपूर्ण है

१०

तथापि यदि यह अपने प्रेम के काव्य तरंग को थोड़े और उच्च मार्ग पर ले चलते तो अच्छा हुआ होता और पाठकों को अधिक लाभ पहुँचा होता। किंतु जो कुछ इन्होंने लिखा उसमें इनका वर्णन इनकी नायिकाओं इत्यादि की प्रकृति के विचार से बिलकुल स्वाभाविक और सच्चा है। इनकी भाषा का बल और प्रभाव देखिये :—

"नेकी बदी जो बदी हुती भाल में,
होनी हुती सो तो ह्वै चुकीरी।"
"ठाकुर कहत कछु कठिन न जानौ अब,
हिम्मत किये तें कहौ कहा न सुधरि जाय।
चारि जने चारिहु दिसा तें चारो कोन गहि,
मेरु को हिलाय कै उखारे तौ उखरि जाय॥"

इनके बहुत से छंद या उनके पद प्रामाणिक से हो गए हैं जो बहुधा सुनने में आते हैं। इससे इनका भाषा पर अधिकार और मानव चरित्र का ज्ञान प्रकट होता है। लिखते हैं :—

"माया मिली नहीं राम मिले,
दुबिधा मैं गए सजनी सुनो दोऊ।"
"मनमोहन को हिलिबो मिलिबो,
दिना चारि की चांदनी ह्वै गयोरी।"
तथा "ठाकुर सूम के जात न कोऊ,
उदार सुने सबही उठि धावै।"
और "बिन आपने पाय बेवाय गये,
कोऊ पीर पराई न जानत है।"

बोधा कवि भी बड़ी उत्कृष्ट कविता करते थे। इनके जीवन और इनकी कविता दोनों ही में प्रेम पूर्ण रूप से भरा था। इन्होंने इश्कनामा नामक एक सुन्दर

बोधा

ग्रंथ लिखा है। इनका विरहवारीश नाम का ग्रंथ भी उत्तम बना है। जिसमें एक बड़ी प्रेम कहानी कही गई है। बोधा ने प्रेम का अच्छा वर्णन किया है। एक स्थान पर कहते हैं:—

" कवि बोधा कछू न अनोखी यहै,
का बनै नहीं प्रीति निवाहन ते।
प्रह्लाद की ऐसी प्रतीति करै,
तब क्यों न कढ़ैं प्रभु पाहन ते॥"

इनको स्वयं जीवन में प्रेम के कारण बहुत दुःख उठाना पड़ा था किंतु इन्होंने प्रेम छोड़ा नहीं और कहा भी है:—

" यह प्रेम को पंथ कराल महा तरवारि की धार पै धावनो है "

किंतु यह स्मरण रहे कि इनके वर्णन में भी प्रेम का अनुचित रूप मिलता है। इनकी कविता बड़ी प्रभावपूर्ण और सच्ची होती थी। भाषा इनकी ब्रजभाषा थी जिसमें कहीं कहीं खड़ी बोली भी मिली है।

मनभावन और तीर्थराज ने श्रृंगार रस की अच्छी कविता की है। मनभावन ने श्रृंगार रत्नावली नामक ग्रंथ बनाया और तीर्थ-राज ने रसानुराग नामक। ये दोनों ग्रंथ श्रृंगार रस के हैं और दोनों की कविता सरस तथा मनोहर है।

कथाएं

इस काल में कथा लिखने वाले कवि भी अच्छे अच्छे हुए और कथाएं कई ढंग की लिखी गईं। बोधा कवि के विरहवारीश नामक प्रेम कहानी लिखने का वर्णन आ चुका है। नूर मुहम्मद ने भी एक अच्छी प्रेम कहानी लिखी जिसका नाम इंद्रावती था। फिर सूदन इस समय के बड़े भारी कवि थे। इन्होंने सुजान चरित्र नामक एक बड़ा ही उत्कृष्ट ग्रंथ लिखा है जिसमें युद्धों का वर्णन ऐतिहासिक ढंग से दिया हुआ

है। इनके अतिरिक्त धर्म संबंधी कथाएं भी लिखी गईं। पंडित सरयू राम इस ढंग के अच्छे कवि थे। इन्होंने जैमिनिपुराण लिखा है।

नूर मुहम्मद

नूर मुहम्मद अच्छी कविता करते थे। इनका इन्द्रावती नामक ग्रंथ अच्छा उतरा है। यह ग्रंथ चौपाई और दोहों में लिखा है और इसमें कोई कोई वर्णन बहुत अच्छे और विस्तार पूर्वक हैं। इनकी भाषा साधारण अवधी है। जिसमें कहीं कहीं फ़ारसी और संस्कृत के शब्द भी आए हैं। इन्द्रावती की तुलना जायसी की पद्मावती से हो सकती है।

सूदन

सूदन बड़े प्रतिष्ठित कवि हो गए हैं जिन्होंने युद्ध विषय पर कविता की है। हिन्दी साहित्य में युद्ध काव्य के परमोत्तम उदाहरण अधिक नहीं मिलते। इस दृष्टि से सूदन कवि हिन्दी कविता के एक अच्छे रत्न हैं। ये मथुरा के रहने वाले थे किंतु भरतपूर के राजा सूरजमल के यहाँ रहते थे। सूरजमल का दूसरा नाम सुजान सिंह था और इन्हीं के नाम पर सूदन ने सुजान चरित्र बनाया। भारत के इतिहास में सूरजमल का नाम प्रसिद्ध है। मुग़ल साम्राज्य के पतन काल में यह भरतपूर के राजा थे। इनकी वीरता और बुद्धिमानी प्रसिद्ध थी। सूदन ने लिखा भी है :—

" सिंह बदनेस के सपूत श्री सुजान सिंह,
सिंह लौं झपटि नख दीने करवाल के॥ "

इनकी बुद्धिमानी भी इस ग्रंथ से टपकती है। यह ऐसा समय था जब चारों ओर छोटी बड़ी लड़ाइयाँ हो रही थीं—आज जिससे मित्रता है कल उससे लड़ाई है ; आज यह नगर लूटा कल वह नगर। देश की लड़ाइयाँ अलग थीं, बाहर के आक्रमण अलग थे।

राजनैतिक वायु मंडल में बड़ी अशांति और अविश्वस्तता फैली हुई थी। सुजानचरित्र के पढ़ने से इन सब बातों का पता मिल जाता है।

सुजान चरित्र मुख्यतः युद्ध विषयक ग्रंथ है। इस काल में जब कि सब कवियों ने नायिका भेद और शृंगाररस को कविता लिखने पर कमर बांध ली थी एक ऐसे कवि की रचना जो युद्ध, वीरता, विजय इत्यादि विषयों पर कविता करता हो अति प्रशंसनीय है। इस ग्रंथ में युद्धों का बड़ा विशद वर्णन कालक्रम से और विस्तार-पूर्वक किया गया है। इसमें युद्ध की तैयारी का बड़ा ही उत्कृष्ट वर्णन है। सूदन ने व्याख्यान, संवाद और वार्तालाप का बहुत अच्छे ढंग से वर्णन किया है। सभी वर्णन सच्चे और स्वाभाविक जान पड़ते हैं। सूदन के वर्णनों में एक विशेष बात यह भी है कि इन्होंने शत्रुओं पर भी पूरा न्याय किया है। वीर शत्रु की प्रशंसा में इन्होंने कोई कमी नहीं की और सब वीरों की ओर यथा योग्य ध्यान दिया।

इस ग्रंथ की रचना उत्कृष्ट और प्रशंसनीय है और यह बड़ा ही रोचक ग्रंथ बना है। यों तो इसकी भाषा व्रजभाषा है किंतु इसमें पंजाबी, राजपूतानी, मारवाड़ी, खड़ी बोली और पूर्वी बोली की भी मिलावट है और अरबी फारसी के शब्द भी आए हैं। देखिये :—

"वेई पठनेटे सेल साँगन खखेटे भूरि,
धूरि सौं लपेटे लेटे भेटे महाकल के"
"रब की रजा है हमें सहना बजा है"
"चलना मुझे तौ उठ खड़ा होना देर क्या है"
"चीन्हत न सार मनसूर जट्ट ल्यावा है"
"अड़ राखी ऐंड राखी मैंड रजपूती राखी"

इत्यादि

फिर आलम, कूच करना इत्यादि शब्दों का प्रयोग हुआ है।

सरजूराम

पंडित सरजूराम धर्मकथा लेखकों में थे। इन्होंने जैमिनि-पुराण नामक एक बड़ा ग्रंथ ३६ अध्यायों में लिखा जिसकी कविता अच्छी है। यह विविध छंदों में लिखा है किंतु अधिकतर दोहे और चौपाइयों ही में लिखा है। इसमें बहुत सी कथाओं और युद्धों का मनोहर वर्णन है। इसमें रामायण की कथा, रामाश्वमेध, कृष्ण द्वारिका गमन और अनेक ऋषि मुनियों तथा अन्य व्यक्तियों की कथाएं वर्णित हैं। गुरुपद्रज की महिमा इन्होंने तुलसीदास ही की भाँति कही है। भाषा इस ग्रंथ की बैसवारी है और इसमें रूपक उपमा आदि अलंकारों का अच्छा प्रयोग है।

धर्म, भक्ति

धर्म और भक्ति संबंधी कविता इस काल में बहुत कम हुई और जो हुई भी वह अधिकांश उच्च कोटि की न थी। सरजूराम ने धर्म कथा का एक ग्रंथ लिखा। धर्म प्रचारकों में शिवनारायण का नाम स्मरणीय है जिन्होंने शिवनारायणी पंथ चलाया और जो ग़ाज़ीपुर के रहने वाले थे। इनकी कविता साधारण होती थी। इन्होंने संतसागर, संतविचार, संतोपदेश, भजन ग्रंथ आदि अनेक ग्रंथों की रचना की।

वृन्दावनदास

भक्त कवियों में हित वृन्दावनदास सर्वश्रेष्ठ थे। यह वैष्णव मत के कृष्ण संम्प्रदाय के प्राचीन कवियों की भांति कविता करते थे। यह कृष्णानंद में मग्न थे और कुछ दिनों तक पुष्कर के निकट रह कर फिर वृंदावन में रहने लगे। यह चाचा कहे जाते थे। जान पड़ता है कि इनकी रचनाएं बहुत अधिक थीं किंतु इस समय उनका अधिकांश लुप्त हो गया है। तिस पर भी जितना प्राप्त है उतना भी बहुत है और बहुत से ग्रंथों के नाम मालूम हो रहे हैं।

चाचा जी ने पदों, दोहों और चौपाइयों में कविता की है। इनके पद बड़े ही उत्कृष्ट बने हैं और इनकी कविता बड़े उच्चकोटि की समझनी चाहिए। इनके पदों की तुलना सूरदास के पदों से करनी चाहिए। सूरदास ही की भांति उनमें रस और भाषा माधुर्य भरा है और उन्हीं की भाँति शब्दों तथा उपमाओं या रूपकों का प्रयोग हुआ है। किंतु उनके पद इनके पद से अधिक उत्कृष्ट होते थे। इनका निम्न लिखित मुख वर्णन पठनीय है।

"हौं बलि जाऊँ मुख सुखरास,
जहाँ त्रिभुवन रूप सोभा रीझि कियो निवास।
प्रतिविंव तरल कपोल कमनी युग तरौना कान,
सुधा सागर मध्य बैठे मनौ रवि युग न्हान।
छवि भरे नव कंजदल से नेह पूरित नैन,
पूतरी मनु मधुप छौना बैठि भूले गैन।
कुटिल भृकुटी नमित सोभा कहा कहौं विसेख,
मनहुँ ससि पर श्याम बदरी युगुल किंचित रेख।
लसत भाल विशाल ऊपर तिलक नगिनि जराय,
मनहुँ चढ़े विमान ग्रह गन ससिहि भेटन जाय।
मंद मुसुकनि दसन दमकनि दामिनी दुति हरी,
बृंदावन हित रूप स्वामिनि कौन विधि रचि करी।

इनकी कविता शृंगारमय है और इन्होंने श्रीकृष्ण की लीलाओं का अच्छा वर्णन किया है। इस काल के शृंगारी कवियों की रचनाओं के मध्य में चाचा जी की भक्तिपूर्ण रचना कैसी हृदयग्राहिणी होती है। जब ऊपरी काव्य कौशल ही की ओर अधिक ध्यान दिया जाता था और प्राकृत नर नारियों के वाह्य सौंदर्य की ओर कवियों का विशेष ध्यान था उस समय चाचा जी ऐसे कवियों की रचना विशेष सुहावनी है और उनका विशेष महत्व है।

चाचा जी के कुछ दिनों बाद ब्रजवासीदास अच्छे कवि हुए। यह श्रीकृष्ण की भक्ति में लीन रहते थे और भजनानन्द ही में इन्होंने ब्रजविलास नामक प्रसिद्ध ग्रंथ बनाया। इस ग्रंथ में श्रीकृष्ण की लीलाओं का विस्तृत वर्णन दिया हुआ है। इसमें उनका बचपन, उनकी लड़ाइयाँ और गोपियों से वियोग इत्यादि भली भाँति वर्णित हैं। कथा और भाव की दृष्टि से यह ग्रंथ सूरदास के सूरसागर के ढंग पर बना है किन्तु न तो इसमें सूरदास वाली भाषा है और न उनके से पद। इनकी भाषा मुख्यतः बैसवाड़ी है। इन्होंने ब्रजभाषा का बहुत कम प्रयोग किया है किंतु भाषा अच्छी लिखी है। यह ग्रंथ अधिकतर दोहा और चौपाई छंदों में लिखा है और कहीं कहीं अनुष्टुप छंद इत्यादि अन्य छंद भी आ गये हैं।

ब्रजवासीदास

ब्रजवासीदास ने यह ग्रंथ लिखते समय तुलसीदास जी का अनुसरण किया है। यह समझते थे कि ईश्वर का गुण गाना ही चाहिये और कवि चाहे भद्दी ही कविता क्यों न करे किन्तु यदि वह ईश्वर गुणगान करता है तो उसका परिश्रम सफल है। इन्होंने लिखा है :—

"मैं नहिं कवि न सुजान कहाऊँ।
कृष्ण विलास प्रीति करि गाऊँ॥
सो विचार कै श्रवणन कीजै।
काव्य दोष गुण मन नहिं दीजै॥"

और फिर कहा है :—

"जेहि तेहि विधि हरि गाइये कहत सकल श्रुति साधु।"

जिस प्रकार तुलसीदास ने लिखा है कि यह रामायण की कथा पहले गाई जा चुकी है उसी प्रकार ब्रजवासी दास ने भी

लिख दिया है कि यह (श्रीकृष्ण की) कथा सूरदास से ली गई है :—

"या मैं कछुक बुद्धि नहिं मेरी। उक्ति युक्ति सब सूरहि केरी॥"

यह ग्रंथ अच्छा उतरा है और कवि की कृति प्रशंसनीय है।

ब्रजवासीदास ने एक और ग्रंथ लिखा है जो प्रबोध चंद्रोदय का अनुवाद है। यह ग्रंथ ब्रजभाषा में लिखा है जिसमें खड़ी बोली का भी मिश्रण है।

स्त्री कवि

भक्ति तथा कृष्ण संबंधी कविता करने वालों में कुछ स्त्रियों ने बड़ा नाम पैदा किया। हिन्दी भाषा के सौभाग्य से जब पुरुष कवि नायक और नायिकाओं की ओर झुके थे तब स्त्री कवियों ने भक्ति का पथ लिया। इन स्त्रियों में तीन के नाम प्रसिद्ध हैं—महारानी बाँकावती, सुंदरकुँवरि बाई और सहजोबाई। महारानी बाँकावती कृष्णगढ़ के महाराजा राजसिंह की धर्मपत्नी थीं। इनका कविता का नाम ब्रजदासी था। इन्होंने ब्रजदासी भागवत नामक ग्रंथ लिखा है जो श्री मद्भागवत का उल्था है। यह ग्रंथ अधिकतर दोहा चौपाइयों में लिखा है और इसकी भाषा मनोहर ब्रजभाषा है जिसमें बैसवाड़ी भी मिली है। इसकी कविता अच्छी है। इन्हीं बाई जी की पुत्री सुंदरकुँवरि बाई थीं और सुंदरकुँवरि भी अच्छी कविता करती थीं। विधाता ने इस राजवंश में काव्यधारा विशेष रूप से प्रवाहित की थी। इनकी माता, पिता, पितामह, भाई, भतीजा सभी कवि थे। इस वंश की काव्यरचना भक्ति रस से विशेष सिंचित थी। बाँकावती जी की कविता भी भक्तिपूर्ण थी और सुंदरकुँवरि जी की भी। इसी घराने की एक लौंडी बनीठनी थी जिसने भक्ति रस की अच्छी कविता की है और जिसका वर्णन आगे आ चुका है। सुंदरकुँवरि जी की कविता भक्तिपूर्ण और सरस होती थी और इनकी शुद्ध ब्रजभाषा बहुत मधुर होती थी। इन्होंने

११ ग्रंथों की रचना की है और विविध प्रकार के छंदों का सुंदर प्रयोग किया है। सहजोबाई चरणदास की शिष्या थीं। इनकी कविता भी अच्छी और भक्तिपूर्ण होती थी। देखिये :—

"जोगी पावै जोग सूँ, ज्ञानी लहै विचार।
सहजो पावै भक्ति सूँ, जाके प्रेम अधार॥"

इनका सहजो प्रकाश नामक ग्रंथ प्रसिद्ध है। भक्ति के अतिरिक्त इन्होंने नीति पर भी कविता की है। जैसे :—

"भली गरीबी नवनता, सकै न कोई मारि।
सहजो रुई कपास को, काटै ना तरवारि॥"

हिन्दी भाषा के बहुत से कवियों ने इस ढंग की नीति कही है। जिसमें रहिमन आदि बहुत प्रसिद्ध हैं। सहजोबाई की भाषा राजपुतानी मिली व्रजभाषा है। इनकी एक गुरु बहिन दयाबाई थीं जो चरणदास जी की शिष्या थीं। यह भी अच्छी और प्रेम भरी कविता करती थीं। यह कहती हैं :—

"प्रेम पुंज प्रकटै जहाँ, तहाँ प्रकट हरि होय।
दया दया करि देत हैं, श्री हरि दर्शन सोय॥"

नीति संबंधी कवियों में गिरिधर का नाम बड़ा प्रसिद्ध है, किंतु

गिरिधर

शोक की बात है कि न तो इनके समय का ठीक पता लगता है न इनके निवासस्थान का और न इनका कोई ग्रंथ ही प्राप्त हुआ है। इनकी बनाई हुई कुछ कुंडलियां मिलती हैं। जान पड़ता है कि इन्होंने केवल कुंडलियाँ ही लिखी हैं और वह भी केवल नीति और व्यवहार के संबंध में। इन्होंने किसी गूढ़ विषय पर कविता नहीं की और न नीति ही गूढ़ कही है। परन्तु इनकी कविता जो कुछ भी मिली है वह बहुत लोकप्रिय है और पाठकों की ज़बान पर रहती है जैसे :—

"बीती ताहि बिसारि दे आगे की सुधि लेइ।"
"नइया मेरी तनक सी बोझी पातर भार।"
"साँई अपने चित्त की भूलि न कहिये कोय।
तब लगि मन में राखिये जब लगि काज न होय॥"

इत्यादि

कहा जाता है कि गिरिधर की स्त्री भी इन्हीं की भाँति कविता करती थीं और जिन छंदों में साँई शब्द का प्रयोग हुआ है वह सब इन्हीं के बनाये हैं।

गिरिधर कविराय के नाम से प्रसिद्ध हैं और इन्होंने अपनी कुंडलियों में इसी तरह से लिखा है—"कह गिरिधर कविराय" इनकी कविता काव्य की दृष्टि से तो ऊँची नहीं है किंतु इन्होंने इसे बहुत लोकप्रिय बना दिया है। यह बड़े सरल ढंग से अवध की ग्रामीण भाषा में लिखी है और साधारण काम काज और संसार के धंधों से संबंध रखती है। इन्होंने सामान्य किंतु सच्ची और रोज़ की नीति का कथन किया है। एक स्थान पर कहते हैं :—

"साँई बैर न कीजिये, गुरु पंडित कवि यार।
बेटा बनिता पँवरिया यज्ञ करावन हार॥"

इत्यादि

टीकाएँ

इस काल में कुछ अच्छे अच्छे टीकाकार और अनुवादक भी हुए। टीका या अनुवाद लिखने की प्रथा कुछ पहले ही से चली आ रही थी और वास्तव में ऐसा साहित्य तभी उन्नति पाता है जब मौलिक साहित्य की उत्कृष्टता कम होने लगती है। इस समय बहुत सी टीकाएँ निकलीं और भिन्न भिन्न विषय के ग्रंथों की। एक ओर बिहारी सतसई की टीकाएँ निकलीं दूसरी ओर रसराज और भाषा भूषण की और फिर साधु महात्माओं की रचनाओं की टीकाएँ निकलीं। टीकाकारों में

दलपतिराय, बंसीधर, हरिचरणदास और नागरीदास के नाम प्रसिद्ध हैं। दलपतिराय और बंसीधर अहमदाबाद के रहने वाले थे। इन दोनों ने मिल कर अलंकार रत्नाकर नामक ग्रंथ बनाया। यह ग्रंथ वास्तव में भाषा भूषण की टीका है। है तो यह ग्रंथ बहुत छोटा किंतु इससे इन कवियों की उत्कृष्टता प्रकट हो जाती है। इसकी भाषा भी बड़ी सरस है। इसमें अलंकार का विषय बहुत सरल रूप से और विस्तार पूर्वक समझाया गया है। इस ग्रंथ की एक विशेषता यह भी है कि इसमें अन्य बड़े कवियों के नाम और उनकी रचनाओं के उदाहरण भी आ गये हैं। इससे यह ग्रंथ एक प्रकार का संग्रह हो गया है जो बहुत लाभदायक है। हरिचरणदास कृष्ण गढ़ के रहने वाले थे। यह अच्छी कविता करते थे और इनकी भाषा भी मनोहर होती थी। इन्होंने केशवदास की कविप्रिया और रसिकप्रिया पर टीकाएँ बनाई हैं और जसवन्तसिंह के भाषा भूषण पर। इनके अतिरिक्त बिहारी की सतसई पर भी इन्होंने एक टीका लिखी। बिहारी की सतसई पर इस समय और कवियों ने भी टीकाएँ लिखीं। इनकी टीका विस्तृत होती थी और उससे इनका पांडित्य प्रकट होता है। नागरीदास बृंदावन के रहने वाले थे जो नागरीदास महाराज से इतर थे। इन्होंने स्वामी विठल विपुल और बिहारिनिदास इत्यादि महात्माओं से पदों की टीका लिखी है। इसके अतिरिक्त अपने बनाये हुए पदों की भी टीका इन्होंने दे दी है। इनकी टीका विस्तृत होती थी। इनके ग्रंथ का नाम स्वामी जी के पदन की टीका है। कविता इनकी साधारण होती थी।

अनुवाद

अनुवादक भी इस समय में बहुत हुए। महारानी बाँकावती ने श्रीमद्भागवत का अनुवाद किया। इनके अतिरिक्त भागवत का अनुवाद और बहुत से कवियों ने किया।

फिर भगवद्गीता का भी अनुवाद हुआ। पीताम्बर कवि ने जैमिनि पुराण भाषा नामक ग्रंथ लिखा और सदासुख ने विष्णु पुराण भाषा नामक। पीताम्बर अच्छी कविता करते थे और बहुत से ग्रंथों के भी अनुवाद हुए। साधारणतः संस्कृत ग्रंथों का अनुवाद किया जाता था किंतु फ़तेहसिंह ने एक फ़ारसी ग्रंथ का अनुवाद किया। यह ग्रंथ ज्योतिष विषयक है और इसका नाम गुर्रा है।

गुमान मिश्र

इस समय के अनुवादकों में गुमान मिश्र का नाम बड़ा प्रसिद्ध है। यह उच्चकोटि के कवि थे और इनके अनुवाद में भी मौलिकता की झलक है। इन्होंने नैषध काव्य का अनुवाद सुंदर भाषा में विविध छंदों में किया है। इनकी भाषा मुख्यतः ब्रजभाषा है जिसमें कहीं कहीं संस्कृत तथा प्राकृत का मिश्रण है। प्राकृत लिखने की प्रथा अब टूट सी गई थी (कुछ दिनों पहले के जैन कवियों ने प्राकृत मिश्रित भाषा लिखी थी) अनुवाद के अतिरिक्त इनके अनेक स्वतंत्र ग्रंथों का भी पता लगता है। गुमान मिश्र के कुछ वर्ष बाद तीन बड़े ही प्रसिद्ध अनुवादकर्ता हुए जिनका वर्णन आगे आयेगा। उनके नाम ये हैं—गोकुलनाथ, गोपीनाथ, मणिदेव।

नाटक

हिन्दी भाषा में नाटक का अभी अभाव ही रहा। यद्यपि संस्कृत में उत्कृष्ट नाटक ग्रंथ भरे पड़े हैं तथापि हिन्दी साहित्य रचयिताओं का झुकाव उस ओर न हुआ। दो चार ग्रंथ नाटक नाम के लिखे गए किंतु वे पूर्ण रूप में नाटक नहीं समझे जा सकते। एक दो कवियों ने हिन्दी में संस्कृत नाटकों का अनुवाद किया। इस काल में ब्रजवासी दास ने प्रबोध चंद्रोदय का अनुवाद किया। आनंद कवि ने भी प्रबोध चंद्रोदय नाटक नामक एक बड़ा ग्रंथ लिखा किंतु इस समय के प्रसिद्ध नाटककार मनबोध झा थे। यह मिथिला के रहने वाले थे और इन्होंने मैथिली

भाषा में रचना की है। इनके ग्रंथ का नाम हरिवंश नाटक है जो एक बहुत बड़ा ग्रंथ है। इसमें इन्होंने श्रीकृष्ण जी का वर्णन किया है और यह ग्रंथ अच्छा बना है। विहार में नाटक लिखने की प्रथा विद्यापति ठाकुर ने बहुत पहले ही चलाई थी। फिर मनबोध झा के थोड़े ही दिनों बाद लाल झा नाटककार हुए। पटना के शंकरदत्त कवि ने भी हरिवंश हंस नाटक नामक एक ग्रंथ लिखा। यह वैष्णव संप्रदाय के अच्छे पंडित थे और इन्होंने संस्कृत में भी रचना की है।

फुटकर विषयों पर भी एक दो ग्रंथ इस काल में लिखे गए।

अन्य विषय

ज्योतिष पर कृपाराम ने भाषा ज्योतिषसार लिखा और फतेहसिंह ने एक फ़ारसी ज्योतिष ग्रंथ का अनुवाद किया। धनुर्विद्या पर नौने व्यास ने धनुषविद्या नामक ग्रंथ लिखा। वैद्यक पर सुखलाल ने वैद्यक सार, जवाहिर सिंह ने वैद्य प्रिया, और हरिवंशराम ने वैद्यविनोद नामक ग्रंथों की रचना की। संगीत पर ब्रजनाथ ने रागमाला लिखी। दो एक और कवियों ने रागमाला नामक ग्रंथ लिखे। इतिहास और राजनीति विषयक रचनाएँ दुर्बल रहीं। केवल एक इतिहास लेखक का नाम स्मरणीय है हरिनाथ या नाथ। इन्होंने पृथ्वीशाह मुहम्मदशाह नामक इतिहास का ग्रंथ लिखा। इनका अलंकार पर भी एक ग्रंथ है जो अलंकार दर्पण के नाम से प्रसिद्ध है। राजनीति पर जसरामचारण ने राजनीति विस्तार लिखा। यह दक्षिणी भारत में भड़ौच ज़िला के रहने वाले थे। साधारण नीति लिखने वालों में गिरिधर और सहजोबाई के नाम प्रसिद्ध हैं जिनका वर्णन हो चुका है। लोकोक्ति विषयक एक ग्रंथ शिवसहायदास ने लिखा जिसका नाम लोकोक्ति रसकौमुदी है। यह नायिका भेद का ग्रंथ है जिसमें लोकोक्तियाँ कही गई हैं। उन्हें उपाख्यान या पखाने कहते हैं। जैसे :—

"करौ रुखाई नाहिन बाम, बेगिहि लै आऊँ घनश्याम।
कहै पखानो युत अनुराग, बाजी ताँत कि बूझ्यो राग॥

इस काल में कथा प्रासंगिक कविता बहुत हुई और उच्चकोटि की। सूदन इत्यादि और नूर मुहम्मद इत्यादि का वर्णन हो चुका है। अन्य कवियों में दो तीन के नाम स्मरणीय हैं। भारथशाह ने ऊषा अनिरुद्ध की, पंचमसिंह ने नौरता की, नारायण ने हरिश्चंद की और प्रेमदास ने नासकेत को कथा लिखी। देवीदत्त नामक कवि ने बैताल पचीसी नामक एक बड़ा और मनोहर ग्रंथ लिखा। हरनारायण ने भी बैताल पचीसी लिखी।

इस काल में रसलीन और नूरमुहम्मद दो प्रसिद्ध मुसलमान कवि हुए। युसुफ खां टीकाकार थे और तालिबशाह की भाषा में खड़ी बोली का मिश्रण था। और मुसलमान कवि प्रसिद्ध नहीं है। जैन लेखकों में कुँवर कुशल, कनक कुशल, रत्नसेन और मानसिंह के नाम स्मरणीय हैं। रत्नसेन ने अपनी यात्रा का वर्णन किया है। हिन्दी भाषा में इस प्रकार के साहित्य की अब तक कमी है। यह वर्णन गद्य में है। मानसिंह ने विहारी सतसई की टीका लिखी। महाराष्ट्र कवियों में हिन्दी कविता करने वाला कोई उत्कृष्ट कवि न हुआ यद्यपि हिन्दी और मराठी कविता बहुतों ने की। एक अनंत फंदी का नाम स्मरणीय है। इन्होंने विख्यात नाना फरनवीस की प्रशंसा लिखी है। विख्यात महादा जी सींधिया स्वयं कविता करते थे। इन्होंने हिन्दी में भी अच्छी कविता की है।

इस समय में कुछ बड़ी प्रसिद्ध स्त्रियों ने कविता की जिनके नाम ऊपर आ चुके हैं—महारानी वाकांवती, सुंदरि कुवँरि, सहजोबाई और गिरिधर कविराय की स्त्री।

गद्य की ओर भी कुछ लेखकों ने ध्यान दिया। दलपतिराय और वंसीधर ने अपनी रचना समझाने के लिए गद्य का प्रयोग

किया। स्वामी ललितकिशोरी और ललितमोहनी ने एक छोटा ग्रंथ गद्य में रचा और रत्नसेन जैन ने गद्य में अपनी यात्रा का वर्णन किया। किंतु अभी गद्य में कोई प्रबलता नहीं आई।

अन्य कवि

जैसा पहले ही कहा जा चुका है इस काल में बहुत से कवि हुए। ऊपर वर्णन किए हुए कवियों के अतिरिक्त और कई प्रसिद्ध कवि वर्तमान थे। इनमें दो प्रकार के कवि अधिक थे। एक भाषा की आचार्यता और शृङ्गार से संबंध रखने वाले और दूसरे धर्म और भक्ति से संबंध रखने वाले। पहली प्रकार की कविता करने वालों में शिव और जगतसिंह अच्छे कवि थे। शिव ने नायिका भेद पर रसिक बिलास नामक अच्छा ग्रंथ बनाया है। इनके लिखे हुए अलंकार भूषण और पिंगल ग्रंथ भी हैं। शिव नाम के और कई कवि हुए हैं। जगतसिंह ने छंद शृंगार और नखशिख आदि कई ग्रंथों की रचना की। इनकी भाषा भी बड़ी मनोहर है। रूपसाहि नामक एक कवि ने रूपबिलास ग्रंथ बनाया जिसमें रस, अलंकार, नायक नायिका भेद इत्यादि का वर्णन किया है। पुखी नामक कवि के फुटकर छंद शृंगार रस के अच्छे मिलते हैं।

दूसरे प्रकार के कवियों में भगवंतराय खीची ने रामायण लिखी। यह असोथर के राजा थे और बहुत से कवियों के आश्रयदाता थे जिनमें कुछ अच्छे कवि भी थे। बुंदेलखंड में एक दरिया साहब नामक कवि थे। ये अपने को कबीर का अवतार कहते थे। इन्होंने ब्रह्मविवेक, ज्ञान-रत्न, बीजक दरिया साहब, अनुभव बानी इत्यादि कई ग्रंथों की रचना की। अनूपदास नामक कवि ने शांतरस की कविता की। शांतरस की कविता जगजीवनदास ने भी की ये सत्यनामी पंथ के एक आचार्य थे। इन्होंने बानी और ज्ञान प्रकास आदि ग्रंथों की रचना की। वैष्णव संप्रदाय के कई कवि हुए। सहचरिशरण ने ललित प्रकाश

लिखा जिसमें स्वामी हरिदास की बानी इत्यादि का वर्णन है। राधावल्लभी प्रियादास शास्त्री ने वैष्णव सिद्धांत-मत-बोध और सिद्धांत्तोत्तम-तत्व-निर्णय आदि बहुत से ग्रंथों की रचना की, राधा वल्लभी चंद ने भगवान सुबोधिनी लिखी। राधा वल्लभी हित राम कृष्ण ने विनय पचीसी, वृषभान की कथा और श्रीकृष्णविलास आदि बहुत से ग्रंथ बनाए। रसिक अली ने मिथिला विहार लिखा जिसमें रामचन्द्र का मिथिला में आना और उनकी शोभा का मनोहर वर्णन है। एक छंद में लिखते हैं:—

"रतन किरीट राजै राघव सुजान सीस,
उदित विदित कोटि तरुन तमारी है।"

दूसरा विभाग

दूसरे विभाग में १८ वीं शताब्दी के अंतिम भाग अर्थात् अंतिम २५, २६ वर्ष के साहित्य का वर्णन होगा। हिन्दी साहित्य में उत्तमता की मात्रा बहुत दिनों से घटती चली आ रही थी। श्रृंगार रस ने जो अपना सिक्का जमा लिया था वह बराबर चला आ रहा था। उसमें भी कवियों के सामान्य होने के कारण भावों की कमी, शब्दों का आडम्बर और केवल पद्य रचना अधिक होती गयी। कवियों ने अलंकार, नायिका भेद, रस भेद इत्यादि के वर्णनों में अपना बहुत सा समय बिताया जिससे उनके परिश्रम के अनुकूल साहित्य का उपकार न हो सका। वीर रस का तो अभाव हुआ ही, धर्म और भक्ति संबंधी कविता को भी रोना ही पड़ा। बस टीकाओं और अनुवाद का ज़ोर बढ़ रहा था। कविता के विषयों का तो यह हाल था। इस पर संयोग ऐसा घटा कि उच्चकोटि के कवियों की संख्या भी घटने लगी। किंतु इस छोटे से काल में अर्थात् इस दूसरे विभाग में साहित्य ने कुछ सिर ऊँचा किया और अच्छे कवियों की संख्या बढ़ गई जिससे काव्य में उत्तमता की मात्रा बढ़ी। कविता उत्कृष्ट होने के अतिरिक्त विषय भी अच्छे

चुने गए। धर्म और भक्ति की कविता ने कुछ ज़ोर पकड़ा। इस समय की आचार्यता भी अच्छी थी और इस समय के अनुवाद भी अच्छे हुए। कथाएँ इस काल की अच्छी और धार्मिक थीं।

एक बात इस काल के साहित्य के संबंध में विशेष ध्यान देने योग्य यह है कि प्रायः सभी लेखक वर्तमान संयुक्त प्रदेश वा उसके आस पास के थे। महाराष्ट्र या गुजरात की ओर से बहुत ही कम हिन्दी कविता निकली। जान पड़ता है कि इस समय की अशांति के कारण दक्षिण भारत हिन्दी काव्य रचना में उचित भाग न ले सका। अंगरेज़ों से मरहठों की पहली लड़ाई सन् १७७८ ई० से १७८२ ई० तक हुई। दो वर्ष पहले सन् १७७६ ई० में मैसूर के हैदर अली और अंगरेज़ों से लड़ाई छिड़ी हुई थी। सारा दक्षिण इन लड़ाइयों में लगा हुआ था। जब सन् १७६८ ई० में लॉर्ड वेलज़ली बंगाल का गवर्नर जेनरल होकर आया तो फिर अशांति फैलने लगी। किंतु उत्तरी भारत में इस समय तक शांति हो चुकी थी और अंगरेज़ी राज शांतिपूर्वक बढ़ रहा था। इसी शांति के समय में उत्तरी भारत में उर्दू साहित्य ने बड़ी उन्नति की और उस साहित्य के सर्वश्रेष्ठ रत्न मीर तक़ी, सौदा, मीर दर्द, मीर हसन और सोज़ इत्यादि इसी काल में हुए। किंतु दुख की बात है कि यह लोग विशेषतः दिल्ली या लखनऊ के दरबारों में रहते थे और दुर्भाग्य वश उस समय इन दोनों जगहों का वायुमंडल बिलकुल दूषित था। न तो वहाँ धर्म की बात-चीत थी, न वीरता का प्रवेश था और न कोई उच्च आदर्श ही सामने था। इन्हीं कारणों से ये उच्चकोटि के कवि इन उच्च विशेषों पर कविता न कर सके। पूर्वकाल में कुछ मुसलमानों ने भी हिन्दी में उच्चकोटि की धार्मिक तथा आदर्श पूर्ण कविता की थी किंतु इस समय उर्दू का द्वार खुल जाने से मुसल्मान लोगों ने हिन्दी कविता की ओर बिलकुल ध्यान न दिया।

धर्म और भक्ति से संबंध रखने वाली कविता इस काल में कई ढंग की हुई—रामचंद्र ने श्री पार्वती जी के चरणों का वर्णन किया; मंचित ने कृष्णकथा कही; मधुसूदनदास ने रामाश्वमेध का वर्णन किया; गोकुलनाथ, गोपीनाथ और मणिदेव ने महाभारत का अनुवाद कर डाला; कुछ कविता चैतन्य महाप्रभु के यशगान इत्यादि की निकली और कुछ राधावल्लभी ढंग की। फिर कुछ कवियों ने रामायण के आधार पर कविता की।

रामचंद्र

रामचंद्र पंडित थे और बलिया के रहने वाले थे*। यह बड़े उच्चकोटि के कवि थे किंतु हिन्दी का दुर्भाग्य कि इनकी बहुत ही थोड़ी रचना मिली है। इन्होंने चरणचंद्रिका नामक एक ग्रंथ लिखा है। इनके लिखे हुए दो एक और ग्रंथों का पता मिलता है जिनमें एक टोका गीत गोविंद है। चरणचंद्रिका में इन्होंने श्री पार्वती जी के चरणों का वर्णन बड़े ही उत्कृष्ट ढंग से किया है। इस वर्णन से कवि की महान कवित्व शक्ति का परिचय मिलता है। यह ग्रंथ छोटा सा है जिसमें कुल ६२ घनाक्षरी छंद और पाँच अध्याय हैं। चारणों की महिमा यों वर्णन करते हैं :—

" जारे ताप दाहन के मारे पाप पाहन के,
निपट निरासरै थे आस काको धरते।
छूटे सतसंग के अनंग बटपार लूटे,
कूटे कलिकाल के कहाँ ते जाय अरते॥

---

* पूछने से ज्ञात हुआ है कि पंडित जी चंदाडीह नामक ग्राम के निवासी थे और सुनने में आया है कि इनके नाम की प्रसिद्ध रचनाएं वास्तव में इनके शिष्य नवनिधिदास की बनाई हुई हैं। नवनिधिदास जाति के कायस्थ और एक अच्छे साधु थे और कविता भी करते थे। इनके भजन बहुधा गाए जाते हैं।

अति अकुलाय कै डेराय घबराय हाय,
त्राहि त्राहि कहि आगे काके धाय परते।
होते जो न अंब तेरे चरन सरन तौ,
ये अरज गरजवंद कापै जाय करते ॥"

पंडित जी की भाषा संस्कृत मिली ब्रजभाषा है जिसमें एक आध जगह साधारण बोल चाल के फ़ारसी के शब्द भी आ गए हैं। यह रूपक बहुत लिखते थे और इनके रूपक अच्छे बनते भी थे। इनकी कविता उत्कृष्ट और कुछ कठिन है।

मंचित

मंचित कवि भी बड़े उच्चकोटि के कवि थे। इनके कृष्णायन और सुरभी दानलीला दो ग्रन्थ मिलते हैं। कृष्णायन में इन्होंने दोहा और चौपाई छंदों में कृष्ण की कथा कही है। यह ग्रंथ गोसाईं जी के रामायन अर्थात् रामचरित मानस के ढंग पर लिखा है और बहुत अच्छा लिखा है। सुरभी दानलीला एक बड़ा ग्रंथ है जिसमें कृष्ण जी की लीलाओं का वर्णन है। इनकी कविता उत्कृष्ट और मनोहर होती थी और यह कथा लिखने में सफल हुए हैं। इनकी रचना देखिये :—

"भृकुटी बंक नैन खंजन से कंजन गंजन वारे।
मद भंजन खग मीन सदा जे मनरंजन अनियारे॥"

मधुसूदन दास

मधुसूदन कवि ने भी कथा लिखने में अच्छी सफलता पाई और गोसाईं जी का सफल अनुकरण किया। इन्होंने रामाश्वमेध लिखा है। यह ग्रंथ रामचरित-मानस की भाँति चौपाई और दोहों में लिखा है जिसमें कहीं कहीं अन्य छंदों का भी प्रयोग हुआ है। इस ग्रंथ में यज्ञ होने का कारण, भिन्न भिन्न यज्ञों का होना और फिर रामचंद्र का अपनी पत्नी और पुत्रों को बुला लेना बहुत विस्तार पूर्वक वर्णित है। इसमें इन्होंने

वार्तालाप या नगर इत्यादि का अच्छा वर्णन दिया है और नायक नायिकाओं का उचित चित्र उतारा है। ग्रंथ निमार्ण करते समय इन्होंने कथा की उत्पति बतलाई है :—

"जेहि विधि व्यास सूत सन गावा, श्रीअनंत मुनिवरहिं सुनावा"

यह वैसा ही है जैसा तुलसीदास ने रामायण के संबंध में लिखा है कि इसे शंकर ने पार्वती से तथा भरद्वाज ने याज्ञवल्क्य से कहा या काकभुशुंडि ने गरुड़ से कहा। फिर तुलसीदास को भाँति बंदना भी की है :—

"सिय रघुपति पदकंज पुनीता, प्रथमहिं बंदन करौं सप्रीता।
मृदु मंजुल सुन्दर सब भाँती, ससि कर सरस सुभग नख पाँती।
× × ×
चिंतामणि पारस सुरधेनू, अधिक कोटि गुण अभिमत देनू।
जन मन मानस रसिक मराला, सुमिरत भंजत बिपति विसाला।"

इनकी भाषा मुख्यतः अवधी है जिसमें कहीं कहीं ब्रजभाषा भी आगई है। मधुसूदन अच्छे कवि और पूरे भक्त थे और इनका ग्रंथ आदरणीय है।

गोकुलनाथ, गोपीनाथ, मणिदेव

यह धार्मिक कथा का समय ही था। कृष्ण की कथा हुई, राम की कथा हुई, अब पूरे महाभारत का अनुवाद भी हो गया। अनुवाद कर्ता गोकुलनाथ, गोपीनाथ, और मणिदेव थे। गोकुलनाथ प्रसिद्ध कवि और साहित्य के आचार्य रघुनाथ के पुत्र थे। गोपीनाथ गोकुलनाथ के पुत्र थे और मणिदेव गोकुलनाथ के शिष्य थे। इन तीनों कवियों ने मिलकर महाभारत और हरिवंश का अनुवाद किया। यह अनुवाद काशीनरेश महाराज उदितनारायण सिंह की आज्ञा से बना था। यह ग्रंथ विविध छंदों में लिखा हुआ है, लेकिन छंद जल्दी जल्दी बदले नहीं गए हैं। इन तीनों अनुवादकों ने अलग

अलग अनुवाद करके ग्रंथ पूरा किया । महाभारत का एक खंड गोकुलनाथ ने अनुवाद किया, गोपीनाथ ने महाभारत के कुछ खंड का और हरिवंश पुराण का अनुवाद किया और शेष महाभारत का अनुवाद मणिदेव ने किया । यह ग्रंथ कथा प्रासंगिक रचना का सब से बड़ा ग्रंथ है । यह बहुत सरल ढंग से सुपाठ्य भाषा में लिखा है और आद्योपांत रोचक बना है । देखिये :—

"दुर्ग अति ही महत रचित भटन सों चहुँ ओर,
तौन घेरो शाल्व भूपति सैन ले अति घोर ।"
"उड़ैं बायुवश ह्वै तृण जैसे, भये पराजित पर भट तैसे"
"जिमि सिंहहि लखि मृगगण भागत,
भगे जात तिमि भय सों पागत ।" गोकुलनाथ
"जीव रहे लों जियन को करिबो उचित उपाय ।
बुद्धिमान तरि आपदा लहत पार सुखदाय ॥"
"तब रथ रोकि कृष्ण अनुमानी, कहे धनंजय सों यह बानी"
गोपीनाथ
"कृपाचारज के वचन सुनि द्रोणसुत अनखाय,
कह्यो निजमत श्रेष्ठ सब कहँ परत जानि सचाय ।"
"नृप यह सुनि तो सुत रणधीरा, कहत भयो इमि वचन गँभीरा"
मणिदेव

इन तीनों कवियों ने एकसी कविता की है । किसी एक का पृथक अनुवाद केवल अनुवादक के नाम ही से प्रकट होता है । इनकी भाषा ब्रजभाषा और अवधी इत्यादि का मिश्रण है जो पढ़ने में मधुर और समझने में सरल है ।

गोपीनाथ और मणिदेव की कोई अन्य रचनाएँ नहीं मिलतीं केवल इधर उधर कुछ फुटकर छंद मिल जाते हैं किन्तु गोकुलनाथ

के और स्वतंत्र ग्रंथों का भी पता मिलता है। इन्होंने एक चेतचंद्रिका नामक ग्रंथ बनाया। इसमें इतिहास में प्रसिद्ध महाराज चेतसिंह राजा बनारस की वंशावली का वर्णन है। राधाकृष्ण विलास नामक ग्रंथ में रस और भाव भेद तथा नायिका भेद का वर्णन है। इनके और भी ग्रंथ मिले हैं। तीनों कवियों में इन्हीं को श्रेष्ठ समझना चाहिए।

अन्य धार्मिक कवि

अन्य धार्मिक कवियों में कुछ ने श्रीरामचंद्र संबंधी कविता की है और कुछ ने राधा और कृष्ण संबंधी। चैतन्य महाप्रभु के सम्प्रदाय वालों ने भी कुछ कविता की। प्रथम प्रकार के कवियों में मनियारसिंह अच्छे थे जो रामचंद्र जी के भक्त थे। यह बनारस के रहने वाले थे और अपने को मनियार के अतिरिक्त केवल यार भी कहा करते थे। इनके रचित सौंदर्य लहरी, सुंदरकांड और हनुमत छब्बीसी नामक ग्रंथ प्रसिद्ध हैं। इन तीनों में श्रीरामचंद्र या हनुमान संबंधी कविता की गई है। इनमें प्रथम दो तो रामायण ही के आधार पर लिखे गए हैं। इनके अतिरिक्त इन्होंने महिम्न का हिन्दी अनुवाद भाषा महिम्न नामक ग्रंथ में किया। मनियार सिंह बलिया के पंडित रामचंद्र के "चाकर" थे और कुछ दिनों तक वहां इन्होंने वास भी किया और लिखा भी है :—

"चाकर अखंडित श्रीरामचंद्र पंडित को"

फिर "मृगमद मंजुल पास सरयू तट सुरसरि,
बलिया नगर निवास भयो कछुक दिन ते सुमलि"

इनकी भाषा ब्रजभाषा है जिसमें संस्कृत का प्रभावपूर्ण मिश्रण रहता है। जैसे :—

"दामिनि सी देहदुति सर्वजग स्वामिनि,
सो नैनपथ गामिनि है भामिनि पुरारि की" (सौंदर्य लहरी)

अपने सुंदर कांड नामक ग्रंथ में लंकादहन के वर्णन में लिखते हैं :—

"प्रलै काली रौद्र अट्टहास किलकारै,
ललकारै हाँक मानो काल घटा घहरात है।
लंक जारि ठाढ़े सिंधु तट के निकट,
कोटि कोटि बिज्जु छटा की सी छटा छहरात है॥"

उसके बाद

"लैके हाथ मणि कपि कुल मौलि मणि बीर,
उड़े चले स्वर्गपथ अपथ पयाने को।
सिंधु लहरात जंघ जोर पौन हहरात,
झहरात फूल नभ देवता विमाने को॥"

कवित्व और शब्द प्रयोग देखिये।

कवि कृपानिवास ने भी श्रीरामचंद्र संबंधी कई ग्रंथ लिखे हैं जैसे रामरसामृत सिंधु, सीताराम रहस्य, श्रीरामचंद्रजू का अष्टयाम। यह भारी लेखक थे और इन्होंने २०, २२ ग्रंथों की रचना कर डाली है, किंतु इनकी कविता उच्चकोटि की न थी।

श्रीराधा कृष्ण संबंधी कविता करने वालों में हठी और कृष्णदास के नाम स्मरणीय हैं। हठी राधावल्लभी ब्रज के रहने वाले थे और ब्रजभाषा लिखते थे। कविता इनकी रस और माधुर्य पूर्ण होती थी और यह उच्चकोटि के कवि थे। यह अधिकतर घनाक्षरी छंदों में कविता किया करते थे। इनका राधाशतक नामक ग्रंथ प्रसिद्ध है। इनकी रचना देखिये :—

"चाल गजराज मृगराज कैसो लंक,
द्विजराज सो बदन रानी राजै ब्रजराज की।"

इसकी तुलना निम्नलिखित संस्कृत पद से करनी चाहिये।

"द्विजराज मुखी मृगराज कटी गजराज विराजित गम्यगति"

हठी कवि शब्दों का बहुत मनोहर प्रयोग करते थे और इनके अनुप्रास अच्छे होते थे। राधिका जी की सुन्दरताई का वर्णन करते हुए कहते है :—

"चाँदनी की, चंपक की, मैनका, तिलोत्तमा को,
रंभा रति रमा की निकाई कौन काज की।"

कृष्णदास कवि ने माधुर्य लहरी बनाया। यह ग्रंथ विविध छंदों में लिखा है। इसमें श्रीकृष्ण जी की कथा का वर्णन है। यह ग्रंथ बड़ा है किन्तु इसकी कविता उच्च कोटि की नहीं है। इनके दो तीन और ग्रंथों का पता चला है।

चैतन्यमहाप्रभु के सम्प्रदाय वालों में नील सखी और वैष्णव दास के नाम स्मरणीय हैं। नीलसखी अच्छे कवि थे और इनकी भाषा बड़ी मधुर होती थी, जैसे :—

"लोक वेद भेदन ते न्यारी प्यारी मधुर कहानी"

इन्होंने बानी नामक एक अच्छा ग्रंथ लिखा है। वैष्णवदास बंगाल के रहने वाले थे। इन्होंने चैतन्य महाप्रभु का यश गान किया है। ये साधारण कवि थे। इन्होंने गौर गुणगीत नामक ग्रंथ की रचना की।

आचार्य

काव्यकला संबंधी अर्थात् रस अलंकार इत्यादि विषयक कविता भी इस समय में अच्छी निकली और चंदन, जन गोपाल, देवकी नंदन, थान, बेनी और भौन, इन विषयों के बड़े अच्छे कवि थे। चंदन गौर राजा केशरी सिंह के दरबार में रहते थे और हिन्दी और फ़ारसी दोनों भाषाओं में कविता करते थे। फ़ारसी में इन्होंने दीवाने संदल लिखा है। संदल चंदन का फ़ारसी रूप है और यह फ़ारसी कविता में अपना

नाम संदल ही रखते थे। हिन्दी में इनके रचे हुए कई ग्रन्थ हैं। अपने आश्रयदाता के नाम पर इन्होंने केशरी प्रकाश लिखा। इन्होंने शृंगार सार, काव्याभरण और रस कल्लोल नामक ग्रंथों की भी रचना की और एक चंदन सतसई लिखी। इनके और ग्रंथों का भी पता चलता है। चंदन के १२ शिष्य थे और सभी कविता करते थे। जनगोपाल ने समरसार नामक एक उत्कृष्ट ग्रंथ की रचना की है। इसकी कविता भावभरी और भाषा गंभीर है। देखिये :—

"सिंदुर भुसंड गंड मंडल समीप,
गज वदन के रदन की दुति यों लसति है।
साँझ समै क्षीरनिधि नीर के निकट मानो,
द्वैज के कलाधर की कला विलसति है॥"

देवकी नंदन भी उच्चकोटि के कवि थे। इन्होंने शृंगार चरित्र और अवधूत भूषण दो पांडित्य पूर्ण ग्रंथ लिखे हैं। शृंगार चरित्र में नायक और नायिका भेद, हाव, भाव और कुछ अलंकारों का अच्छा वर्णन है। अवधूत भूषण अवधूत सिंह के नाम पर लिखा गया है। अवधूत सिंह देवकी नंदन के आश्रयदाता थे। इस ग्रंथ में भी अलंकारों का वर्णन है। देवकी नंदन की कविता भावपूर्ण है और इनकी रचना सराहनीय है। इन्होंने कहीं कहीं कूट काव्य भी लिखा है।

थान या थानराम चंदन कवि के भैने और सेवक के शिष्य थे। इन्होंने ११ अध्यायों का एक उत्कृष्ट ग्रंथ दलेल प्रकाश नामक लिखा है। यह ग्रंथ दलेल सिंह के नाम पर लिखा गया था। इसमें रसभेद, भावभेद और गुण दोष इत्यादि का वर्णन है। इसकी कविता उच्चकोटि की और भाषा उत्तम बनी है। देखिये :—

" सुरसरि तव जल परस दरस करि,
सुरसरि सम गति लहत अधम नर "

तथा " ऐसी मातु भारती की आरती करत थान,
जाको जस विधि ऐसो पंडित पढ़त है।
ताको दया दीठि लाख पाखर निराखरके,
मुख ते मधुर मंजु आखर कढ़त है॥"

बेनी स्वामी हितहरिवंश के मतावलम्बी थे। इन्होंने रस विलास नामक एक ग्रंथ लिखा जिसमें रस भेद और भाव भेद का वर्णन है। इनके आश्रयदाता टिकैत राय थे जो अवध के वज़ीर थे। इनके नाम पर बेनी ने टिकैत राय प्रकाश नामक ग्रंथ लिखा है। इसमें इन्होंने अपने कुल का वर्णन किया है और टिकैत राय की प्रशंसा में उनको जनक, युधिष्ठिर और कुबेर आदि के समान बतलाते हुए लिखा है :—

" राजन को राजा महाराजा श्री टिकैत राय,
ज़ाहिर जहान में ग़रीब परवर है। "

यह ग्रंथ अलंकार विषयक है। बेनी ने इनके अतिरिक्त कुछ भँड़ौवे के छंद भी बनाए हैं जो अपने ढंग के बहुत अच्छे बने हैं। वास्तव में इनके सबसे अच्छे छंद व्यंग ही के बने हैं। (His best verses are said to be verses of satire " Keay) दया राम के दिए हुए आमों की निन्दा में उनकी छोटाई दिखलाते हुए उनकी समानता अणु परमाणु से करते हुए लिखते हैं :—

" बेनी कवि कहै हाल कहाँ लौं बखान करौं,
मेरी जान ब्रह्म को विचारबो सुगत है।
ऐसे आम दीन्हें दया राम मन मोद करि,
जाके आगे सरसो सुमेरु सो लगत है॥ "

बेनी ने भिन्न भिन्न विषयों पर कविता की है—कहीं यशगान किया है, कहीं नीति कही है, कहीं शृंगार के छंद लिखे हैं और कहीं किसी विषय पर कुछ कह दिया है। इनकी कविता उत्कृष्ट होती थी और इनकी भाषा अच्छी होती थी जिसमें अनुप्रास और यमक बहुत मिलते हैं।

भौन कवि ने रसरत्नाकर नामक एक उत्कृष्ट ग्रंथ लिखा जिसमें रसभेद और भावभेद का सुन्दर वर्णन दिया है। इन्होंने अलंकार विषयक एक शृंगार रत्नाकर नामक ग्रंथ भी लिखा था। इनकी कविता मनोहर होती थी जिसमें रूपक अच्छे अच्छे लिखे हैं। भौन की कविता में अनुप्रास भी अधिक मिलता है। इनकी भाषा शुद्ध ब्रजभाषा है और कविता उच्चकोटि की है। नैन के संबंध में कहते हैं:—

"चूकत न चाय भरे चौकरी चलायबे मैं।
चतुर चलाँक चित चातुर के चेरे हैं॥"

अन्य कवि

ये ऊपर वर्णन किए हुए छवों कवि उच्चकोटि के कवि थे और ये सब प्रायः एक ही श्रेणी के थे। परन्तु अन्य कवियों ने भी इन विषयों पर कविता की जिनकी कविता इतनी उत्कृष्ट न थी। इनमें रामसिंह और भान कवि प्रसिद्ध हैं। दोनों राजवंश के वंशज थे। राम सिंह नरवलगढ़ के राजा थे और भान राजा ज़ोरावर सिंह के पुत्र थे। इन दोनों ने अच्छी कविता की है। रामसिंह ने अलंकार दर्पण, रस निवास और रस विनोद तीन ग्रंथ बनाए। इनके और ग्रंथों का भी पता मिला है। पहले ग्रंथ में अलंकारों का वर्णन दोहों में किया हुआ है और दूसरे और तीसरे में रसों का वर्णन है। भान कवि ने नरेन्द्र भूषण नाम का ग्रंथ लिखा। इसमें अलंकारों का बड़ा अच्छा और स्पष्ट वर्णन उदाहरणों सहित सरल रीति से दिया हुआ है।

ये उदाहरण कुछ तो श्रृंगार रस के हैं और कुछ वीर तथा अन्य रसों के। भान कवि सुन्दर ब्रज भाषा लिखते थे।

"तेरी समसेर की सिफत सिंह रनजोर।
लखी एक साथ हाथ अरिन के सीस पर॥"

जैसा उपर वर्णन हो चुका है धार्मिक ग्रंथों का इस समय में बहुत अनुवाद हुआ। कलानिधि नामक एक कवि थे। इन्होंने अलंकार कलानिधि, श्रृंगार रस माधुरी और वृत्त चंद्रिका इत्यादि ग्रंथों की रचना की और एक नखशिख भी लिखा किन्तु उनके अतिरिक्त इन्होंने वाल्मीकीय रामायण के दो कांड और तीन उपनिषदों तथा ब्रह्मसूत्र के अनुवाद कर डाले। यह अच्छे कवि थे और इनका अनुवाद भी अच्छा होता था। मथुरा नाथ ने पातंजलि भाषा तथा सूत्रार्थ पातंजलि भाषा इत्यादि ५, ६ ग्रंथों की रचना की। कंपिला में एक कवि तोषनिधि थे। इन्होंने रस राज और महाभारत छप्पनी आदि ५, ६ ग्रंथों की रचना की है। छेदी राम ने एक ग्रंथ नेह पिंगल नामक लिखा। नेह इनका कविता का नाम था। प्रेमी यमन नामक कवि ने अनेकार्थ नाम माला ग्रंथ बनाया। इसमें एक एक शब्द के कई अर्थ दिए हैं।

स्त्री कवि

इस समय की स्त्री कवियों में छत्रकुंवरि बाई और बखत कुंवरि के नाम स्मरणीय हैं। छत्र कुंवरि विख्यात कवि महाराजा नागरी दास की पोती थीं। इनकी कविता साधारण किन्तु मधुर होती थी। इन्होंने प्रेम विनोद नामक ग्रंथ लिखा है। इनकी रचना देखिये :—

"श्याम सखी हँसि कुंवरि दिसि बोली मधुरे बैन।
सुमन लेन चलिए अबै यह बिरिया सुख दैन॥"

बख्त कुँवरि दतिया की रहने वाली थीं। इनका दूसरा नाम प्रिया सखी था और यह राधा वल्लभी संप्रदाय की थीं। इन्होंने बानी लिखी है।

इस काल में कुछ अच्छे अच्छे साधुओं ने भी कविता की।

साधुकवि

बरार में एक देवनाथ नामक साधु थे जिन्हों ने ब्रजभाषा में अच्छी कविता की। दूल्हाराम सतनामी पंथ के एक गुरु थे जिन्होंने साखी और शब्द नामक ग्रंथों की रचना की। कल्याण डाकोर के प्रसिद्ध संत थे। इनके बनाए हुए छंद भास्कर और रसचंद्र नामक ग्रंथ हैं। इनकी रचना देखिये :—

" बाटके बटाऊ प्यासे पूंछें तीर कूप कहाँ।
अहो क्षीर सागर बड़ाई धिक् तेरी है॥ "

अयोध्या में एक राम चरण दास कवि थे जिन्होंने बीसों ग्रन्थों की रचना की है। इनकी कविता अधिकतर श्रीरामचंद्र संबंधी होती थी। इनका एक ग्रंथ रामचरित मानस की टीका है। यह टीका बड़ी उत्तम है। इन्होंने छप्पै रामायण, राम पदावली, कौशलेंद्र रहस्य इत्यादि ग्रंथ रचे हैं। रामचरणदास बड़े पंडित थे और टीकाकारों में इनका नाम प्रसिद्ध है।

इस समय में कई अच्छी अच्छी टीकाएं निकलीं। भक्त माल की

टीकाएं, अनुवाद

एक टीका बालक राम ने लिखी और भक्तमाल ही की एक टीका भक्ति रस बोधिनी टीका नामक अग्रनारायण ने लिखी। फिर भक्तमाल ही की टीका भक्तमाल-बोधिनी टीका नामक वैष्णव दास ने लिखी। इन्होंने इस टीका के अतिरिक्त भक्तमाल माहात्म्य और भक्तमाल प्रसंग लिखा। एक लेखक रतन दास ने तीन टीकाएं लिखीं और तीनों गद्य में चौरासी की टीका, स्वरोदय की टीका और सेवक बानी की टीका।

सेवक दास इनके गुरु थे। ऐसे ग्रंथों के अतिरिक्त बिहारी सतसई की भी एक टीका निकली जो अमर चंद्रिका के नाम से प्रसिद्ध है। यह टीका गद्य और पद्य दोनों में है। और छतरपूर के अमरसिंह की लिखी हुई है। सतसई की टीका तो अलग रहे इसका संस्कृत में अनुवाद भी इसी समय हुआ—अनुवादक हरिप्रसाद थे। इसी समय में बहार दरवेश नामक फ़ारसी ग्रंथ का अनुवाद हिन्दी में हुआ। यह अनुवाद भूप नारायण सिंह ने किया था। बहार दरवेश की कथा दो एक और कवियों ने भी लिखी। ज्ञात होता है कि इस समय टीका और अनुवाद का विस्तार बढ़ गया था।

इतिहास, राजनीति

इस काल में कथाएं बहुत सी लिखी गईं किंतु इतिहास एक ही निकला और वह भी पद्य में। यह इतिहास शिवराजपुर के चंदेल राजाओं का है और कानपूर ज़िला के रहने वाले नारायण कवि का बनाया है। एक और महाशय ने इतिहास स्वयं तो नहीं लिखा किन्तु टॉड साहेब को राजस्थान के इतिहास लिखने में सहायता दी। यह महाशय राजपूताना के रहने वाले थे और इनका नाम ज्ञान चंद यती था। इतिहास की तो यह दशा रही, राजनीति की भी कोई विशेष अच्छी दशा न थी। अमृत ने राजनीति नामक और नंददास ने राजनीति हितोपदेश नामक ग्रन्थों की रचना की।

अन्य विषय

इस काल में और फुटकर विषयों पर कम रचना की गई। वैद्यक पर धनंतर ने औषधि विधि लिखी जो गद्य में है और छत्रसाल मिश्र ने औषधसार लिखा। छत्रसाल ने एक ग्रन्थ शकुन परीक्षा और एक ग्रंथ स्वप्नपरीक्षा नामक भी लिखा। स्वप्नपरीक्षा का एक ग्रंथ द्विजछत्र ने भी लिखा। लालजी मिश्र ने एक ग्रंथ कोकसार नाम का लिखा। ज्योतिष संबंधी रमल भाषा नामक एक ग्रंथ बालन दास ने लिखा और

गणित संबंधी दस्तूर मालिका नामक एक ग्रंथ कमलाजन ने लिखा। राग पर राधा कृष्ण ने रागरत्नाकर और कृष्ण ने राग समूह लिखा।

नाटक

नाटक का समय अब भी नहीं आया था किंतु लालझा नामक एक अच्छे नाटककार हुए जो मिथिला के रहने वाले थे और दरभंगा के राजा के यहाँ रहते थे। इनका गौरीपरिणय नाटक प्रसिद्ध है। उधर अमृतसर के गुलाब सिंह ने चंद्रप्रबोध नाटक नाम का एक ग्रन्थ लिखा। पहले के नाटकों में बहुत से केवल नाम ही नाम के नाटक थे। अब थोड़े दिनों में वास्तविक नाटकों की बारी भी आरही थी।

हिन्दी का फैलाव

साधारणतः इस काल में हिन्दी कविता का फैलाव न हुआ। मरहठों में दौलत राव सींधिया ने कुछ कविता की जो अध्यात्म या बंदना विषयक है। महाराष्ट्र कवि गणपतराव ने भी हिन्दी में कुछ कविता की। जैनियों में भी कोई प्रसिद्ध कवि न हुआ। लाल चंद जैन ने श्रीपाल चौपाई लिखी और रंगविजय जैन ने भी कुछ कविता की। मुसलमानों में कोई नाम लेने योग्य हिन्दी का कवि हुआ ही नहीं। राजपूतानी भाषा के एक कवि भीखन जी हुए जिन्होंने इस भाषा में सारंगा की कथा लिखी। पूर्वी भाषा में गोविन्दजी ने बहुत ही साधारण श्रेणी की कविता की। बघेल खंड के एक साधारण कवि थे जिनका नाम बलदेव था। इन्होंने कुछ कवियों की कविता का एक संग्रह निकाला जिसका नाम सत्कवि गिराविलास संग्रह है। इनका लिखा हुआ एक कांदबरी नामक ग्रंथ भी है। बुंदेल खंड में किंकर गोविन्द नाम के एक अच्छे कवि थे। चरखारी के महाराजा विक्रमादित्य भी अच्छे कवि थे। ये महाराजा स्वयं कवि और कवियों के आश्रयदाता थे। इनका विक्रम सतसई नामक ग्रंथ हिन्दो में

प्रसिद्ध है। यह श्रृंगार रस का एक अच्छा ग्रंथ है। इन्होंने विक्रम विरुदावली और हरि भक्ति विलास नामक दो और ग्रंथों की रचना की। जयपूर के महाराजा प्रताप सिंह भी कविता करते थे। इन्होंने विविध विषयों पर छः सात ग्रंथ लिखे हैं, जैसे श्रृंगारमंजरी, नीति मंजरी, वैराग्य मंजरी। इन्होंने भर्तृहरिशतक की टीका भी लिखी।

गद्य

इस काल में हिन्दी गद्य को कुछ प्रावल्य मिला। गद्य में अधिकतर टीकाएं और अनुवाद लिखे गए। मथुरा नाथ ने सूत्रार्थपातंजलि गद्य में लिखा। रतन दास ने चौरासी, सेवक बानी और स्वरोदय तीनों की टीकाएं गद्य में लिखीं। बिहारी सतसई की टीका अमर सिंह ने गद्य पद्य मिलाकर की। टीकाओं के अतिरिक्त अन्य ग्रंथ भी गद्य में लिखे गए। बनारस के राधिका नाथ बनर्जी ने दो ग्रंथ सुहासिनी और स्वर्णबाई गद्य में लिखे और धनंतर ने अपनी औषधि-विधि गद्य में लिखी। अब गद्य का भी समय आ रहा था और थोड़े ही दिनों में वर्तमान गद्य के जन्मदाता लल्लू जी लाल और सदल मिश्र के ग्रंथ प्रकाशित होने वाले थे।

चौथा प्रकरण

लल्लू जी लाल से लेकर हरिश्चंद्र के पहले तक
(१९ वीं शताब्दी के प्रथम ६० वर्ष)

अठारहवीं शताब्दी के बाद से भारतवर्ष के इतिहास में एक नया काल आरंभ होता है। वास्तव में इस समय एक नवीन युग का आगमन भारत ही में नहीं वरन् युरोप और अमेरिका में भी हुआ। इस नवीनता का प्रभाव राजनैतिक और सामाजिक दशा पर तो पड़ा ही, साहित्य पर भी ख़ूब पड़ा। भारत में अंगरेज़ी राज्य लॉर्ड वेलज़ली के बाद बिलकुल दृढ़ हो गया। जो कुछ कमी रही भी वह १८१८ ई० तक पूरी हो गई। तब से इधर उधर लड़ाइयां तो अवश्य होती रहीं किंतु राष्ट्रीय जीवन पर उनका कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता था। जब कुछ शांतिपूर्वक शासन होने लगा तो गवर्नमेंट का ध्यान भारतवासियों की शिक्षा इत्यादि की ओर आकर्षित हुआ और पहले पहल सन् १८१३ ई० में १ लाख रुपया शिक्षा के लिए सरकार की ओर से प्रदान किया गया। फिर १८५४ ई० में भारतीय भाषाओं के शिक्षा के लिए तथा ग्राम्य विद्यालयों के लिए व्यवस्था की गई और अंत में १८५७ ई० में कलकत्ता, मद्रास और बंबई के विश्व-विद्यालय खोले गए। इन सब का यह प्रभाव पड़ा कि हिन्दी गद्य की उन्नति हुई क्योंकि शिक्षा विशेषतः आरंभिक शिक्षा साधारणतः गद्य ही में दी जाती है।

दूसरी बात ध्यान देने योग्य यह है कि इस समय से ईसाई धर्म के पादरियों का आगमन होने लगा। मुग़ल साम्राज्य में आकर पादरियों ने अपना तथा अपने धर्म का कुछ प्रभाव दिखलाया था

परंतु उन दिनों उनका इतना ज़ोर न था। लेकिन जब अंगरेज़ी राज में ये लोग आए तो इनका प्रभाव बहुत बढ़ा। इसाई धर्म के प्रचार के लिए इन लोगों ने बाइबिल इत्यादि ग्रंथों का हिन्दी में अनुवाद कराया और और बहुत सी किताबें लिखवाईं। इसके अतिरिक्त इन लोगों ने स्थान स्थान पर अपने स्कूल और कॉलेज खोले। इन सब बातों से हिन्दी गद्य की वृद्धि हुई और उसमें भिन्न भिन्न विषयों पर रचनाएं होने लगीं। पहले अंगरेज़ी सरकार ने व्यापारियों को भारत में आने की आज्ञा दी थी। फिर सन् १८१३ ई० में सरकार ने मिशनरी लोगों को अर्थात् इसाई धर्म फैलाने वालों को भी यहां आने और अपना धर्म फैलाने की आज्ञा दे दी। किंतु इस आज्ञा में इतना रोक रखा गया था कि बिना लैसन्स (आज्ञापत्र) कोई न आने पावे। कुछ दिनों बाद यह रोक भी हटा दिया गया। धर्म का प्रचार जनता में किया जाता है, इसी लिए जब जब किसी धर्म का प्रचार होता है तब तब जनता की बोलचाल की भाषा की उन्नति होती है। कबीरदास तथा वैष्णव कवियों के समय में यह एक प्रधान कारण था जिससे हिन्दी की बड़ी उन्नति हुई। लेकिन चूंकि इसाई धर्म यहाँ पर ज़ोर पकड़ न सका इसलिए उसके कारण जो भाषा की वृद्धि हुई वह बहुत कम हुई। फिर इसाई धर्म के दुर्भाग्य से थोड़े ही दिनों में ब्रह्म समाज और आर्य समाज की उत्पत्ति और शीघ्र उन्नति हुई जिससे इसाई धर्म को और बड़ा धक्का पहुँचा। किंतु स्वयं आर्य समाज इसाई धर्म से कहीं अधिक हिन्दी की उन्नति का कारण हुआ। इसके प्रवर्तक स्वामी दयानंद सरस्वती ने हिन्दी का बड़ा उपकार किया और आर्य समाज के कारण हिन्दी की बड़ी उन्नति हुई।

तीसरी बात ध्यान देने योग्य यह है कि जैसे जैसे अंगरेज़ों का राज जमता गया और शांति फैलती गई तैसे तैसे भारतीय और

युरोपीय सभ्यताओं का मेल या घर्षण होता गया। इसमें अंगरेज़ी शिक्षा और मिशनरी लोगों का मुख्य भाग रहा। आरंभ में इसका प्रभाव केवल इतना ही पड़ा कि कुछ छापेखाने खुले; पुस्तकें प्रकाशित हुईं; गद्य में ग्रंथ निकले और प्रारंभिक शिक्षा की किताबें निकलीं। इनके अतिरिक्त कुछ सांसारिक विषयों पर भी रचना की गई।

अब दूसरी ओर भी थोड़ा ध्यान देना चाहिए। गद्य की वृद्धि और सांसारिक विषयों पर रचना होने से काव्य का पक्ष दुर्बल हुआ। न तो कोई नवीन धारा ही निकली और न पुरानी धाराओं में कोई उन्नति ही की गई। कविता विचारी अपने पुराने ढंग से चली आ रही थी और उत्कृष्ट कवियों के न होने से वह और नीचे गिरती गई। एक दूसरी बात जो हिन्दी साहित्य के इतिहास पढ़ने वालों के लिए जाननी आवश्यक है वह यह है कि अंगरेज़ी राज ने जो शांति प्रदान की वह स्वतंत्रता की शांति न थी। १८ वीं शताब्दी के झगड़ों और घोर अशांति के बाद यह समय बहुत सुहावना मालूम होता था। किंतु वास्तव में यह उतना सुहावना न था। देश में राष्ट्रीयता का भाव न था और न स्वतंत्रता का उत्साह तथा जीवन का उबाल था। इससे साहित्य उच्चकोटि को न पहुँच सका और न उसमें गंभीर तथा विचारपूर्ण विषयों का पूरा समावेश ही हो सका। जब १८५७ का बलवा हो चुका और अंगरेज़ी सरकार ने भारत का शासन ईस्ट इंडिया कम्पनी के हाथ से निकाल कर अपने हाथ में ले लिया तब भारत की दशा में विचारणीय परिवर्तन हुआ। विश्वविद्यालयों ने अंगरेज़ी शिक्षा का प्रचार किया। हाईकोर्टों ने अंगरेज़ी ढंग का शासन फैलाया और भारतवासी अधिक संख्या में इंगलैंड तथा अन्य देशों में जाने लगे जिसका एक मुख्य प्रभाव यह पड़ा कि स्वतंत्रता का विचार बहुत ज़ोर पकड़ने

लगा और एक प्रकार का भारी आन्दोलन उठा उधर धार्मिक और सामाजिक बातों में आर्य समाज ने उलट फेर शुरू किया; इधर स्थानीय स्वयं-शासन (local self-government) की मांग होने लगी। अंगरेज़ी सरकार ने भी इस समय उदारता दिखलाई। धीरे धीरे स्वतंत्रता तथा स्वराज्य की मांग बढ़ने लगी जिसका साहित्य पर यह प्रभाव पड़ा कि राजनैतिक विचारों तथा समाचार-पत्रों की वृद्धि हुई। किंतु यह सब बातें मुख्यतः १८६० ई० के बाद ही हुईं। १८०० ई० से १८६० ई० तक इन बातों की केवल जड़ पड़ती रही और इनका अधिक प्रभाव न पड़ सका।

इस काल में गद्य की उन्नति हुई। प्राचीन समय में गद्य मुख्यतः ब्रजभाषा में था। केवल कहीं कहीं कोई लेखक खड़ी बोली का प्रयोग करता था किंतु इस समय से खड़ी बोली का सिक्का जमने लगा और गद्य प्रधानतः खड़ी बोली ही में लिखा जाने लगा। धीरे धीरे पद्य भी खड़ी बोली में लिखा गया किंतु आज तक भी कोई कोई कवि ब्रजभाषा में कविता करते हैं। विषयों में भी थोड़ा बहुत परिवर्तन होने लगा किंतु बहुत दिन तक पुराना ही ढंग चला आया। श्रृंगार रस की कविता कम होने लगी; कथा प्रासंगिक कविता की चाल धीमी हुई; काव्य कला अर्थात् रस अलंकार पिंगल इत्यादि कवियों की रचनाएं शिथिल होने लगीं; किंतु साथ ही साथ कविता का उत्कर्ष भी घटता गया। कवियों का ध्यान भाव की ओर से बिलकुल हटने लगा। वे लोग बस भाषा ही को अलंकृत करने लगे। मालूम होता है कि कवियों की कवित्व शक्ति ही घट गई और बहुत ही कम अच्छे कवि हुए। जब एक युग बदलता है और दूसरे का प्रवेश होता है तो जीवन के प्रत्येक रूप में एक विचित्र दृश्य दिखलाई पड़ता है—एक ओर तो पुराने ढंग की ओर से ध्यान खींचने लगता है और उसमें अवनति होने लगती है

दूसरी ओर नये ढंग का पूरा लाभ नहीं मिलता। ऐसा समय सचमुच बड़ा बेढब होता है और जितनी ही जल्दी इसका अंत हो जाय उतना ही अच्छा। परंतु भारत वर्ष में यह समय बहुत दिन तक रहा।

जिस समय का वर्णन अंतिम भाग में हो चुका है वह यद्यपि बहुत थोड़े वर्षों का था तथापि उसमें रामचंद्र, मंचित, मधुसूदन और ग्वाल इत्यादि उच्चकोटि के कवि थे। किंतु इस ६० वर्ष के समय में अच्छे कवियों की संख्या बहुत कम थी। इस काल के मध्य भाग में चार पाँच अच्छे कवि हुए लेकिन उनके पहले और पीछे कविजन संख्या में तो अधिक हुए किंतु उनकी उत्कृष्टता कम थी। इस बड़े काल के दो विभाग हो सकते हैं—एक पद्माकर कवि की मृत्यु तक अर्थात् सं० १८३३ ई० तक और दूसरा उसके बाद। इस विभाग करने का एक विशेष कारण यह है कि गिरती हुई कविता को पद्माकर ने थोड़ा सम्भाला। फिर उनकी मृत्यु के बाद उसका पतन होता गया।

पहला भाग

लल्लू जी लाल से पद्माकर तक

(१९ वीं शताब्दी का पहला तिहाई भाग)

इस काल में रस भेद, भाव भेद, नायिका भेद तथा नखशिख इत्यादि पर बहुत से ग्रंथ रचे गए। कवियों ने भाव का ध्यान छोड़ कर भाषा की ओर बहुत अधिक ध्यान दिया। इस भाषा में बिहारी अथवा देव की भांति सुंदर रचना तो न हो सकी केवल अलंकारों का प्रयोग रहा। अंत में अनुप्रास का इतना प्रयोग होने लगा कि बहुधा वह बिलकुल अरोचक हो गया और उसमें स्वाभाविकता का

लेश मात्र न रह गया। कविता अभी मुख्यतः शृंगार रस ही की थी किंतु बहुत से कवियों ने रामायण महाभारत तथा कृष्ण काव्य की ओर भी ध्यान दिया। कुछ ने तो इन विषयों पर मौलिक रचना की किंतु अधिक कवियों ने टीकाएं बनाईं और अनुवाद किए। जैन धर्म संबंधी रचना भी कुछ हुई और अंतिम काल की अपेक्षा जैन कवि अधिक और अच्छे हुए। शृंगार और धर्म के अतिरिक्त वीर साहित्य भी कुछ निकला और पद्माकर और चंद्रशेखर ने उसकी ओर भी शृंगार से कम ध्यान नहीं दिया।

एक और विशेषता ध्यान में लाने योग्य यह है कि इस समय राजपूतानी भाषा में कई ग्रंथों की रचना हुई। दूसरी ओर खड़ी बोली अपना अधिकार जमा रही थी। व्रजभाषा की अवनति का समय आ रहा था। किंतु इस नई धारा के प्रवाहित होने पर भी हिन्दी साहित्य अभी अधिकतर पुराने ही ढंग का रहा। लल्लू जी लाल और सदलमिश्र ने इस पुराने ढंग में एक बड़ा छिद्र कर दिया किंतु ये लोग बड़े उत्तम कवि या बड़े प्रबल लेखक न थे। इससे ये साहित्य को शीघ्र प्रभावित न कर सके। जब महाकवि हरिश्चंद्र ने अपनी लेखनी उठाई तब से नवीन युग की पूरी चमक आने लगी।

फ़ोर्ट विलियम कॉलेज और सिरामपूर

लल्लू जी लाल और सदलमिश्र दोनों कलकत्ता के फ़ोर्ट विलियम कॉलेज में नौकरी करते थे। उस कॉलेज के अध्यक्ष उस समय जान गिलक्रस्ट थे। उन्होंने अन्य कर्मचारियों की सहायता से अपने कॉलेज में कई विद्वानों और लेखकों को इकट्ठा किया और उनसे उर्दू और हिन्दी में पुस्तकें लिखवाईं। ये पुस्तकें मुख्यतः अंगरेज़ कर्मचारियों के पढ़ने के लिए बनाई गई थीं। लेखकों में कुछ उर्दू लिखने वाले थे और कुछ हिन्दी। हिन्दी लिखने वाले लल्लू जी

लाल और सदलमिश्र थे जिनमें लल्लू जी लाल उर्दू भी लिखते थे। इसी कॉलेज में पहले पहल छापाखाना भी खोला गया जिस से पुस्तकों के प्रकाशित करने में सुगमता पड़े किंतु थोड़े दिनों तक व्यय इत्यादि के कारणों से विशेष उन्नति न हो सकी। इधर कलकत्ता में तो हिन्दी की इस तरह से वृद्धि हो रही थी, उधर सिरामपूर में विलियम कैरी और अन्य मिशनरी लोगों ने बाइबिल का हिन्दी अनुवाद निकाला। इस अनुवाद के अतिरिक्त इन लोगों ने रामायण आदि कई हिन्दी की पुस्तकें प्रकाशित कीं।

वर्तमान हिन्दी गद्य

लल्लू जी लाल और सदलमिश्र वर्तमान हिन्दी गद्य के जन्मदाता समझे जाते हैं। इसका तात्पर्य यह नहीं कि इन लोगों के पहले किसी ने गद्य लिखा ही नहीं। बहुत पहले महात्मा गोरख नाथ जी ने गद्य में रचना की थी। फिर गंगाभाट और जटमल ने ब्रजभाषा और खड़ी बोली मिश्रित गद्य लिखा। इसी प्रकार समय समय पर बहुत सी रचना गद्य में होती गई किंतु लल्लू जी लाल और सदलमिश्र ने गद्य लिखने की एक प्रणाली सी बना दी। उनके बाद से बराबर गद्य लिखा जा रहा है। इन दोनों के ग्रंथ ब्रजभाषा मिश्रित खड़ी बोली में हैं। थोड़े दिनों में ब्रजभाषा में गद्य लिखने की प्रथा बिलकुल जाती रही। आज कल पद्य में भी खड़ी बोली ही का ज़ोर है किंतु कभी कभी ब्रज भाषा की कविता भी निकल आती है।

लल्लू जी लाल

लल्लू जी लाल आगरा के रहने वाले गुजराती ब्राह्मण थे। इन्होंने बहुत से ग्रंथों की रचना की और विविध विषय पर। इनका सब से प्रसिद्ध ग्रंथ प्रेमसागर है जो गद्य का एक उत्कृष्ट ग्रंथ समझा जाता है। मुख्यतः तो यह ग्रंथ गद्य में है किंतु कहीं कहीं दोहे और चौपाइयाँ भी मिलती हैं। इस में भागवत दशम स्कंध की कथा लिखी है। वास्तव में यह

कथा एक ब्रजभाषा ग्रंथ के आधार पर लिखी गई थी और छ वर्ष में तैयार हुई थी। इसकी भाषा ब्रजभाषा मिली हुई खड़ी बोली है। इन्होंने केवल ब्रजभाषा में राजनीति नामक ग्रंथ लिखा जो हितोपदेश और पंचतंत्र के आधार पर लिखा है। फिर इन्होंने हिन्दी और उर्दू मिली भाषा में बैताल पचीसी और सिंहासन बतीसी बनाई और सभाविलास नामक एक ब्रजभाषा काव्य-संग्रह निकाला। इनके अतिरिक्त इन्होंने शकुंतला आदि की कथाएँ लिखीं और बिहारीलाल की सतसई की लाल चंद्रिका नामक प्रसिद्ध टीका निकाली। हिन्दी के अतिरिक्त उर्दू में भी इन्होंने कुछ रचना की। इनके गद्य का उदाहरण देखिये :—

"कहो उद्धव जी हरि हम बिन (हमारे बिना) वहाँ कैसे इतने दिन रहे और क्या संदेशा भेजा है कब आया (आकर) दर्शन देंगे।" "तहाँ (वहाँ) ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र इन तीनों देवताओं ने आ (आकर) उससे पूँछा कि तू किस लिये इतनी कठिन तपस्या करती है।"

"जद श्री कृष्ण ने नंद जसोदा समेत सब ब्रजबासी अति दुखित देखे तद तृनावर्त को फिराय आँगन में ला सिला पर पटका कि विसका जी देह से निकल सटका। आँधी थँभ गई उजाला हुआ सब भूले भटके घर आए। देखें तो राक्षस आँगन में पड़ा है। श्रीकृष्ण छाती पर खेल रहे हैं। आते ही जसोदा ने उठाय कंठ से लगा लिया और बहुत सा दान ब्राह्मणों को दिया।"

लल्लूजी लाल का गद्य कुछ पद्यमय है और इसमें पद्य के लक्षण भी मिलते हैं, जैसे शब्दों का सरस प्रयोग तथा अलंकारों का बाहुल्य या वर्णन का ढंग। देखिये :—

"पति बिना कामिनी ऐसी शोभा हीन है जैसे चंद बिन यामिनी।" "जिस काल बाला बारह वर्ष की हुई तो उसके मुख

चंद्र की ज्योति देख पूर्णमासी का चंद्रमा छवि छीन हुआ, बालों की श्यामता के आगे अमावस्या की अंधेरी फीकी लगने लगी।"

सदल मिश्र

सदल मिश्र की रचना में खड़ी बोली लल्लूलाल जी की रचना की अपेक्षा अधिक है, अर्थात् इन्होंने शुद्धतर खड़ी बोली का प्रयोग किया। इनका लिखा हुआ प्रसिद्ध ग्रंथ नासकेतोपाख्यान है जिसमें नासकेतु की कथा कही गई है। यह मुख्यतः गद्य ग्रंथ है किंतु इसमें भी कहीं कहीं छंदों का प्रयोग हुआ है। इनके गद्य का उदाहरण :—

"कमल के फूलों पर भौंरे गूँज रहे थे" "जिनके चरणकमल के स्मरण किये से (करने से) विघ्न दूर होता है।"

सदल मिश्र की भाषा लल्लूलाल की भाषा की अपेक्षा अधिक सरल ढंग से लिखी गई है और उसमें बोलचाल के मुहाविरों का अच्छा प्रयोग है। देखिये :—

"इतनी कह ऋषि के चरण पर गिर पड़े। अति प्रसन्न हो मुनि उठा पीठ ठोंक आशीश दे बोले कि धन्य हो राजा रघु, क्यों न हो, मुंह पर कहाँ तक बड़ाई करें।"

"अब मारे शोक के मेरी छाती फटती है।"

तथा "ईश्वर करे यों ही सदा फूले फले रहो।"

और "सखी सहेली और जात भाइयों की स्त्री सब दौड़ी हुई आईं, समाचार सुनि जुड़ाईं, मगन हो हो नाचने गाने बजाने लगीं।"

पुराना ढंग

पुराने ढंग के साहित्य में अधिकतर रस भेद, भाव भेद, नायक नायिका भेद, नखशिख, अलंकार और पिंगल संबंधी कविता है। इन विषयों के प्रसिद्ध कवि बेनी प्रवीन, गुरुदीन पाँड़े, पद्माकर, चंद्रशेखर, ग्वाल और प्रताप

थे। यह छवो उच्चकोटि के कवि थे जिनमें पद्माकर और चंद्रशेखर ने शृंगार के अतिरिक्त वीर रस की भी उत्कृष्ट कविता की है और पद्माकर ने भक्ति रस की भी अच्छी कविता की है। ग्वाल ने यमुना नदी पर कविता की और प्रताप ने कुछ श्रीरामचन्द्र पर छंद लिखे।

बेनी प्रवीन

बेनी नाम के कई कवि हो गए हैं। बेनी प्रवीन लखनऊ के रहने वाले थे। कहते हैं कि इनको प्रवीन की उपाधि एक बेनी ही नामक कवि ने दी थी जिनका वर्णन पहले आ चुका है और जो महाराजा टिकैतराय के आश्रित थे। दोनों कवि बड़ी अच्छी कविता करते थे और दोनों ने रस भेद और भाव भेद लिखा है। बेनी प्रवीन का सबसे प्रसिद्ध ग्रंथ नवरस तरंग है जिसमें रस भेद और भाव भेद का वर्णन बड़े उत्तम छंदों में किया गया है। इसमें नायिका भेद अच्छा और विस्तार के साथ कहा है। बेनी प्रवीन ने शृंगार भूषण और नानाराग प्रकाश दो और ग्रंथों की रचना की। इन्होंने शृंगार रस की बड़ी अच्छी कविता की है। कहते हैं —

"प्रेम सुसेवन में गुरु लोगनि देविन देवन के सम एरी,
बेनी प्रवीन लसे अधरानि में कोमल बोल सकोच सनेरी।
प्रीतम में सुख प्रीति सराहिये के गुनसील सुभाय घनेरी,
को सिय तेरी कहै उपमा तिय तोसो तुही तिहुँ लोक उजेरी॥"

बेनी प्रवीन ब्रजभाषा में कविता करते थे और संस्कृत के भी अच्छे ज्ञाता थे। इन्होंने कहीं कहीं रूपक और अनुप्रास लिखे हैं जो अच्छे हैं। थोड़े ही दिनों में अनुप्रास का फैशन चलने वाला था। बेनी की रचना में प्राकृतिक वर्णन कहीं कहीं बड़ा अच्छा है। इनकी कविता के उदाहरण देखिये :—

"रचना सकल लोक लोकन बनाए ऐसी
जुगुति में बेनी प्रबीनन के प्यारे हैं।
राधे को बनाय विधि धोयो हाथ जाम्यों रंग,
ताको भयो चंद्र कर झारे भये तारे हैं॥"

"भोरहि न्योति गई ती तुम्हें वह गोकुल गाँव की ग्वालिनि गोरी।"

"बेनी प्रवीन बनाय बिरी बरईनि बने रहैं राधिका केरी।"

गुरुदीन गुरुदीन पाँड़े ने बाग मनोहर नामक ग्रंथ लिखा। इसमें अलंकार इत्यादि का पूरा वर्णन है और इनके साथ पिंगल का विषय भी अच्छी तरह से वर्णित है। इन्होंने बहुत सुन्दर भाषा लिखी है जिसमें ब्रजभाषा और बैसवाड़ी मिली है।

"भृकुटियों वृषभान सुता लसैं, जनु अनंग सरासन को हँसैं।"

पद्माकर पद्माकर भट्ट कवि मोहनलाल भट्ट के पुत्र थे। इनका जन्म सं० १७५३ ई० में बाँदा में हुआ था और ये सं० १८३३ ई० तक जीवित रहे। यह एक विद्वान पंडित के पुत्र स्वयं विद्वान थे। कहा भी है:—

"संस्कृत प्राकृत पढ़ो जु गुनग्रामा हौं।"

हिन्दी भाषा के प्रायः सभी कवियों की पूरी जीवनी अप्राप्य है। इस कारण से उनके जीवन और उनकी रचनाओं का संबंध उचित रूप से नहीं दिखलाया जा सकता। यह बड़े शोक की बात है, परन्तु पद्माकर जो के जीवन का हाल जितना मालूम है उससे इनकी कविता का घनिष्ठ संबंध दीख पड़ता है। ये कई राजाओं के यहाँ घूमे और सर्वत्र सम्मानित हुए। इन्होंने लिखा भी है:—

"हय रथ पालकी गयंद गृह ग्राम चारु,
आखर लगाय लेत लाखन की सामा हौं।"

इनको कविता से बड़ी आमदनी थी, और यह आराम के साथ रहते थे। आराम का जीवन व्यतीत करते हुए इन्होंने किसी अन्य स्त्री को अपनी प्रेमिका बना कर रख लिया था। इस जीवन का उनके शृंगार रस की कविता से असंदिग्ध संबंध है। पद्माकर जी कुछ दिनों तक हिम्मत बहादुर के यहाँ थे। हिम्मत बहादुर गोसाईं अनूप गिरि का दूसरा नाम था। हिम्मत बहादुर सचमुच एक बहादुर योद्धा थे। इनकी एक लड़ाई में पद्माकर जी भी मौजूद थे। फिर ऐसी दशा में इनसे वीर रस की कविता की आशा करनी ही चाहिये। अंत में यह विचारे कुष्ठरोग से पीड़ित हो गये। उस समय इनका यह विचार होने लगा कि मैंने बहुत पाप किया है। ऐसा विचार करते हुए रोग से छुटकारा पाने के लिये इहोंने भक्तिरस का एक छोटा किंतु उत्तम ग्रंथ प्रबोधपचासा बनाया। ईश्वर की कृपा से इनका रोग अच्छा हो गया। तब ये कानपूर रह कर श्रीगंगा जी का सेवन करने लगे। इस दशा में इन्होंने एक छोटा सा उत्कृष्ट ग्रंथ गंगालहरी नामक बनाया। इससे स्पष्ट मालूम होता है कि पद्माकर जी के जीवन और उनकी रचनाओं में कितना संबंध है।

पद्माकर ने तीन रसों की कविता की है—शृंगार, वीर और भक्ति। इनका सबसे प्रसिद्ध ग्रंथ जगद्विनोद है जो जयपूर के महाराज जगतसिंह की आज्ञा से बनाया गया था। यह शृंगार रस का एक बड़ा ग्रंथ है जिसमें रस भेद और भाव भेद का बड़ा मनोहर उत्कृष्ट और स्पष्ट वर्णन है और रसराज की भाँति यह भी बहुत उपयोगी और लोकप्रिय है। पद्माकर ने हिम्मत बहादुर विरदावली नामक वीर रस का एक उत्कृष्ट ग्रंथ लिखा है। इसकी भाषा व्रजभाषा है जिसमें प्राकृत का मिश्रण है। भक्तिरस का इन्होंने एक उत्तम ग्रंथ प्रबोधपचासा नामक लिखा है। यह ग्रंथ भक्तिभाव से

भरा है। यह भक्ति भी श्रीरामचन्द्र की है और कट्टर ढंग की है श्रीकृष्ण की शृंगार मयी भक्ति नहीं है। कहते हैं :—

"भाषत क्यों न भयो पदुमाकर रामहिं राम रसायन बानी।"

इन तीन ग्रंथों के अतिरिक्त पद्माकर ने और भी ग्रंथ बनाए। कानपूर में गंगा तट के किनारे इन्होंने गंगा लहरी बनाया। यह भी एक छोटा किंतु उत्कृष्ट ग्रंथ है। इसकी भाषा भी बड़ी प्रभाव पूर्ण है और कवि की उत्कृष्टता का परिचय देती है। देखिये :—

"ऐरे दगादार मेरे पातक अपार, तोहिं
गंगा की कछार में पछारि छार करिहौं।"

इनके रचे हुए ईश्वरपचीसी और हितोपदेश भाषा और आलीजा प्रकाश नामक ग्रंथों का भी पता मिलता है। (आलीजा प्रकाश इन्होंने ग्वालियर के सींधिया महाराज के यहाँ रह कर और उन्हीं के नाम पर बनाया था।) इन्होंने अलंकार विषय का एक पद्माभरण नामक ग्रंथ बनाया। यह ग्रंथ दोहा और चौपाइयों में लिखा है। इसकी कविता उतनी अच्छी नहीं है। एक रामरसायन नामक ग्रंथ भी इनका रचा हुआ है किंतु कुछ लोगों का संदेह है कि इसके रचयिता पद्माकर जी नहीं हैं। यह ग्रंथ दोहा और चौपाइयों में लिखा है। इसमें श्रीरामचंद्र की कथा वर्णित है। एक प्रकार से यह वाल्मीकीय रामायण का हिन्दी में अनुवाद है किंतु इसकी कविता बहुत अच्छी नहीं है।

पद्माकर की रचनाओं पर भिन्न भिन्न मत प्रकट किये गए हैं। साधारणतः यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि ये उच्च कोटि के कवि थे। इनके तीनों रसों की कविता उत्तम है, वर्णन इनके कहीं कहीं बड़े सच्चे और उत्कृष्ट हैं और इनके छंद बहुत अच्छे बने हैं। भाषा इनकी बड़ी ललित, उत्तम और प्रभावपूर्ण होती थी। शब्दों

के प्रयोग में इन्होंने अनुप्रास और यमक का बहुत अधिक प्रयोग किया है। साधारणतः इनके अनुप्रास अच्छे हैं किंतु कहीं कहीं उनमें कोई रस नहीं है और उनका उच्चारण करना या उनको सुनना जिह्वा तथा कानों को पसन्द नहीं आता। जैसे :—

" कहै पद्माकर फराकत फरसबंद,
फहरि फुहारिन की फरस फबी है फाब। "

तथापि इनकी भाषा अच्छी और कविता मनोहर है।

पद्माकर जी एक मनुष्य की दानशीलता का वर्णन करते हुए कहते हैं :—

" दीन्हें गज बकस महीप रघुनाथ राय,
याहि गज धोखे कहूँ काहू देइ डारैना।
याही डर गिरिजा गजानन को गोइ रही,
गिरितें गरेतें निज गोद तें उतारैना॥ "

जैसा ऊपर कहा जा चुका है पद्माकर जी भक्त भी थे। लिखते हैं :—

" राम सों कहत पद्माकर पुकारि तुम,
मेरे महा पापन को पारहू न पाओगे।
झूठो ही कलंक सुनि सीता ऐसी सती तजी,
हौं तो साँचोहूँ कलंकी ताहि कैसे अपनाओगे॥"

तथा "रैन दिन आठोजाम राम राम राम राम,
सीताराम सीताराम सीताराम कहिये। "

चंद्रशेखर

चंद्रशेखर फ़तेहपूर ज़िला के रहने वाले थे। यह भी पद्माकर जी की भाँति कई राजाओं के दरबार में रहे। इन्होंने भी श्रृंगार और वीररस की अच्छी कविता की है और वीररस के साथ रौद्र और भयानक रसों को भी दिखलाया

है। वीररस का इनका हम्मीर हठ नामक ग्रंथ प्रसिद्ध है। यह एक उत्कृष्ट ग्रंथ है जिसमें अलाउद्दीन के समय के राजा हम्मीर का वर्णन है। इसमें वार्तालाप, मृगया, युद्ध, शोक इत्यादि विविध विषयों का उत्तम वर्णन है। इनकी वीर रस की कविता बड़ी प्रोत्साहक होती थी और यह प्रसंगानुसार शब्दों का बड़ा अच्छा प्रयोग करते थे। इनकी शृंगार रस की कविता भी बहुत अच्छी होती थी। इस रस के नखशिख और रसिक बिनोद आदि ग्रंथ हैं। इन तीन ग्रंथों के अतिरिक्त चंद्रशेखर जी ने विवेक विलास, हरि भक्ति विलास और वृंदावनशतक आदि छः और ग्रंथों की रचना की। ज्ञात होता है कि इन्होंने भक्ति रस पर भी कुछ कविता की। चंद्रशेखर जी के पिता और पुत्र की गणना भी कवियों में हैं। चंद्रशेखर जी की रचना देखिये :—

"रंक जैसे रहत ससंकित सुरेस भयो,
देस देसपति में अतंक अति भारी है।"

ग्वाल

ग्वाल कवि मथुरा के रहने वाले थे। इनके बनाए हुए कई ग्रंथों का पता मिलता है। इन्होंने रसों पर भी कविता लिखी है और षट्ऋतु और नखशिख भी लिखे हैं। जान पड़ता है इन्होंने एक अलंकार ग्रंथ की भी रचना की और काव्य रीति के और ग्रंथ लिखे। इनका यमुनालहरी नामक एक प्रसिद्ध ग्रंथ है। इसमें यमुना जी की प्रशंसा की गई है और षट्ऋतु तथा रसों का वर्णन किया गया है। यों तो ग्वाल ने शृंगार रस पर कविता की है किंतु जान पड़ता है कि कुछ कविता भक्ति रस पर भी इन्होंने बनाई क्योंकि इनके भक्ति भावन इत्यादि ग्रंथों का पता मिलता है। ग्वाल कवि की भाषा अच्छी होती थी। पद्माकर की भाँति यह भी अनुप्रास और यमक का बहुत प्रयोग

करते थे। कोई गोपी श्रीकृष्ण चंद्र से असंतुष्ट होकर उनकी निंदा करती हुई कहती है :—

" त्यों कवि ग्वाल विरंचि विचारि कै
जोरी मिलाय दई अति खासी,
जैसोई नंद को पालकु कान्ह सु
तैसियै कूबरी कंस की दासी "

दूसरे प्रसंग में लिखते हैं।

" ग्वाल कवि कहै नर नाहन के नाह धीर
पूरन प्रतापसिंह तो प्रताप दिन के। "

ग्वाल कवि शरदऋतु के वर्णन में कहते हैं :—

" ग्वाल कवि चित में चकोरन के चैन भये,
पंथिन की दूर भई दूखन दरद की।
जल पर थल पर महल अचल पर,
चाँदी सी चमक रही चाँदनी सरद की॥ "

प्रताप बड़े अच्छे कवि थे। इन्होंने कई ढंग की कविता की है।

प्रताप

मुख्यतः यह काव्य रीति के कवि थे और इनका सब से प्रसिद्ध और उत्तम ग्रंथ काव्य विलास है जिसमें काव्य लक्षण, रस, भाव, दोष, गुण इत्यादि बहुत अच्छे ढंग से कहे गए हैं। इन विषयों के अतिरिक्त प्रताप ने व्यंगों का बहुत अच्छा वर्णन व्यंगार्थ कौमुदी नामक उत्तम ग्रंथ में किया है।

प्रताप कवि श्रीरामचंद्र जी के भक्त थे। इन्होंने उनकी प्रशंसा में बहुत से फुटकर छंद तो बनाए ही ; उनका एक शिखनख भी अच्छा लिखा है। है तो यह ग्रंथ छोटा किंतु उत्तम और मनोहर है। रामचंद्र के नैनों का विशद वर्णन करते हुए लिखते हैं :—

"जनक सुता के मुखचंद्र के चकोर किधौं,
बरने न जात अति उपमा अतूले हैं।
राजै रामलोचन मनोज अति ओज भरे,
सोभा के सरोवर सरोज जुग फूले हैं ॥"

इनकी भाषा बहुत ही अच्छी और चित्ताकर्षक है और शब्दों का प्रयोग बहुत ही मधुर है। इन्होंने मतिराम की सी भाषा लिखी है। इस काल में अनुप्रास की प्रथा ही पड़ गई थी। अतः इन्होंने भी अनुप्रास अधिक लिखा है और अच्छा लिखा है। लिखते हैं :—

"कौन सुभाव री तेरो परो बर पूजत काहे हिए सकुचाति है"

"चंचला चपल चारु चमकत चारों ओर
झूमि झूमि धुरवा धरनि परसत है"

"घन ये नभ मंडल में छहरैं घहरैं कहूँ जाय कहूँ ठहरैं।"

प्रताप कवि प्राकृत दृश्यों का अच्छा वर्णन करते थे।

प्रताप टीकाकार भी थे। इन्होंने रसराज और सतसई की टीकाएँ लिखी हैं। सतसई की टीका रत्नचंद्रिका नाम से प्रसिद्ध है। इनके रचे हुए चार पाँच और ग्रंथों का पता मिलता है।

करन, मून, द्विज

इन उत्कृष्ट कवियों के अतिरिक्त और बहुत से कवियों ने भी इन विषयों पर कविता की है जिनमें करन, मून और द्विज की रचनाएं अच्छी हैं। करन ने अपने रसकल्लोल नामक ग्रंथ में रस भेद और ध्वनि भेद इत्यादि का अच्छा वर्णन किया है। इस ग्रंथ की भाषा मधुर ब्रजभाषा है। मून कवि ने नायिका भेद का एक अच्छा ग्रंथ लिखा है। जान पड़ता है कि इन्होंने श्रीरामचंद्र संबंधी कविता भी की। क्योंकि इनके सीताराम विवाह और रामरावण युद्ध नामक ग्रंथों का पता चलता है। द्विज ने श्री राधा नखशिख नामक ग्रंथ लिखा। यह ग्रंथ भी अच्छा है।

यह भाव पूर्ण ग्रंथ है। द्विज कवि ने अनुप्रासों का अधिक प्रयोग किया है।

अन्य कवि

इन विषयों के अन्य कवियों में जसवंतसिंह, यशोदानंदन, माखन और श्रीधर ने रस, भाव, तथा नायक नायिका भेद कहा है। भोगी लाल ने नायिका और अलंकार विषय भी कहा है। ब्रह्मदत्त ने अलंकार विषय और सम्मन ने पिंगल विषय कहा है। जसवंत जोधपूर के महाराज न हो कर फर्रुखाबाद ज़िला के एक राजा थे। इन्होंने श्रृंगार शिरोमणि नामक ग्रंथ बनाया जिसमें रस भेद और भाव भेद का वर्णन है। यशोदानंदन ने नायिका भेद का एक छोटा सा ग्रंथ बनाया है। इसमें थोड़े से छंद संस्कृत में भी हैं। यह ग्रंथ बरवै छंद में लिखा है। माखन कवि ने वसंत मंजरी नामक ग्रंथ लिखा जिसमें "नायिका राधिका नायक नंदकुमार" के फाग की लीला वर्णित है। इसी वर्णन में इन्होंने नायक भेद और नायिका भेद पूरे ढंग से कह दिया है। श्रीधर ने रस भेद और भाव भेद का विस्तृत वर्णन दिया है। भोगी लाल महाकवि देवदत्त के वंशज थे। इन्होंने नायिका भेद पर कविता करने के अतिरिक्त अलंकार विषय का एक ग्रंथ अलंकार प्रदीप नामक लिखा है। कवि ब्रह्मदत्त ने दीप प्रकाश नामक अलंकार का ग्रंथ लिखा है जिसमें थोड़ा रस और भाव का भी वर्णन है। दीप नारायण इनके आश्रयदाता का नाम था इनकी प्रशंसा करते हुए कवि ने लिखा है :—

"दीप नारायण अवनीप* को अनुज प्यारो,
दीन दुख देखत हरत हरबर है"

इनकी कविता में अनुप्रास का अधिक प्रयोग हुआ है। सम्मन ने पिंगल काव्य भूषण नाम ग्रंथ लिखा। सम्मन ने कुछ दोहे

* काशी नरेश महाराज उदित नारायण सिंह।

व्यवहारिक नीति के भी कहे हैं जैसे रहिमन ने कहे हैं। ये साधारणतः बहुत उपयोगी हैं। कहते हैं :—

" सम्मन चहु सुख देह को तौ छोड़ो ये चारि।
चोरी चुगुली जामिनी और पराई नारि।"

नीति विषय की कविता करने वाले इस समय में बहुत कम हुए। सम्मन के अतिरिक्त रामनाथ का नाम स्मरणीय है। इन्होंने भी नीति अच्छी लिखी है। इन्होंने कुल चार ग्रंथ लिखे जिनमें अधिक में श्रीरामचंद्र जी का वर्णन है।

दीनदयाल, गुरुदत्त

नीति तो इस समय में कम लिखी गई, किंतु अन्योक्ति लिखने वाले दो अच्छे कवि हुए—दीन दयाल गिरि और गुरुदत्त-बाबा। दीन दयाल ने अन्योक्तियों का अच्छा वर्णन अपने अन्योक्ति कलपद्रुम नामक ग्रंथ में किया है। यह ग्रंथ विविध छंदों में लिखा है जिनमें कुंडलियाँ सब से अधिक हैं। दीन दयाल जी का यह ग्रंथ तो साधारणतः अच्छा है ही किंतु इससे भी अच्छा इनका अनुराग बाग है। यह पाँच अध्यायों का ग्रंथ है जिनमें पहले चार में श्रीकृष्ण जी की कथा कही गई है। इसमें इन्होंने कृष्ण जी की लीलाएं और उद्धव संवाद आदि अच्छे ढंग से कहे हैं। इनके रचे हुए छ सात और ग्रंथों का पता मिलता है। इनकी रचना देखिये :—

" चरन तिहारे जदुबंस राजहंस कब,
मेरे मन मानस में मंदमंद डोलि हैं।"
तथा " कुँवर कन्हाई की लुनाई लखि माई मेरो,
चेरो भयोचित और चितेरो भयो मन है "

एक कुंडलिया में लिखते हैं :—

" नाहीं भूलि गुलाब तू, गुनि मधुकर गुंजार।
यह बहार दिन चारि की, बहुरि कटीली डार॥ "

गुरुदत्त ने भी अच्छी अन्योक्तियाँ लिखी हैं। इनका ग्रंथ पक्षी विलास के नाम से प्रसिद्ध है। एक स्वरादेय नामक ग्रंथ भी इन्होंने लिखा है।

कुछ हिन्दी कवियों ने अपने पांडित्य का परिचय चित्र काव्य द्वारा दिया है। चित्रकाव्य ऐसा काव्य होता है जिसके अक्षरों से कमल, चक्र आदि भिन्न भिन्न चित्र बन सकें या जिसमें शब्दों और अर्थ में कोई असाधारण विशेषता हो जैसे ऐसी कवित्त जिसमें किसी मात्रा का प्रयोग किसी शब्द में न हुआ हो। ऐसी कवित को निर्मात्रिक कवित्त कहते हैं या ऐसी कवित्त जिसमें एक ही अक्षर का प्रयोग हुआ हो या ऐसी कवित्त जिसके दो तीन या अधिक अर्थ निकलें इत्यादि इत्यादि। महाकवि केशवदास ने भी इस प्रकार की कुछ कविता की थी। किंतु इस काल में चित्र काव्य का एक पूरा ग्रंथ चित्र चंद्रिका नामक बलवान सिंह कवि ने लिखा। यह बनारस के राजा चेतसिंह के पुत्र थे और इनका दूसरा नाम काशिराज था। यह बड़ा ही पांडित्य पूर्ण ग्रंथ है जो अच्छी भाषा में लिखा है। जैसे :—

चित्रकाव्य

"बर हंस करि सोहै धारण किए हैं हरि,
दायक परम शिव जग मैं बखानिए।"

तथा "कनक लजत तन अमल बसन सज,
बदन कमल बर कचन सघन घन"

पाठकों की सुविधा के लिए इस ग्रंथ की टीका भी ग्रंथ के साथ ही है नहीं तो इसका समझना बहुत ही कठिन था।

कंठस्थानीय का उदाहरण देते हैं :—

"कंक काक खग अगहा गंगा,
गाह गाह अक गाहक अंगा॥"

टीका में शब्दों के अर्थ के साथ विस्तृत अर्थ दिया हुआ है (कंक=ढंक पत्ती, काक=कौआ, अगहा=अघ, गाह=न्हाउ, अक=दुख, गाहक=ग्रहण करने वाला, अंग=शरीर।)

निरोष्ठ का लक्षण दिया है।

"जहाँ उकार पवर्ग को छाँड़ि कीजियत छंद।
उमता नाहीं दीजिये सो निरोष्ठ रस छंद॥"

इसको टीका दी गई है फिर उदाहरण दिया है :—

"कनक लजात तन आनन ते चंद्रकांति,
ललित चखन कंज खंजरीट हीन है।
लालकी ललाई नहीं आदरी अधर रंग,
कीर नासिका ते हारि कानन न लीन है॥"
इत्यादि

फिर इसकी भी टीका दी हुई है।

इन्होंने सात सात अर्थ के कवित्त लिखे हैं।

शृंगाररस की कविता

साधारणतः आचार्यता और पांडित्य के ग्रंथ शृंगार रस ही के हुए हैं। कोई कोई वीर रस के तथा अन्य रस के भी हैं किंतु शृंगार रस के सब से अधिक हैं। तथापि शृंगार रस के और ग्रंथ भी सदा से निकलते आए हैं जिनका आचार्यता से कोई संबंध नहीं या है भी तो बहुत कम। इस समय में भी शृंगार रस के और ढंग के कवि बहुत हुए और उनमें कुछ ने बड़ी अच्छी कविता की। इस प्रसंग में यह स्मरण रखना चाहिए कि हिन्दी में शृंगार रस की कुछ ऐसी भी कविता है जो धार्मिक विषयों से संबंध रखती है। वैसी कविता का वर्णन साधारणतया धर्म विषयक कविता के साथ किया जायगा।

साधारण शृंगार रस के कवियों में रामसहायदास और सागर उच्च कोटि के कवि थे। रामसहाय ने महाकवि बिहारीलाल के

ढंग पर सतसई लिखी है। इसका नाम पहले रामसतसई और पीछे श्रृंगार सतसई रखा गया क्योंकि यद्यपि पहला नाम इन्हीं कवि के नाम पर था तथापि वह दो अर्थ बोधक था। यह सतसई बड़ी ही उत्तम बनी है और यह कवि विहारी का अनुकरण करने में सफल हुआ है। इस ग्रंथ की भाषा अच्छी, अर्थपूर्ण और यमक और अनुप्रास युक्त है। देखिये :—

"खंजन कंज न सरि लहैं बलि अलि को न बखानि,
एनी की अँखियानि ते ये नीकी अँखियानि।"
"बेलि कमान प्रसून सर गहि कमनैत बसंत,
मारि मारि विरहीन के प्रान करैरी अंत।"

सागर कवि की फुटकर कविता बहुधा देखने में आती है। इनकी कविता सरस और उच्चकोटि की होती थी। इनकी भाषा मधुर ब्रजभाषा थी और बहुत प्रभाव पूर्ण होती थी। कहते हैं :—

" जाके लगै सोई जानै विथा परपीर मैं को उपहास करै ना "

अन्य कवियों में भंजन, मुरलीधर, महाराज और कान्ह के नाम स्मरणीय हैं। ये चारों अच्छे कवि थे और चारों की कविता सरस होती थी। किंतु खेद की बात यही है कि इनके ग्रंथ नहीं मिलते। केवल फुटकर छंद मिल जाते हैं। मुरलीधर की भाषा मनोहर और सानुप्रास होती थी। जैसे :—

" दर मैं दरीनहू मैं दीपति दिवारी दरी,
दंत की दमक दुति दामिनि दली गई"

महाराज की भाषा मधुर और कविता सुंदर है। जैसे :—

" यों कर मीड़ति है बनिता सुनि पीतम को परभात पयानो,
आपने जीवन के लखि अंतहि आयु की रेख मिटावति मानो।"

आचार्यता, पांडित्य तथा साधारण श्रृंगार रस की कविता के अतिरिक्त धर्म संबंधी कविता भी इस समय में बहुत हुई। इसमें कुछ कविता तो राम कृष्ण इत्यादि की कथा विषयक है या उनके साधारण वर्णन इत्यादि की है; कुछ में धार्मिक स्थानों का वर्णन है; कुछ में किसी मत का वर्णन या किसी मत प्रवर्तक की जीवनी है और कुछ में साधारण भक्ति है। शेष में अन्य धार्मिक ग्रंथों के अनुवाद हैं या टीकाएँ हैं।

धर्म और भक्ति संबंधी कविता

इस समय रामायण या रामकथा की कविता बहुत हुई। महात्मा ललक दास ने रामकथा का वर्णन सत्योपाख्यान नामक एक बड़े ग्रंथ में किया है। यह महात्मा श्रीरामचंद्र जी के भक्त थे और लखनऊ ज़िला के रहने वाले थे। सत्योपाख्यान में रामचंद्र जी के जन्म से लेकर उनके विवाह तक ही का वर्णन है किन्तु यह वर्णन बहुत ही विस्तृत है। ग्रंथ विविध छंदों में लिखा है, किंतु अधिकतर उसमें दोहे और चौपाइयाँ ही हैं। यह ग्रंथ अच्छा बना है—कथा प्रशंसनीय है और इससे भक्ति टपकती है। कवि जानकी प्रसाद बनारस के रहने वाले थे इन्होंने मुक्ति रामायण नामक एक ग्रंथ लिखा और रामचंद्रिका की एक अच्छी टीका बनाई। इन्होंने एक ग्रंथ रामभक्ति प्रकाशिका नामक लिखा। इनकी कविता अच्छी होती थी। फिर नवलसिंह ने रामायण नाम के बहुत से ग्रंथ लिखे। यह झाँसी के कायस्थ थे और इनकी कविता साधारण होती थी किंतु इन्होंने विविध विषयों पर तीस ग्रंथों की रचना की है। रामायण नाम के इन्होंने आल्हा रामायण, अध्यात्म रामायण रूपक रामायण और नाम रामायण बनाए। फिर रामायण सुमिरनी, राम विवाहखंड, सीता स्वयंबर रामचंद्र विलास का आदि खंड और रामखंड इत्यादि अनेक ग्रंथों की रचना की। इन ग्रंथों के

अतिरिक्त इन्होंने मूल भारत, विज्ञान भास्कर और नारी प्रकरण आदि ग्रंथ बनाए। इनका एक ग्रंथ गद्य में भी है और यह गद्य ब्रजभाषा में है। एक रामायण सीताराम नामक कवि ने भी लिखी। रामकथा का एक अंश खुमान कवि ने लिखा है। ये बुंदेल खंडी थे और इन्होंने लक्ष्मण शतक नामक ग्रंथ लिखा। इसमें श्रीलक्ष्मण और मेघनाद का युद्ध वर्णित है। इनकी कविता अच्छी होती थी और इन्होंने संस्कृत में भी कविता की है। इनकी कविता में अनुप्रास का बहुत प्रयोग हुआ है। लक्ष्मण की प्रशंसा में लिखते हैं :—

"इंद्र गज मंजन को भंजन प्रभंजन तनै
को मनरंजन निरंजन भरन को।
रामगुन ज्ञाता मनबांछित को दाता,
हरिदासन को त्राता धनि भ्राता रघुबर को॥"

इनके ९,१० और ग्रंथों का पता चला है जिनमें कई एक हनुमान जी के नाम पर हैं जैसे हनुमान नखशिख, हनुमान पचीसी इत्यादि।

एक गणेश नाम के कवि हुए हैं जिन्होंने वाल्मीकीय रामायण के कुछ अंश का हिन्दी पद्य में अच्छा अनुवाद किया है। इन्होंने भी एक हनुमत पचीसी लिखी। इनका एक ऋतु वर्णन नामक ग्रंथ भी है। वाल्मीकीय रामायण का पद्य में एक और कवि ने अनुवाद किया। यह चरखारी के एक कायस्थ जवाहिर सिंह थे। धनीराम नामक कवि ठाकुर कवि के पुत्र थे जिन्होंने रामाश्वमेध का अनुवाद किया और रामचंद्रिका और मुक्ति रामायण की टीकाएँ बनाईं। इनकी कविता अच्छी और भाषा मनोहर होती थी। जैसे :—

"परम पिरीत पारबती को विहाय शंभु,
शीश पर धरयो है बचन क्रम मन से।
कहैं धनीराम गंग परम पुनीत तेरे,
छाए तीनों लोक ओक ओक जस धन से॥"

एक शिवलाल नामक कवि ने भी रामायण की टीका बनाई। संत सिंह साधु ने भी रामायण की टीका लिखी और अन्य ग्रंथ भी बनाए।

रामायण के अतिरिक्त महाभारत ग्रंथ भी लिखे गए। लखनसेन ने महाभारत का हिन्दी अनुवाद लिखा जो एक बड़ा ग्रंथ हो गया है। चिरंजीव ने महाभारत भाषा लिखी :—

राम या कृष्ण संबंधी अन्य कवियों में रसिक गोविंद बड़े उच्च कोटि के कवि थे। इन्होंने जुगुलरसमाधुरी नामक एक बड़ा उत्कृष्ट ग्रंथ लिखा जिसमें श्री राधिका जी का और वृंदावन का बहुत उत्तम वर्णन दिया है। देखिये:—

"सरस सुगंध पराग सने मधु मधुप गुँजारत,
मनु सुखमा लखि रीझि परसपर सुजस उचारत।
पुलिन पवित्र विचित्र चित्र चित्रित जहँ अवनी,
रचित कनक मनि खचित लसति अति कोमल कमनी॥"

इनके बनाए हुए श्री रामायण सूचनिका, कलियुग रासो इत्यादि छः सात और ग्रंथों का पता मिलता है। इनके बिलकुल समकालीन मुंशी गणेश प्रसाद नामक एक कवि थे जिन्होंने ब्रजवन यात्रा और राधा कृष्ण दिनचर्या दो ग्रंथों की रचना की। ये दोनों ग्रंथ दोहा चौपाइयों में लिखे हैं और दोनों बड़े बड़े ग्रंथ हैं। ब्रजवनयात्रा में विशेषतः प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन है। राधा कृष्ण दिनचर्या पद्म पुराण के एक अध्याय के आधार पर लिखी

गई है। इनकी कविता उत्कृष्ट होती थी। इन दोनों के अतिरिक्त क्षेम कर्ण और प्रेम सखी ने भी इन विषयों पर अच्छी कविता की है। क्षेम कर्ण ने रामचंद्र और कृष्ण दोनों के संबंध में कविता की है। इन्होंने कई ग्रंथों की रचना की है और इनकी कविता अच्छी और भाषा मनोहर है। जैसे :—

" आई है बरात कोसलेस को विदेह पुर,
बसती के बालक तुरंत उठि धाये हैं।"

प्रेम सखी जी ने श्रीरामचंद्र और सीता का नखशिख लिखा है। इनकी कविता भी अच्छी है। मानदास एक साधारण कवि थे। इन्होंने कृष्ण विलास और रामकूट विस्तार नामक दो ग्रंथ लिखे। पहला ग्रंथ दूसरे से बहुत बड़ा है। उसमें कृष्ण जी की कथा कही गई है। रामकूट विस्तार भक्ति का ग्रंथ है। भक्ति और ज्ञान विषय पर जुगुलानन्यशरण ने अच्छी कविता की। ये अयोध्या के महंत थे जिन्होंने बहुत से ग्रंथों की रचना की। इनके ३७ ग्रंथों का पता मिलता है जिनमें इन्होंने बहुत से विषयों पर कविता की है। इनके कुछ ग्रंथों के नाम ये हैं— सीताराम रस तरंगिणी, भक्ति रहस्य, वैराग्य कांति, सत्संगति, भक्त नामावली, दंपति रहस्य, इश्क़कांति, एकाक्षर कोश। इन्होंने खड़ी बोली भी लिखी है।

इनके कुछ पहले अयोध्या ही के महन्त जनकराज किशोरीशरण ने कविता की थी। इन्होंने १९ ग्रंथों की रचना की। ये हिन्दी और संस्कृत दोनों में कविता करते थे। इनके कुछ ग्रंथों के नाम ये हैं— सीताराम सिद्धांत मुक्तावली, सीताराम रस तरंगिणी, तुलसीदास चरित्र, वेदांतसार, श्रुतिदीपिका, होली विनोद दीपिका, दोहावली, कवितावली इत्यादि।

रसजान कवि ने भक्ति रत्नावली भाषा नामक एक ग्रंथ लिखा है। महाराज जैसिंह रीवाँ के राजा थे जिन्होंने ६८ ग्रंथों की रचना की है। इन्होंने कृष्ण तरंगिणी, हरिचरितामृत, हरिचरित्र चंद्रिका और चतुश्लोकी भागवत के अतिरिक्त और कथा ग्रंथ बनाए जिनमें विष्णु के अवतारों और ऋषभदेव तथा दत्तात्रेय आदि की कथाएं हैं। इनकी कविता अच्छी और मनोहर होती थी। इनके कुछ वर्णनों से तुलसी दास के वर्णन का स्मरण हो जाता है, जैसे शरद ऋतु के आगमन पर कहते हैं:—

" फूली काँस सुदुति धरि धाई,
पतिब्रता कीरति जिमि पाई।

× × ×

सरि सर जल इमि निर्मल छाजत,
जिमि तजि विषय विरागी राजत "

तथा " निर्मल भयौ गगन घन फूटे,
जिमि हिय विषय बासना छूटे।
लसत इंदु उड़गन मिलि ऐसो,
नृप नय निपुन प्रजा जुत जैसो॥" —इत्यादि

नाथूराम एक साधारण कवि थे जिन्होंने चित्रकूट शतक नामक एक ग्रंथ लिखा। इस ग्रंथ में चित्रकूट का रामभक्ति पूर्ण वर्णन है।

" चित्रकूट सब कामदा पाप पुंज हरि लेत।
छिन छिन उज्जल जस बढ़त राम भगति को देत॥"

अन्य कवि

और ढंग के कवियों में गोस्वामी जत्तनलाल और वृन्दावन जी के नाम स्मरणीय हैं। वृन्दावन जी जैनी थे जिन्होंने प्रवचन सार नामक एक उत्कृष्ट जैन धर्म ग्रंथ की रचना की। इनके एक जैन छंदावली नामक ग्रंथ का भी

पता मिलता है। इन्होंने एक शकुन ग्रंथ भी लिखा। इन्होंने एक छंद शतक लिखा जिसमें हर एक छंद में उसका नाम भी दे दिया है। वृन्दावन बिलास नामक इनकी फुटकर रचनाओं का एक संग्रह है। वृन्दावन जी एक अच्छे कवि थे और इनको कविता प्रभाव पूर्ण होती थी। यह साधारणतः ब्रजभाषा में कविता करते थे किंतु कहीं कहीं खड़ी बोली भी लिखे हैं। इन्होंने अनुप्रास और यमक आदि अच्छे लिखे हैं। इस समय कुछ जैन कवियों ने बड़ी कविता की। जयपूर के रहने वाले जयचंद्र जैन और बुधजन थे। पहले ने १२,१३ और दूसरे ने चार ग्रंथ लिखे। जयचंद्र के ग्रंथ सर्वार्थ सिद्धि, मत समुच्चय और पत्र परीक्षा आदि हैं और बुधजन के तत्वार्थ बोध और बुधजन विलास आदि हैं। रूप मुनि जैन ने श्रीपाल चौपाई लिखी।

गोस्वामी जत्तनलाल कविता तो साधारण करते थे किंतु इन्होंने एक बड़ा उपकारी ग्रंथ लिखा है जिसका नाम अनन्यसार है। इसमें अनन्त मत का वर्णन और उस मत के चलाने वाले गोस्वामी श्री हित हरिवंश जी का जीवन चरित्र दिया हुआ है। इस समय में कुछ साधुओं और महंतों ने कविता की ओर विशेष ध्यान दिया। महंतों में जुगुलानन्यशरण इत्यादि का वर्णन हो चुका है। साधुओं में मुक्तानन्द प्रसिद्ध साधु थे। इन्होंने गुजराती और हिन्दी में कविता की है। इनके ग्रंथ विवेक चिंतामणि और सत्संग शिरोमणि हैं। पहलवान दास और अमृतराम ने भी कविता की। अमृतराम राजपूताना भाषा में कविता करते थे। ज्ञानसागर श्वेताम्बर मत के साधु थे। इन्होंने ज्ञानविलास और समयतरंग नामक ग्रंथों की रचना की। दो साधुओं ने टीकाएं रचीं। लाहूनाथ जोगी ने सिद्धांत सार की टीका रची और संतसिंह ने रामचरित मानस की।

काल में अधिक लेखकों ने ध्यान दिया और अनंतराम, रसालगिरि, खेतसिंह और अकबर खाँ इत्यादि ने इस विषय के ग्रंथ रचे।

कोष साहित्य का एक पृथक अंग ही है और इस विषय के ग्रन्थों की आवश्यकता भी बहुत है। हिन्दी में पहले भी अमरकोष का अनुवाद होता चला आता था और इस काल में भी कवि सुबंश शुक्ल ने अमरकोष भाषा लिखी किन्तु कोष के स्वतंत्र ग्रन्थ लिखने की किसी कवि या लेखक ने रुची न प्रकट की। केवल इस काल में जयगोपाल नामक कवि ने एक कोष ग्रंथ लिखा जिसका नाम तुलसी शब्दार्थ प्रकाश है। दुर्भाग्य से वह भी पूरा नहीं मिलता।

कोष

दूसरा भाग

पद्माकर के बाद से हरिश्चन्द्र के पहले तक

पद्माकर भट्ट की मृत्यु सन् १८३३ ई० में हुई। उनके अंतिम समय के समकालीन चंद्रशेखर, राम सहाय, प्रताप, ग्वाल आदि बहुत अच्छे अच्छे कवि थे, किन्तु इनके बाद ऐसे उत्कृष्ट कवियों की बड़ी कमी पड़ गई। इस समय के साहित्य में कई विशेषताएं हैं। पहली बात तो यह है कि धार्मिक ग्रंथ बहुत लिखे गए और बहुत से साधुओं और महन्तों ने कविता की। इन ग्रन्थों में मुख्यतः रामायण और महाभारत हैं। हर्ष की बात यह भी है कि, कुछ राजाओं ने बड़ी भक्ति पूर्ण कविता की। इस समय श्रृंगार रस की ओर कवियों का अधिक झुकाव न रहा। काव्य रीति के कुछ ग्रंथ निकले जिनमें कुछ अनुवाद या टीका थे। दूसरी बात यह है. कि इस समय में टीकाएँ और अनुवाद बहुत निकले। तीसरी

बात नव युग का आगमन है। इसके प्रभाव अब अधिक स्पष्ट रूप से दिखलाई पड़ने लगे। सन् १८३७ ई० में दिल्ली में एक छापाख़ाना खोला गया। तब से पुस्तकें शीघ्र छपने लगीं। उधर सरकार ने शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया और हिन्दी तथा उर्दू में पाठ्य पुस्तकें तैयार कराई गईं अर्थात् लल्लू जी लाल और सदल मिश्र का आरम्भ किया हुआ कार्य अब बढ़ने लगा। ऐसे लेखकों में राजा शिवप्रसाद का नाम सबसे प्रसिद्ध है। फिर सन् १८५४ ई० में प्रारंभिक शिक्षा प्रणाली की जड़ पड़ी।

एक और विशेषता ध्यान योग्य यह है कि देश की शांति, शिक्षा के फैलाव और राजनैतिक ऐक्य के कारण हिन्दी का प्रचार बढ़ा अर्थात् भिन्न भिन्न प्रांत वालों ने भी हिन्दी में रचना की। मिथिला के दो नाटककार और महाराष्ट्र के एक कवि और गुजरात के एक कवि ने हिन्दी भाषा में कविता बनाई। फिर कुछ स्त्रियों ने भी भक्तिमयी अच्छी कविता की। एक हिन्दी का ग्रंथ उर्दू अक्षरों में लिखा गया और फिर दो एक मुसलमानों ने भी हिन्दी में कविता की। कविता के विषयों में भी वृद्धि हुई। ये सब बातें इस काल के पहले उपविभाग में नहीं पाई जातीं।

इस विभाग में पुरानी और नई रीतियाँ प्रत्यक्ष अलग अलग देख पड़ती हैं। काव्योत्कर्ष में निःसंदेह कमी हुई और पुराने ढंग की कविता पुरानी उत्कृष्टता को न पहुँच सकी। उधर नए ढंग की रचना मुख्यतः गद्य में होती थी। पद्य भी लिखा गया किन्तु नए ढंग की कविता भी उत्कृष्ट न थी। केवल इतना ही कह सकते हैं कि वर्तमान काल की झलक साफ़ दिखलाई देने लगी। भाषा भी नए ढंग की बनने लगी और साहित्य भी नए ढंग का निकलने लगा। नाटक नाम के ग्रंथ पहले भी निकले थे किन्तु इस

समय वास्तविक नाटक की रचना हुई । समाचारपत्रों का लिखना भी इसी समय में आरम्भ हुआ। बंगाली भाषा में तो सन् १८१८ ई० ही में एक समाचार पत्र का निकलना शुरू हुआ किन्तु हिन्दी में सबसे पहला पत्र सन् १८४५ ई० में निकला। इसका नाम बनारस अख़बार था जो राजा शिवप्रसाद की सहायता से बनारस ही से निकला। थोड़े दिनों बाद फिर कई पत्र निकलने लगे। जैसे जैसे छापे ख़ाने बढ़े* और शिक्षा फैली वैसे वैसे पत्र और पत्रिकाएं भी बढ़ती गईं।

इस काल में धर्म और भक्ति संबंधी कविता अन्य विषयों की अपेक्षा बहुत अधिक हुई। ऐसे कवियों में कुछ महाराजा, कुछ महंत, कुछ स्त्रियां और कुछ अन्य लोग थे। इस प्रकार की कविता भी कई ढंग की निकली। एक तो रामायण ग्रंथ बहुत से निकले यहाँ तक कि साधारण रामायण के अतिरिक्त आदि रामायण, अद्भुत रामायण और विचित्र रामायण ग्रंथ भी निकले। फिर महाभारत भाषा नाम के बहुत से ग्रंथ निकले। कुछ कविता कृष्ण भक्ति संबंधी बनी। शेष में भक्ति किसी और ढंग से विद्यमान है, जैसे कहीं भक्तों के कथन दिये हैं; कहीं उनकी रचनाओं का संग्रह किया है कहीं और भजन इत्यादि लिखे हैं।

---

* जैसा ऊपर वर्णन किया जा चुका है पहला छापाख़ाना भारतवर्ष में १९ वीं शताब्दी के आरम्भ में कलकत्ता में खोला गया। निःसंदेह उसके पहले यहाँ पर कोई छापाख़ाना न था किंतु एक हज़ार वर्ष या इससे भी अधिक पहले भारत वर्ष में छापाख़ाना का होना प्रमाणसिद्ध है। (देखिए मिश्रबंधुविनोद पृ० ११८४–८९) कालचक्र ने वह सब सामान पीस डाला और अब गत शताब्दी में वैसाही सामान योरप से मंगाना पड़ा।

इस समय के सब से उत्कृष्ट भक्त कवि ललित किशोरी जी थे और वास्तव में यह बड़े उच्चकोटि के कवि थे। यह श्रीकृष्ण जी के भक्त थे और अपनी जन्मभूमि लखनऊ छोड़कर वृन्दावन में रहते थे। इन्होंने अनेक बड़े ग्रंथों की रचना की जिनमें मुख्यतः श्रीकृष्ण जी ही का वर्णन है। इन्होंने कविता तो अधिक अवश्य की है किन्तु बहुत कम विषयों पर ध्यान दिया है, क्योंकि कृष्णकथा का केवल एक छोटा सा अंश लिया है। लेकिन जो वर्णन इन्होंने दिये हैं वे बहुत विस्तार पूर्वक हैं। इन्होंने विविध छंदों के अतिरिक्त ग़ज़लें भी लिखी हैं। यह हिन्दी और संस्कृत के अतिरिक्त फ़ारसी आदि भाषाओं से भी सुपरिचित थे। इन्होंने खड़ी बोली की भी कविता की है और कहीं कहीं गद्य भी लिखा है।

ललित किशोरी

ललित किशोरी जी की कविता शृंगारपूर्ण है किंतु स्मरण रहे कि यह कविता ईश्वर भक्ति में लीन और संसार से विरक्त कवि की है। शृंगार का पूरा वर्णन करते हुए भी यह लिख सकते थे कि

"लाभ कहा कंचन तन पाए।
बचननि मृदुल कमलदल लोचन दुख मोचन हरि हरखि न ध्याए॥
तन मन धन अरपन नहिं कीनो प्रान प्रानपति गुननि न गाए।
यौवन धन कलधौत धाम सब मिथ्या सिगरी आयु गँवाए॥
गुरजन गरब बिमुख रंग राते डोलत सुख संपति बिसराए।
ललित किशोरी मिटै ताप नहिं बिन दृढ़ चिंतामणि उर लाए॥"

ललित किशोरी जी के जो ग्रंथ पूरे न हो सके उनको इनके भाई ने पूरा किया जिनका नाम कविता में ललित माधुरी है किंतु जिनका वास्तविक नाम साह फुंदनलाल था जैसे ललित किशोरी जी का वास्तविक नाम साह कुंदनलाल था।

महाराजा विश्वनाथसिंह और रघुराजसिंह

रामायण लिखने वालों में विश्वनाथसिंह, जीवनलाल और माधव अच्छे कवि थे। विश्वनाथ सिंह रीवाँ के महाराज थे। इनके पिता महाराज जयसिंह भी अच्छे कवि थे और इनके पुत्र महाराज रघुराजसिंह भी प्रसिद्ध भक्त कवि हुए। महाराज विश्वनाथ सिंह ने ३०,३१ ग्रंथों की रचना की। इनमें कुछ तो रामायण हैं या रामचंद्र से संबन्ध रखते हैं जैसे रामायण, आनंद रामायण, रामचंद्र की सवारी, आनंद रघुनंदन नाटक इत्यादि; कुछ भजन, साखी, शब्द इत्यादि हैं; कुछ टीकाएँ हैं जैसे विनय पत्रिका की टीका और कबीर के बीजक की टीका; शेष फुटकर विषयों पर हैं जैसे धर्नुविद्या उत्तम नीति चंद्रिका, बसंत, परम धर्म निर्णय इत्यादि। महाराज विश्वनाथ सिंह के पुत्र महाराज रघुराजसिंह थे जो उच्चकोटि के कवि थे और जिन्होंने भी बहुत से ग्रंथ लिखे हैं। यह श्रीरामचन्द्र के भक्त थे और यद्यपि इन्होंने रामायण नामक कोई ग्रंथ नहीं लिखा तथापि राम अष्टयाम, रामस्वयम्बर और रघुपति शतक आदि ग्रंथों की रचना की है। इनके अतिरिक्त इन्होंने विनय पत्रिका, भक्ति विलास, भागवत भाषा, भक्तमाल आदि ग्रंथ बनाए। इनका एक प्रसिद्ध ग्रंथ रुक्मिणी परिणय है जिसमें नखशिख और युद्ध इत्यादि के अच्छे वर्णन हैं।

ये दोनों पिता पुत्र हिन्दी का बड़ा उपकार कर गए। एक तो ये लोग स्वयं अच्छे कवि थे, दूसरे इन्होंने बहुत से ग्रंथों की रचना की और तीसरे अनेक कवियों को आश्रय दिया। ये दोनों महाशय भारी पंडित थे और संस्कृत में भी कविता करते थे। महाराज विश्वनाथ सिंह राधावल्लभी संप्रदाय के एक शिष्य थे और इन्होंने संस्कृत में राधावल्लभ भाष्य नामक ग्रंथ भी लिखा। महाराज रघुराज सिंह रामभक्त थे और नित्य प्रति विष्णु नाम का जाप किया करते

थे। इनके ग्रंथों में भक्ति का अच्छा वर्णन है। इनको शिकार का बड़ा शौक था और उसका वर्णन भी इनकी कविता में अच्छा है। इनके छंद अच्छे और सानुप्रास बनते थे जिनमें काव्य चातुरी अर्थात् कौशल भरा रहता था। लिखते हैं :—

"हिय हारन में हर हारन में हिमि हारन में रघुराज लसै,
ब्रज बारन बारन बार नबारन बारन बार बसंत बसै।"

"दीनन पालिबो शत्रुन शालिबो घालिबो भक्तन के दुख को है।
दीठि दया की प्रजा पै पसारिबो धर्म सुधारिबो चित्त बसो है॥"

फिर अन्य बड़े भक्तों की भांति कहते हैं :—

"मूरुख मानत यही बड़ाई।
राजा भयो विभौ धन आँधर नहिं सन्तन शिर नाई॥"

इत्यादि

जीवन लाल,
माधव

जीवन लाल और माधव भी अच्छे कवि थे। माधव रीवाँ के रहने वाले थे। इन्होंने महाराज विश्वनाथ सिंह की आज्ञा से एक रामायण बनाई जो आदि रामायण के नाम से प्रसिद्ध है। यह ग्रंथ बड़ा और अच्छा है और पद्मपुराण के आधार पर बनाया गया है। जीवन लाल बूँदी के रहने वाले थे और इनको ब्रिटिश सरकार ने जी० सी० एस० आई० का ख़िताब भी दिया था। इन्होंने एक रामायण बनाई और एक भागवत भाषा लिखी। इनके अतिरिक्त चार पाँच और ग्रंथ बनाए। जीवनलाल संस्कृत और फ़ारसी भी अच्छी जानते थे और अपनी कविता में इन भाषाओं के शब्द भी प्रयोग करते थे। देखिये :—

"मित्र सुख संगकारी अब माहताब की लौं,
सत्रु मुख रंगहारी ताब आफ़ताब की।"

किशोरदास और रघुनाथदास ने भी रामायण नामक ग्रंथों की रचना की। किशोरदास निंबार्क संप्रदाय के और रघुनाथदास रामानुज संप्रदाय के थे। किशोरदास ने अध्यात्म रामायण नामक ग्रंथ लिखा। इन्होंने भक्तों के कथन का वर्णन अपने एक निजमनसिद्धांत नामक ग्रंथ में दिया है। रघुनाथदास एक महंत थे जो अयोध्या में रहते थे। अयोध्या के महंतों ने हिन्दी भाषा तथा साहित्य का बड़ा उपकार किया है। रघुनाथदास कोई उत्कृष्ट कवि तो नहीं थे परंतु इन्होंने एक बड़ा उपकारी ग्रंथ बनाया है जिसका नाम विश्रामसागर है। इसमें तीन खंड हैं जिनमें तीसरा रामायण है और दूसरा कृष्णायन है। इसके प्रथम खंड में पौराणिक कथाओं तथा षट्शास्त्र इत्यादि का वर्णन है। यह ग्रंथ रोचक बना है और इसमें महंत जी ने तुलसीदास का अनुकरण किया है—एक तो यह ग्रंथ मुख्यतः दोहा और चौपाइयों में लिखा है, दूसरे भाषा भी तुलसीदास ही की सी है और तीसरे बंदना इत्यादि भी उन्हीं की सी हैं। श्रीरामचंद्र की कथा के संबंध में कहते हैं:—

किशोरदास,
रघुनाथदास

"राम कथा शुभ चिंतामनि सी, दायक सकल पदारथ जनसी।
अभिमत फलप्रद देवधेनु सी, स्वच्छ करन गुरुचरन रेनु सी॥"

इत्यादि

अयोध्या में इन्हीं के नाम के एक और महंत थे जिन्होंने हरिनामसुमिरनी नामक ग्रंथ बनाया। यह भी राम के भक्त थे। राम नाम की महिमा का वर्णन करते हुए कहते हैं:—

"मारा मारा कहे ते मुनीस ब्रह्म लीन भयो,
राम राम कहे ते न जानौ कौन पद है।

× × ×

ऐसहु समुझि सीताराम नाम जो न भजै,
जन रघुनाथ जानौ तासों फेरि हद है ॥

यह बड़े भारी भक्त थे और इनका तपबल बहुत अधिक था।

अन्य रामायण लेखक

मालूम होता है कि इस समय में रामायण लिखने की एक प्रथा सी पड़ गई थी। नवलसिंह प्रधान एक उत्कृष्ट कवि थे जिन्होंने अद्भुत रामायण* लिखी; बलदेव ने विचित्र रामायण लिखी और रामगुलाम ने प्रबंध रामायण लिखी। बनादास ने बहुत से ग्रंथ लिखे जिनमें एक उभय प्रबोधक रामायण है, एक रामछटा है और कई ग्रंथ ब्रह्म ज्ञान विषयक हैं। फिर गोमतीदास और खुमानसिंह ने रामायणें लिखीं। यहाँ तक कि अजितदास जैन ने एक जैन रामायण भी लिखी। अजितदास प्रसिद्ध जैन कवि वृन्दावन जी के पुत्र थे। वृन्दावन जी एक जैन रामायण रामचरितमानस की भाँति बनाना चाहते थे किन्तु वह न बना सके तब अपने पुत्र को इसके बनाने को आज्ञा देकर स्वर्ग सिधारे। दुर्भाग्य वश उनके पुत्र भी यह ग्रंथ पूरा न कर सके। एक ओर तो इस तरह से रामायणें लिखी जाती थीं दूसरी ओर संतोषसिंह ने कोई अलग रामायण न लिखी तो वाल्मीकीय रामायण भाषा ही लिख डाली और छत्रधारी ने भी ऐसा ही किया।

---

*एक अद्भुत रामायण गोकुल कायस्थ ने महाराज दिग्विजयसिंह की आज्ञा से सं० १९३६ वि० में लिखी थी। इसमें लिखते हैं :—

" अद्भुत महिमा जगत में पारावार समान।
अद्भुत रामायन कथा परम पुरान पुरान ॥
वाल्मीकि मुनि प्रगट करि पूँछे भारद्वाज।
बरनत हौं गुर सुमिरि मुनि लहि सासन महराज ॥"

रामायण ही तक नहीं महाभारत भाषा लिखने की भी कुछ प्रथा सी दीख पड़ती है। ऊपर वर्णन किए हुए कवियों के अतिरिक्त उमादास, निहाल, दूली चंद और रामनाथ ने महाभारत भाषा नामक ग्रंथों की रचना की। इनमें उमादास, निहाल और रामनाथ पटियाला दरबार के आश्रित थे और इन तीनों ने महाभारत भाषा के अतिरिक्त और ग्रंथों की भी रचना की। निहाल कवि ने सुनीति पंथ प्रकाश और सुनीति रत्नाकर नामक ग्रंथ भी लिखे हैं। इन्होंने लिखा है कि राजा के लिए नीति बिलकुल आवश्यक है। एक स्थान पर कहते हैं :—

अन्य महाभारत लेखक

" बुधि बिनु नर जैसे पंछी बिनु पर जैसे
सेवा बिनु डर जैसे नीति बिनु भूप है "

जैसा उपर कहा जा चुका है इस समय में भक्ति तथा धर्म संबंधी बहुत कविता हुई। मालूम होता है कि इस ढंग की कविता ने अपनी अंतिम ज्वाला दिखलाई क्योंकि इस समय के बाद फिर ऐसी कविता का प्रायः अभाव ही हो गया। इस काल में दो स्त्रियों ने बड़ी अच्छी कविता की एक प्रताप कुँवरि बाई और दूसरी बिरंजी कुँवरि। प्रताप कुँवरि जी महाराजा मानसिंह राजा मारवाड़ की धर्मपत्नी थीं। दुर्भाग्य से २६ ही वर्ष की अवस्था में यह विधवा हो गई। इन्होंने धार्मिक आर्य विधवा की भाँति अपना जीवन व्यतीत किया। दान इत्यादि देने के अतिरिक्त इन्होंने बहुत से मंदिर बनवाए और पतिदेव के इस लोक से चले जाने पर ईश्वर की ओर मन लगाया। यह श्रीरामचंद्र की भक्त थीं और उन पर इन्होंने बहुत से ग्रंथ बनाए जैसे रामचंद्रनाम महिमा, रामगुणसागर, रामप्रेमसुखसागर

प्रताप कुंवरि बाई, बिरंजी कुंवरि बाई

इत्यादि। इनके अतिरिक्त ज्ञानप्रकाश आदि और कई ग्रंथ बनाए। इनकी कविता अच्छी, मनोहर और शिक्षाप्रद है। कहती हैं :—

" धरि ध्यान रटौ रघुबीर सदा धनुधारि को ध्यानु हिए धरुरे।
पर पीर में जाय कै बेगि परौ करते सुभ सुकृत को करुरे॥
तरु भवसागर को भजि कै तजि कै अघ औगुन ते डरुरे।
परताप कुँवारि कहै पद पंकज पाव घरी जनि बीसरुरे॥"

विरंजी कुंवरि इनको समकालीन थीं जिन्होंने सती विलास नामक एक अच्छा ग्रंथ बनाया। यह ब्रजभाषा और अवधी अधिक लिखती थीं। इनका ग्रंथ अधिकतर दोहा और चौपाइयों में बना है और इसमें कहीं कहीं सवैया आदि भी हैं। इनकी शिक्षा है कि पति चाहे कैसा भी हो स्त्री को उसी की सेवा करनी चाहिए, इससे उसको परम पद प्राप्त होगा। इसलिए कहती है :—

" याते बिरंजि बिचारि कहै पति के पद की तिय किंकरि होजू"

अन्य भक्त कवि

भक्ति विषयों के कवियों में देव कवि काष्ठजिह्वा का नाम स्मरणीय है। यह बनारस के एक भारी पंडित थे जिन्होंने काठ की खोल में अपनी जीभ बंद कर दी थी। इसी लिए इन्हें काष्ठजिह्वा कहते हैं। इन्हों ने रामायण परिचर्या, राम लगन, बैराग्य प्रदीप आदि ग्रंथ लिखे हैं। इनकी कविता भक्तिमय और अच्छी होती थी। इसी समय में उमापति कवि ने भी भक्ति रस की अच्छी कविता की। यह भी भारी पंडित और महात्मा थे और संस्कृत में भी अच्छी कविता करते थे। रत्नहरि, जानकी चरण और जानकी प्रसाद साधारण कवि थे। रत्नहरि ने सत्योपाख्यान नामक ग्रंथ विशेषतया दोहा चौपाइयों में लिखा है। यह ग्रंथ राम रहस्य का भाषानुवाद है। इसके अतिरिक्त इनके और ग्रंथ भी हैं। जानकी चरण ने भी राम संबंधी कविता की है जिसमें कुछ रसात्मक भी है। इनका एक ग्रंथ श्रीरामरत्नमंजरी

है। इनका कविता का नाम प्रियासखी था। जानकी प्रसाद ने कम से कम तीन प्रकार की कविता लिखी है—एक तो राम संबंधी जैसे राम नवरत्न और राम निवास इत्यादि; दूसरे इन्होंने भारतवर्ष का एक इतिहास लिखा जो उर्दू में है और तीसरे इन्होंने नीति कही। नीति का इन्होंने नीति विलास नामक ग्रंथ लिखा है।

कृष्णानंद व्यास

अंत में कृष्णानंद व्यास देव का नाम सदा के लिए स्मरणीय है। इन्होंने राग सागरोद्भव रागकल्पद्रुम नामक एक बड़ा ग्रंथ बनाया। यों तो इसकी कविता भी अच्छी है किंतु इसका विषय उससे भी अच्छा है। यह एक प्रकार से साहित्य का इतिहास है। हिन्दी भाषा में साहित्य के इतिहास बहुत कम हैं। अतः किसी भी उत्तम लेखक का प्रयत्न प्रशंसनीय है। कृष्णानंद ने २०० से अधिक कवियों और भक्तों की रचनाओं का उत्तम संग्रह तैयार किया है। इनकी कविता भी अच्छी है।

रस, अलंकार, इत्यादि विषय के कवि

धर्म और भक्ति के बाद रस, अलंकार, नायिका भेद, इत्यादि विषयों की कविता है अर्थात् आचार्यता और पांडित्य की। इन विषयों के कवियों में लेखराज, नवीन, गणेश प्रसाद और पजनेस ने उच्चकोटि की कविता की है। लेखराज ने चार ग्रंथ बनाए और चारों पांडित्य सूचक। एक ग्रंथ रसरत्नाकर है जिसमें नायिका भेद कहा है। दूसरा गंगा भूषण और तीसरा लघुभूषण है। इनमें अलंकारों का वर्णन है। गंगा भूषण वास्तव में गंगा जी की स्तुति है। इसी स्तुति में अलंकार भी आगए हैं। लघुभूषण में अलंकारों के लक्षण उदाहरण सहित दिए हुए हैं। यह ग्रंथ बरवै छंदों में लिखा हुआ में। चौथा ग्रंथ राधानखशिख है। लेखराज जी के दो पुत्रों ने भी कविता की। नवीन ने भी चार ग्रंथ लिखे हैं। यह महाराज देवेन्द्र सिंह राजा नाभा के यहाँ थे और इन्होंने उनकी प्रशंसा भी की है।

नवीन ने रसों का बहुत अच्छा वर्णन किया है। इनका प्रशंसा करना देखिये :—

" सूरज के रथ के से पथ के चलैया चारु,
न थके थिराहिं थान चौकरी भरत हैं।
फाँदत अलंगैं जब बांधत छलंगैं,
जिन जीनन ते जाहिर जवाहिर झरत हैं॥"

भाषा कैसी मधुर और सानुप्रास है।

गणेश प्रसाद फरुखाबाद के रहने वाले थे जिन्होंने नखशिख, ऋतु वर्णन और फ़िसाने चमन आदि पाँच ग्रंथ बनाए। इन्होंने खड़ी बोली का आदर किया है। जैसे "कहीं बरसा कहीं तरसाया"। इनकी कविता प्रभावपूर्ण होती थी। पजनेस पन्ना के रहने वाले थे जिन्होंने नखशिख लिखा था। इनके फुटकर छंद मिलते हैं। कविता इनकी अच्छी है किंतु भाषा किसी किसी स्थान में अरुचिकर हो गई है और कहीं कहीं इसमें अश्लीलता भी आगई है। यह सानुप्रास कविता करते थे और उपमाएँ अच्छी लिखते थे। इनकी भाषा में फ़ारसी के शब्द भी आए हैं जैसे :—

" फैली दीप दीप दीप दीपति दिपति जाकी,
दीप मालिका की रही दीपति दबक सी।
परत न ताब लखि मुख महताब जब,
निकसी सिताब आफताब के भभक सी॥"

इनके अतिरिक्त और बहुत से कवियों ने इन विषयों पर कविता की। सेवक और परमबंदीजन अच्छे कवि थे। बंदीजन ने नखशिख लिखा। सेवक एक कविवंश के वंशज थे अर्थात् इनके पिता धनीराम कवि थे, इनके पितामह ठाकुर कवि थे और इनके प्रपितामह ऋषिनाथ कवि थे। इन्होंने वाग्विलास नामक एक बड़ा ग्रंथ लिखा जिसमें नायिका भेद और नायक भेद बड़े विस्तार

के साथ कहा गया है। इसी में भाव अनुभाव और षट्ऋतु का भी वर्णन है। षट्ऋतु का वर्णन इन्होंने अच्छा लिखा है। इनका एक नखशिख भी है और दो एक और ग्रंथ हैं। सेवक ब्रजभाषा में कविता करते थे और इनकी भाषा मनोहर होती थी, जैसे :—

" हाय हमारी जरैं अँखियाँ विष बान ह्वै मोहन के उर लागीं "

कमलेश और लक्ष्मी प्रसाद साधारण कवि थे। इन लोगों ने भी नायिका भेद के ग्रंथ लिखे। रघुबर दयाल भी साधारण कवि थे। इन्होंने छंद रत्नमाला नामक एक ग्रंथ लिखा। इस ग्रंथ में छंदों के नाम और लक्षण उदाहरण के साथ दिये हुए हैं। कवि जी पंडित भी थे और संस्कृत मिली भाषा लिखते थे।

श्रृङ्गाररस के कवि

श्रृंगाररस की कविता करने वालों में महाराजा मानसिंह उच्चकोटि के कवि थे जो अयोध्या के महाराज थे। इन्होंने श्रृंगारबत्तीसी और श्रृंगारलतिका नामक दो ग्रंथ बनाए। इनकी कविता अच्छी और मनोहर होती थी और इन्होंने ऋतुओं का बहुत अच्छा वर्णन किया है। यह सानुप्रास और मधुर ब्रजभाषा में कविता करते थे। बंसत ऋतु के संबंध में कहते हैं :—

" सोंधे समीरन को सरदार मलिंदन को मनसा फलदायक "

फिर लिखते हैं :—

" घहरि घहरि घन सघन चहूँधा घेरि
छहरि छहरि विष बूँद बरसावै ना।
× × ×
हौं तो बिन प्रान प्रान चहत तज्योई अब
कत नभ चन्द तू अकास चढ़ि धावै ना ॥"

मान सिंह का कविता का नाम द्विजदेव था। कासिम शाह भी इस समय के अच्छे कवि थे। इन्होंने हंस जवाहिर नामक एक ग्रंथ

लिखा जिसमें दोहा और चौपाइयों में एक बड़ी प्रेमकहानी लिखी हुई है। याद रखना चाहिए कि हिन्दी साहित्य में अच्छी अच्छी और बड़ी बड़ी प्रेमकहानियाँ बहुत कम हैं।

अन्य अच्छे कवियों में जिनके छंद फुटकर रूप में मिलते हैं शंकर, बलदेव, ठाकुर प्रसाद और अनीस के नाम स्मरणीय हैं। इनमें शंकर तो कविवंश ही के थे अर्थात् सेवक के भाई और धनीराम के पुत्र और ठाकुर के पोते थे। इनके आश्रयदाता बनारस के बाबू रामप्रसन्न सिंह थे जिनकी इन्होंने बड़ी प्रशंसा लिखी है। इनकी कविता सरस और भाषा अनुप्रासयुक्त अच्छी होती थी, जैसे :—

" मंजु मलयाचल के पौन के प्रसंगन ते
लाल लाल पल्लव लतान लहकै लगै ॥"

बलदेव और ठाकुर प्रसाद दोनों अयोध्या के महाराजा मान सिंह के यहां थे जिनमें बलदेव तो उनके कविता गुरु ही थे। दोनों की कविता उत्तम और सरस होती थी। ठाकुर प्रसाद कविता में अपना नाम पंडित प्रवीन रखते थे। इन्होंने मानसिंह की बड़ी प्रशंसा की है। इनकी भाषा में फ़ारसी के भी शब्द आए हैं। इन सब का उदाहरण निम्न लिखित पदों में है। अन्य अनुपम वस्तुओं का नाम लेते हुए कह रहे हैं :—

" पंडित प्रवीन खानखाना लौं नवाब,
नवसेरवाँ लौं आदिल दराज दिल दारा लौं।
विक्रम समान मानसिंह सम सांची कहौं,
प्राची दिसि भूप है न पारावार धारा लौं ॥"

अनीस की कविता भी सरस होती थी और भाषा मधुर। इनका एक छंद बहुत कम पढ़े लिखे गाँव वाले भी गाया करते हैं वह यह है :—

"सुनिए बिटप प्रभु सुमन तिहारे संग,
राखि हौ हमैं तौ सोभा रावरी बढ़ाय हैं।
तजि हौ हरखि कै तौ बिलग न मानैं कछू,
जहाँ जहाँ जैहैं तहाँ दूनो जस छाय हैं॥
सुरन चढ़ैंगे नर सिरन चढ़ैंगे बर,
सुकवि अनीस हाट बाट मैं बिकाय हैं।
देस मैं रहैंगे परदेस मैं रहैंगे,
काहू बेस मैं रहैंगे तऊ रावरे कहाय हैं॥"

इन चारों के अतिरिक्त रसरंग, ब्रजनाथ, परमानंद और पूरनमल के भी फुटकर छंद मिलते हैं। इन चारों की कविता साधारण होती थी। रसरंग की कविता में चातुरी पाई जाती है ब्रह्मा द्वारा राधिका के मुख बनाए जाने के बाद कहते हैं :—

"बदन सँवाँरि बिधि धोयो हाथ जाम्यो रंग
तासों भयो चंद कर झारे भये तारे हैं॥"

पूरन लिखते हैं

"बाटिका बिहार बाग बीथिन बिनोद बाल
बिपिन बिलोकिए बसंत की बहार है॥"

अनुप्रास का भी खूब सिक्का जम गया था।

विविध विषय के लेखक गुलाबसिंह

इस काल के विविध विषयों पर लेखनी चलाने वालों में गुलाबसिंह, गिरिधर दास और राजा शिवप्रसाद के नाम बड़े प्रसिद्ध हैं। इन तीनों ने अपने अपने ढंग की प्रशंसनीय कविता की और बहुत से ग्रंथ बनाए। गुलाबसिंह बूँदी के राजकवि थे और कविराय कहलाते थे। यह संस्कृत, प्राकृत और डिंगल के बड़े पंडित थे और इनकी कविता भी उच्च कोटि की होती थी। इनके कुछ ग्रंथों के नाम ये हैं—

रामलीला, कृष्णलीला, विभीषणलीला, आदित्य हृदय, चितातंत्र, मूर्ख शतक, काव्य नियम, नीति सिंधु, व्यंगार्थ चंद्रिका, वनिता भूषण और गुलाब कोष।

गिरिधर दास

गिरधिरदास काशी के रईस थे। इनका वास्तवकि नाम गोपालचंद्र था। इनका उपनाम गिरिधर दास के अतिरिक्त गिरिधारी और गिरिधारन भी था। इन्होंने चालीस ग्रंथों की रचना की है और इनकी कविता भी अच्छी है। इनके कुछ ग्रंथों के नाम ये हैं—जरासंधवध, नहुष नाटक, दशावतार. षट् ऋतु, नीति, इत्यादि। इनकी कविता सरस होती थी। इन्होंने यमक और श्लेष का बहुत ही अधिक और अच्छा प्रयोग किया है। देखिये :—

" आनन की उपमा जो आनन को चाहे तऊ,
आनन मिलेगी चतुरानन विचारे को ॥"

इनकी रचना देखिये—

" नेह न गोये। रहै सखि लाज सों,
कैसे रहे जल जाल के बांधे ॥"

सज्जन की परिभाषा यों देते हैं।

" मन सों जग को भल चहै, हिय छल रहै न नेक।
सो सज्जन संसार में, जाके बिमल विवेक ॥"

इनका जरासंधबध सब से प्रसिद्ध है जो एक महाकाव्य है। इसका एक छन्द देखिये :—

" भयो भूरि भार धरा चलत जराकुमार,
करत चिकार दिग्गज सहित सोग।
गिरिधरदास भूमि मंडल मरमरात,
अति घबरात से परात हैं दिसन लोग ॥"

किन्तु इनके नहुष नाटक की महिमा बड़ी है क्योंकि यह हिन्दी में प्रथम वास्तविक नाटक है। यों तो नाटक नाम के कई ग्रंथ लिखे जा चुके थे जिनमें कुछ नाटक थे ही नहीं और कुछ नाटक के ढंग पर लिखे गए किंतु उनमें वह बातें नहीं पाई जातीं जो एक सच्चे नाटक में होनी चाहिए, कुछ नाटक के ढंग पर नेवाज ने शकुन्तला, देव ने देवमाया प्रपंच, ब्रजवासीदास ने प्रबोध चंद्रोदय लिखा था और दो एक और ग्रंथ निकले थे, किन्तु पूरे नाटक के ढंग पर पहले गिरिधरदास ही ने नहुष नाटक लिखा। इस में नहुष और इन्द्र की कथा वर्णित है कि नहुष ने कैसे इन्द्र को उनके सिंहासन से हटा दिया और फिर उनको अपना सिहासन वापस मिला। यह ग्रंथ सन् १८५७ ई० में लिखा गया था जिसका सम्पादन राधा कृष्ण दास ने किया। जब गिरिधर दास के बड़े ही प्रसिद्ध पुत्र हिन्दी साहित्य के एक रत्न भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने अपनी प्रबल लेखनी उठाई तब हिन्दी नाटक को कुछ बल मिला और उसकी उन्नति हुई। पिता ने पुत्र के लिए रास्ता बना दिया था।

राजा शिवप्रसाद

शिवप्रसाद बनारस के रहने वाले जैन मत के अनुयायी थे। इनको ब्रिटिश सरकार ने राजा और सी० आई० ई० की उपाधियाँ दी थीं क्योंकि इन्होंने सरकार की सहायता उस समय में की थी जब अङ्गरेज़ों और सिक्खों में लड़ाई हो रही थी। युवा अवस्था में यह महाराज भरतपुर के वकील थे। उसके बाद यह सरकारी शिक्षा-विभाग में इन्सपेक्टर हुए। इन को सितारेहिंद की भी पदवी मिली थी। राजा शिवप्रसाद ने हिन्दी का बड़ा उपकार किया और वह भी कई ढंग से। एक तो इन्होंने शिक्षाविभाग से हिन्दी उठाने न दिया। उस समय पर विचार हुआ था कि हिन्दी बिलकुल उठा दी जाय।

दूसरे इन्होंने स्वयं कई ग्रंथों की रचना की। इनके ग्रंथ भी कई ढंग से उपकारी हुए। एक तो इन्होंने गद्य अधिक लिखा और गद्य साहित्य को बड़ा बल दिया। दूसरे इन्होंने भाषा निर्दिष्ट की। इनकी भाषा की विशेषता यह है कि न तो उसमें फ़ारसी अधिक है और न संस्कृत। वह बोलचाल की भाषा सी है। तीसरे इन्होंने विविध विषयों पर रचना की और चौथे इन्होंने पाठ्य पुस्तकें लिख कर हिन्दी का प्रचार किया और बालकों के लिए भी बहुत विषयों को सुलभ किया। इन्होंने कुछ स्वतंत्र रचना की, कुछ अनुवाद किए और कुछ संग्रह बनाए। इनके रचे हुए कुछ ग्रंथों के नाम ये हैं:—वर्णमाला, अङ्गरेज़ी अक्षरों के सीखने का उपाय, हिन्दी व्याकरण, बालबोध, इतिहास तिमिरनाशक, भूगोल हस्तामलक, राजा भोज का सपना, सैंडफ़र्ड ऐंड मार्टिन्स स्टोरी और मानवधर्मसार इत्यादि। इनकी रचनाओं में अङ्गरेज़ी का प्रभाव तथा वर्तमान काल का आगमन स्पष्ट दीख पड़ता है। इनके गद्य का उदाहरण देखिये :—

"बाबा तुलसीदास ब्राह्मण थे, पण्डित थे, गोसाईं थे, अकबर बादशाह के वक़्त में थे उनकी रामायन अपने क़िस्म की अद्वितीय है"।

यह हिन्दी उर्दू मिली भाषा लिखते थे और फ़ारसी इत्यादि के शब्द का प्रयोग करते थे। इनकी इतिहास संबंधी रचनाएँ बड़ी प्रसिद्ध हैं जिनमें इतिहास तिमिरनाशक का बहुत प्रचार हुआ था। इसमें मरहठों के संबंध में लिखते हैं कि ये :—

"अँगरखा जाँघिया एक पेची पगड़ी पहने कमर कसे हाथ में भाला दक्खनी घोड़ों पर सवार तीस कोस तो हवा खाने को घूम आते थे न थकते न मांदे होते थे जौ बाजरे की रोटी प्याज़

के साथ उनका खाना था और घोड़े का ज़ीन तकिया ज़मीन बिछौना और आसमान शामियाना था "।

इनके वर्णन करने का ढंग अच्छा था।

शिक्षाविभाग के लिए राजा साहेब के अतिरिक्त स्वामी निर्भयानन्द ने भी कुछ पुस्तकें लिखीं।

अनुवादकर्ता टीकाकार

इस समय में अनुवादकर्ता तथा टीकाकार भी कई हुए जिनमें कुछ का वर्णन तो आ चुका है। शेष में अनुवादकर्ता शंभूनाथ मिश्र अच्छे थे। इन्होंने शिव पुराण के चतुर्थ खंड का अनुवाद किया है जो ब्रजभाषा और बैसवाड़ी मिश्रित भाषा में विविध छन्दों में लिखा है। इसकी भाषा अच्छी और मनोहर है। एक चतुर्भुज मिश्र ने अलङ्कारआभा नामक ग्रंथ बनाया जो कुवलयानन्द नामक प्रसिद्ध संस्कृत ग्रंथ का हिन्दी अनुवाद है। संस्कृत ग्रंथों के एक भारी अनुवादक पन्नालाल थे। इन्होंने बहुत से ग्रंथ बनाए हैं। टीकाकारों में सरदार उच्च कोटि के कवि थे जो महाराजा बनारस के यहाँ रहते थे। इन्होंने सूरदास के दृष्टकूट, केशवदास की कविप्रिया और रसिकप्रिया और बिहारी की सतसई पर बड़ी अच्छी टीकाएँ लिखी हैं। इनकी भाषा भी बहुत अच्छी है। टीकाओं के अतिरिक्त इन्होंने पद्य में रामरनरत्नाकर, षट्ऋतु, व्यङ्गविलासन आदि कई ग्रंथ रचे हैं और एक शृङ्गारसंग्रह भी बनाया है। सदासुख भी अच्छे टीकाकार थे जिन्होंने समयसार इत्यादि की टीका लिखी है। हरिजन ने कविप्रिया की और हिमंचल और रामजू ने सतसई की टीकाएँ लिखीं और गंगा प्रसाद ने विनयपत्रिका तिलक लिखा।

इस समय में भिन्न भिन्न विषयों पर भी कविता की गई और दूर दूर के कवियों ने कविता की। दलपति राय काठियावाड़ के थे। इन्होंने हिन्दी और गुजराती दोनों में कविता की है। द्रोणाचार्य महाराष्ट्र ब्राह्मण थे। इन्होंने प्रियादास चरितामृत लिखा। इस काल में इतिहास लेखक भी कई हुए। राजा शिवप्रसाद का नाम आ चुका है; बेनीदास ने मेवाड़ इतिहास लिखा; कृष्णदत्त ने भारत ग़दर लिखा; ईश्वरी प्रसाद ने तवारीख़ महोबा लिखी। इसी प्रकार और लेखक हुए। राजनीति तथा नृपनीति पर भी लक्ष्मण और विष्णुदत्त आदि ने कुछ रचना की है। साधारण नीति पर भी जानकी प्रसाद के अतिरिक्त शंकर पाँडे, अंबुज और गोकुल ने रचना की। वैद्यक पर राधेकृष्ण ने औषधि संग्रह लिखा और गुरु प्रसाद ने सन्निपात चंद्रिका लिखी। इनके अतिरिक्त और भी ग्रंथ रचे गए। गणित पर भी दो एक ग्रंथ लिखे गए जैसे धीरजसिंह की गणित चंद्रिका। तंत्र पर नैन योगिनी और शिवदयाल ने ग्रंथ बनाए।

अन्य विषय और कवि

कहानी भी इस काल में दो एक लिखी गईं। कासिमशाह ने हंस जवाहिर लिखा था। उसके कुछ ही दिन बाद मारवाड़ के लेखक थिरपाल ने गुलाब चम्पा नामक एक कहानी लिखी। नाटक नाम के भी कुछ ग्रंथ निकले। लक्ष्मण ने रामलीला नाटक और ईश्वरी प्रसाद ने ऊषा अनिरुद्ध नाटक ग्रंथ रचे और गिरिधारी दास ने प्रसिद्ध नहुष नाटक लिखा ही। बिहार में भानुनाथ झा ने प्रभावती हरण नामक एक प्रसिद्ध नाटक लिखा। इनकी भाषा मैथिली है। गद्य ने इस समय बहुत बल पाया जैसा ऊपर कहा जा चुका है। सितारे हिन्द आदि

की खड़ी बोली के अतिरिक्त वंसगोपाल आदि ने ब्रजभाषा में गद्य लिखा। इनका भाषा सिद्धांत नामक ग्रंथ है।

यह जानने की बात है कि इस समय भक्तमाल ग्रंथ उर्दू अक्षरों में लिखा गया और लेखक तुलसीराम थे। कुछ साधुओं ने भी इस काल में कविता की। चिदानंद अथवा कर्पूर विजय ने आध्यात्मिक रचना की। लिखते हैं :—

"जौ लौं तत्त्व न सूझ पड़ै रे।
तौ लौं मूढ़ भरम बस भूल्यौ मत ममता गहि जग सों लड़ै रे॥"

गणेशपुरी राजपूताना के एक बड़े प्रसिद्ध साधु थे जो कविता भी अच्छी करते थे।

इस काल के साहित्य पढ़ने से आने वाले वर्तमान काल का आगमन भली भाँति सूचित होता है। साहित्यिक रचना की नई धारा, नाटक का विकास, खड़ी बोली का प्रचार, गद्य की प्रथा, इत्यादि सभी बातें आने वाले समय को बतला रही हैं।

पाँचवाँ प्रकरण

हरिश्चन्द्र से लेकर आज तक

(१८६० ई० के बाद)

भारतीय विद्रोह की शांति के बाद से भारतवर्ष में एक नवीन युग का प्रवेश हुआ। विलायत की अंगरेज़ी सरकार ने यहाँ का शासन ईस्ट इंडिया कम्पनी के हाथ से निकाल कर अपने हाथ में ले लिया। अब शांतिपूर्वक शासन होने लगा; देश की आंतरिक युद्धों का समय बीत गया ; न्याय शासन के लिए उचित कानून बनाए गए और बहुत से ऐक्ट पास हुए ; हाई कोर्टों की स्थापना की गई; उधर विश्वविद्यालय बने और पाश्चात्य सभ्यता और विचारों का भली भाँति प्रचार होने लगा। वहाँ के वैज्ञानिक आविष्कारों से भारत भी लाभ उठाने लगा। रेल की जड़ तो कुछ वर्ष पहले ही से पड़ चुकी थी किंतु अब उसका प्रचार बढ़ा। इसी भांति तार की भी उन्नति होने लगी। रेल तार तथा डाक इत्यादि का प्रभाव जीवन के अनेक विभागों में पड़ा है। साहित्य के इतिहास में भी इनका महत्व है क्योंकि एक तो इनके कारण से देश के कोने कोने के लोग आपस में व्यवहारिक संबंध रखने लगे जिससे एकता का भाव बढ़ा। ऐसी दशा में समाचार पत्रों की आवश्यकता बढ़ी क्योंकि लोग दूसरे दूसरे स्थान के समाचार जानने को उत्सुक होने लगे। दूसरे इनके सहारे इन पत्रों की बिक्री बढ़ने लगी और ये सरलता से दूर दूर भेजे जाने

लगे। तीसरे पाश्चात्य विचारों का फैलना सरल हो गया। दूर दूर के लोग विश्वविद्यालयों में पढ़ने आने लगे और शिक्षा की वृद्धि हुई। पाश्चात्य शिक्षा और संसर्ग ने भी साहित्य को बहुत प्रभावित किया। नए नए विचार आने लगे; जीवन निर्वाह के नए नए ढंग निकलने लगे और नए नए आदर्शों का प्रवेश होने लगा। इन सब बातों की चर्चा पुस्तकों में होने लगी। यह वैज्ञानिक काल था और वैज्ञानिक काल में गद्य ही प्रधान रहता है। अतएव इस काल में गद्य की वृद्धि हुई। युग की नवीनता ने गद्य तो बढ़ाया ही, पद्य में भी कुछ उलट फेर किया। ब्रज भाषा का सिक्का उखड़ गया; खड़ी हिन्दी का प्रचार बढ़ने लगा और उसमें नए नए विषयों की ओर ध्यान दिया जाने लगा।

इस नवीन युग ने आरम्भ में लोगों के हृदय में एक प्रकार का उत्साह पैदा किया। एक नई राजनैतिक स्थिरता, एक शांतिमय शासन, नए विचारों और आदर्शों का एक बड़ा प्रवाह, सभ्यता की एक प्रकार की नई झलक—इन सब ने मिल कर भारतीय शिक्षित समाज को उत्साहित किया। जातीय उत्साह का साहित्य पर बड़ा प्रभाव पड़ता है, विशेषतः नाटक साहित्य की उन्नति होती है। यद्यपि यह उत्साह किसी जातीय गौरव तथा उज्ज्वल विजय का न था तथापि नया और व्यापक होने के कारण इसने कुछ प्रभाव तो डाला ही और नाटक साहित्य की वृद्धि अवश्य हुई। हाँ वैसी नहीं हुई जैसी महारानी एलिज़बेथ के समय में अंगरेज़ी की हुई तथा गुप्त वंश के राजाओं के समय में संस्कृत की हुई।

जब इस प्रथम उत्साह का समय बीतने लगा तो आलोचना और समालोचना का समय आया। पाश्चात्य विचारों आदि की तीव्र आलोचना होने लगी और धीरे धीरे भारतीय विचारों का पुनरुत्थान होने लगा। इसी उत्थान, पुनरुत्थान, क्रिया और

प्रतिक्रिया के समय में भारतीय समाज पर भी आलोचनात्मक दृष्टि डाली गई। बंगाल में तो राजा राममोहन राय ने पहले ही हिन्दू समाज सुधार की इच्छा से ब्रह्म समाज स्थापित किया था। अब उत्तरी भारत में दयानंद सरस्वती ने आर्य समाज की स्थापना की। इस समाज ने साहित्य में एक नई धारा प्रवाहित की। दयानंद जी ने अन्य धर्म प्रचारकों की भांति बोल चाल की भाषा में शिक्षा दी और खड़ी बोली हिन्दी का बड़ा उपकार किया।

खड़ी बोली गद्य के नक्षत्र इस समय बहुत ही अच्छे थे। एक ओर नवीन धर्म प्रचारक, दूसरी ओर प्रेस और पत्र पत्रिकाओं की पूरी शक्ति, तीसरी ओर सभाओं और सम्मेलनों का कार्य और चौथी ओर नाटक की वृद्धि और कवियों का सहारा—इन सब ने मल कर इस उपयुक्त वैज्ञानिक काल में अपना प्रभाव दिखलाया और चारों ओर खड़ी बोली हिन्दी गद्य को फैला दिया। कहीं ब्रजभाषा लड़खड़ाने लगी, कहीं धार्मिक काव्य सिर धुनने लगा; कहीं भाषा का श्रृंगार मलिन हुआ और कहीं काव्योत्कर्ष स्वप्नमय होने लगा।

इस काल के आरम्भ ही में दो मूर्तियाँ शोभायमान हैं-एक स्वामी दयानंद सरस्वती दूसरे भारतेन्दु बाबू हरिश्चंद्र।

स्वामी दयानंद

स्वामी जी काठियावाड़ के ब्राह्मण थे। इनका जन्म सं १८८१ वि० में हुआ था। १९३२ वि० में इन्होंने बंबई शहर में आर्य समाज की स्थापना की। स्वामी जी बड़े भारी पंडित और विद्वान थे। इन्होंने अपना पूरा जीवन विद्याध्ययन, ज्ञान प्राप्ति, योग साधन और धर्म शिक्षा में व्यतीत किया। ये भारत में चारों ओर भ्रमण करते रहे। पहले इनके भ्रमण का उद्देश विद्या और ज्ञान प्राप्ति तथा योग साधन था। कुछ दिनों तक आबू पर्वत पर योगाभ्यास करते रहे और

कुछ दिनों तक मथुरा आदि में विद्या पढ़ते रहे। इसके बाद ये शास्त्रार्थ करने के विचार से भ्रमण करते रहे और हरद्वार से काशी, पटना होते हुए कलकत्ता तक और उधर जबलपुर, बम्बई, काठियावाड़ तक घूमते रहे। इसके बाद इन्होंने धर्मप्रचार और शिक्षा के लिए भ्रमण किया। स्वामी जी ने जीवन पर्यंत ब्रह्मचर्य धर्म का पालन किया। इन्होंने युवा अवस्था ही में सन्यास ले लिया था और तभी से अपना नाम दयानंद सरस्वती रखा। जिनसे इन्होंने सन्यास लिया था उनका नाम पूर्णानंद सरस्वती था। स्वामी जी ने सं० १९४७ वि० में ५९ वर्ष की अवस्था पाकर शरीर त्याग किया। स्वामी जी एक आदर्शपुरुष और महान् व्यक्ति हो गए हैं। ऐसे पूजनीय मनुष्य संसार में कम उत्पन्न हुए हैं। "यदि संसार के सर्वोत्कृष्ट महानुभावों की गणना की जावे, तो उसमें स्वामी दयानंद जी का नंबर अच्छा होगा।" यह विचार मिश्रबंधु का है जो "आर्य समाजी नहीं हैं और प्रतिमा पूजन तथा श्राद्ध इत्यादि पर पूरा विश्वास रखते हैं।"

यद्यपि स्वामी जी काठियावाड़ के रहने वाले भारी पंडित और संस्कृत के विद्वान थे तथापि इन्होंने हिन्दी की ओर विशेष ध्यान दिया और उसका बड़ा उपकार किया। एक तो ये स्वयं इसी भाषा में उपदेश देते रहे और इनके शिष्यों ने भी इसीको अपनाया, दूसरे इन्होंने स्वयं बहुत से ग्रंथों की रचना की और प्रायः सभी में हिन्दी ही का प्रयोग किया और तीसरे इनके विरुद्ध मत वालों ने भी इसी भाषा में उपदेश दिया। आर्य समाज और सनातन धर्म दोनों ने हिन्दी साहित्य की बड़ी उन्नति की। साथ ही साथ इसाई धर्म प्रचारकों ने भी इसमें कुछ भाग लिया।

स्वामी जी के रचे हुए सभी ग्रंथ धर्म संबंधी हैं, जैसे ऋग्वेद भाषा, आर्योद्देश्य रत्नमाला, सत्यार्थ प्रकाश, इत्यादि। कुल मिलाकर

इन्होंने १५, १६ ग्रंथों की रचना की जिनमें सत्यार्थ प्रकाश सबसे विख्यात है। इसमें इन्होंने प्रत्येक अवस्था और आश्रम के मनुष्यों के कर्तव्य बतलाए हैं, आर्य धर्म का उपदेश और समर्थन किया है और अन्य धर्मों का खंडन किया है। यह शिक्षाप्रद पुस्तक उपयोगी और सबके पढ़ने योग्य है। स्वामी जी सरल भाषा लिखा करते थे और दार्शनिक बातों को भी ऐसी ही भाषा में बतलाते थे। जैसे—

"जो सब जगत् में व्यापक है उस निराकार परमात्मा की प्रतिमा परिमाण सादृश्य वा मूर्ति नहीं है" "जो मन को जानता है उसी ब्रह्म को तू जान।"

अपने साधन चंद्रिका नामक ग्रंथ में इन्होंने भिन्न भिन्न प्रकार के योग और भक्ति, वैराग्य, इत्यादि का वर्णन किया है। उपासना विज्ञान के संबंध में लिखते हैं:—

"श्री भगवान रस के सागर हैं। इसी रस सिंधु से विंदु विंदु लेकर जीव जगत में अनंत रसों का विकाश हुआ है। पिता के चित्त में जो पुत्र के लिए वात्सल्य रस, पुत्र के हृदय में जो पिता माता के लिए श्रद्धा रूप रस, पति के चित्त में जो पत्नी के लिए प्रेमरस, पत्नी के चित्त में जो पति के लिए मधुर रस, माता के चित्त में जो पुत्र के लिए स्नेह रस, मित्र के चित्त में जो मित्र के लिए एकप्राणता रूप रस, शिष्य के चित्त में जो गुरु के लिए शुद्ध श्रद्धा रूप रस, भक्त के चित्त में जो भगवान के लिए भक्तिरस, ये सभी रस रसरूप आनंद कंद सच्चिदानंद श्री भगवान की आनंद धारा से उत्पन्न हैं।"

भक्ति के संबंध में कहते हैं:—

"भक्ति सकल साधना का प्राण है, इसलिए उपासना के नौ अंग का वर्णन करके उपासना की प्राण रूपिणी भक्ति के स्वरूप के विषय में कुछ कहना आवश्यक है।"

भारतेंदु हरिश्चंद्र स्वामी दयानन्द के समकालीन थे किंतु इन्होंने इस संसार में केवल ३४ ही वर्ष की अवस्था पाई। इनका जन्म काशी में सं० १९०७ वि० में हुआ था और इनकी मृत्यु स्वामी जी की मृत्यु के दूसरे ही वर्ष में १९४१ वि० में काशी ही में हुई। ये जाति के अग्रवाल वैश्य थे और प्रसिद्ध कवि गिरिधर दास के सुपुत्र थे जिनका वास्तविक नाम गोपाल चंद्र था। यह गोपाल चंद्र बंगाल के सेठ अमीचंद के वंशज थे जिनका वर्णन भारतीय इतिहास में क्लाइव के समय में आता है।

हरिश्चंद्र

बाबू हरिश्चंद्र ने अपने छोटे से जीवन में हिन्दी को फिर उच्चशिखर पर पहुँचा दिया, उसके लिए कई सुगम मार्ग बना दिए और उसको उसका वर्तमान रूप प्रदान किया। इन्होंने अधिक शिक्षा न पाई थी। एक तो जब यह ९ ही वर्ष के थे तभी इनके पिता का स्वर्गवास, हो गया, दूसरे इसमें उनका दिल नहीं लगता था परंतु ये बुद्धिमान थे और परीक्षा में कभी असफल नहीं हुए। हिन्दी साहित्य के लिए यह अच्छा ही हुआ क्योंकि यदि यह अपने अल्पकालिक जीवन का अधिकांश पठन पाठन ही में बिता देते तो हिन्दी का इतना उपकार न होने पाता और फिर अधिक पांडित्य पूर्ण होकर इनके अपनी मौलिकता बहुत कुछ खो बैठने का संदेह भी लगा रहता जैसा बहुधा हुआ भी है। हरिश्चंद्र जी १७ वर्ष की अवस्था से काव्य लिखने लगे परन्तु स्मरण रहे कि पांच ही छः वर्ष की अवस्था में इन्होंने एक दोहा बनाया था। इनको बचपन ही से कविता में शौक था और यह अंत तक कविता लिखते रहे। इनकी कविता बहुत ही उच्चकोटि की होती थी और इनके टक्कर का इनके बाद अभी तक कोई कवि नहीं हुआ और इनके पहले भी बहुत दिनों तक कोई कवि इनकी समानता करने वाला नहीं

मिलता । इनकी कविता की उत्कृष्टता और चमत्कार देखकर लोगों ने इन्हें भारतेंदु की उपाधि दी थी ।

भारतेंदु जी ने गद्य और पद्य दोनों में रचना की । इनका पद्य विशेषतः ब्रजभाषा में और गद्य खड़ी बोली में हुआ करता था किन्तु इन्होंने भारत वर्ष की बहुत सी भाषाओं का प्रयोग किया है, जैसे पंजाबी, अवधी, बंगला, मराठी, गुजराती और उर्दू इत्यादि। छोटे बड़े कुल मिलाकर इन्होंने १७५ ग्रंथों की रचना की और इनके अतिरिक्त कई पत्र पत्रिकाएं चलाईं । इनकी रचना में कई विशेषताएँ मिलती हैं ।

एक तो ये बड़े प्रेमी थे और इनकी रचनाएं प्रेम पूर्ण हैं। कुछ ग्रंथों के नाम ही प्रेम के साथ हैं, जैसे प्रेम फुलकरी, प्रेम माधुरी और प्रेम तरंग इत्यादि । इन्होंने ईश्वरीय और लौकिक दोनों प्रेम का अच्छा वर्णन किया है । लिखते हैं :—

"प्यारो पैये केवल प्रेम में ।
नहीं ज्ञान में नहीं ध्यान में नहीं करम कुल नेम में ॥
नहिं मंदिर में नहिं पूजा में नहिं घंटा की घोर में ।
हरीचंद वह बाँध्यो डोलै एक प्रेम की डोर में ॥"

"बिना प्रान प्यारे भये दरस तिहारे हाय,
देखि लीजौ आँखैं ये खुली ही रहि जायँगी ॥"
"धन संपति सर्वस गेहु नसौ नहिं प्रेम की मेंड सों एँड़ टलै"
"हरिचंद जू या मैं न लाभ कछू हमैं बातन क्यौं बहरावती हौ ।
सजनी मन हाथ हमारे नहीं तुम कौन को का समुझावती हौ ॥"

दूसरी विशेषता यह है कि यह जातीयता तथा हिंदुत्व के भाव से भरे थे । यह समझते थे कि फूट से नाश ही हो जाता है । कहते हैं :—

" जो जग मैं धन मान और बल अपुनो राखन होय।
तो अपने घर मैं भूलेहु फूट करौ मति कोय॥"

क्योंकि "जगत मैं घर की फूट बुरी,
घर के फूटहीं सो बिनसाई सुबरन लंक पुरी।"
फूटहि सों सब कौरव नासे भारत युद्ध भयो,
जाको घाटो या भारत मैं अबलौं नहिं पुजयो॥"

इत्यादि

तथा "जो आरजगन एक होय निज रूप विचारैं।
तजि गृह कलहहिं अपनी कुल मरजाद सँभारैं॥
तौ अमीर खाँ नीच कहा याको बल भारी।
सिंह जगे कहुँ स्वान ठहरिहैं समर मँझारी॥"

इन्होंने भारत दुर्दशा नामक एक नाटक लिखा है। इसमें और नील देवी में इन्होंने अपने स्वदेश प्रेम का पूरा परिचय दिया है।

तीसरी विशेषता यह है कि इन्होंने भिन्न भिन्न विषयों पर बड़ी उत्कृष्ट रचना की है—कहीं प्रेम का आलाप आलापा और कहीं ख़ूब हँसी दिल्लगी की; कहीं इतिहास लिखा और राजनैतिक विषयों का वर्णन किया; कहीं गंगा छबि का अति मनोहर वर्णन किया; एक ओर गंभीर बातों का वर्णन, ऐतिहासिक घटनाओं और भारतदुर्दशा का वर्णन; दूसरी ओर अंधेर नगरी का नाटक और चूरण पर कविता। चूरन के संबंध में लिखते हैं :—

चूरन सभी महाजन खाते। जिससे जमा हजम कर जाते॥
चूरन खाते लाला लोग। जिनको अकिल अजीरन रोग॥
चूरन खावैं एडिटर जात। जिनके पेट पचै नहिं बात॥
चूरन साहेब लोग जो खाता। सारा हिन्द हजम कर जाता॥

चूरन पूलिस वाले खाते। सब कानून हजम कर जाते ॥
ले चूरन का ढेर, बेचा टके सेर।"

हरिश्चंद्र जी पातिव्रत की बड़ी महिमा समझते थे। लिखते हैं:—

"जग में पतिब्रत सम नहिं आन।
नारि हेतु कोउ धर्म न दूजो जग में यासु समान ॥
× × × ×
सब समर्थ पतिबरता नारी इन सम और न आन।
याही ते स्वर्गहु में इनको करत सबै गुनगान ॥"

फिर इनके गद्य का उदाहरण देखिये :—

"जिन लोगों ने केवल उत्तम उत्तम वस्तु चुन कर एकत्र किया है उनकी गुम्फित वस्तु की अपेक्षा जो उत्कृष्ट मध्यम और अधम तीनों का यथास्थान निर्वाचन कर के प्रकृति को भावभंगी उत्तम रूप में चित्रित करने में समर्थ हैं वही काव्यामोदी रसज्ञमंडली को अपूर्व आनंद वितरण कर सकते हैं।

भारतेंदु जी की रचना में नई और पुरानी प्रथाओं का बड़ा ही मनोहर संयोग मिलता है।

चौथी विशेषता इनकी रचना की यह है कि यह कभी कभी एक एक दिन में एक एक ग्रंथ रच डालते थे, जैसे अंधेर नगरी। आप आशु कवि थे।

हरिश्चंद्र ने हिन्दी की बड़ी उन्नति की। "वर्तमान हिन्दी की इनके कारण इतनी उन्नति हुई कि इनको इसका जन्मदाता कहने में भी अत्युक्ति न होगी" (मिश्रबंधु)। इन्होंने पहले पहल हिन्दी को राजभाषा बनाने का उद्योग किया। अपनी उदारता से इन्होंने बहुत से लेखकों को उत्साहित किया, फिर अपनी रचनाओं से इन्होंने हिन्दी को भली भाँति विभूषित किया। इनकी रचनाओं में सब से प्रसिद्ध इनके नाटक हैं और यह हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ

नाटककार हैं। कुल इन्होंने १८ नाटक लिखे जिनमें सत्य हरिश्चंद्र, मुद्राराक्षस और चंद्रावली बहुत ही प्रसिद्ध हैं।

श्रीचंद्रावली का एक उदाहरण देखिये :—

चंद्रावली—सखी, मैं तो पहिले ही कह चुकी कि तू धन्य है। संसार में जितना प्रेम होता है कुछ इच्छा लेकर होता है और सब लोग अपने ही सुख में सुख मानते हैं पर उसके विरुद्ध तू बिना इच्छा के प्रेम करती है और प्रीतम के सुख से सुख मानती है। यह तेरो चाल संसार से निरालो है। इसी से मैंने कहा था कि प्रेमियों के मंडल को पवित्र करने वाली है।

(चंद्रावली नेत्रों में जल भर कर मुख नीचा कर लेती है।)

(दासी आकर)

दासी—अरी, मैया खीझ रही हैं के वाहि घर के कछु और हूँ कामकाज हैं के एक हाहा ठीठी ही है, चल उठि, भोर सों यहीं पड़ी रही।

चंद्रावली—चल आऊँ, बिना बात की बकवाद लगाई। (ललिता से) सुन सखी, इसकी बातें सुन, चल चलें।

(लंबी साँस लेकर उठती है)

(तीनों जाती हैं)

इन्होंने एक ग्रंथ नाटक के नियमों का भी लिखा है।

यों तो हिन्दी में पहले भी नाटक लिखे जा चुके थे किंतु पहला वास्तविक नाटक हरिश्चंद्र के पिता गिरधर दास ने लिखा जिसका नाम नहुष नाटक था। यह सन् १८५७ ई० में लिखा

गया था । इसके ५ वर्ष बाद राजा लक्ष्मण सिंह ने शकुंतला नाटक लिखा । तब हरिश्चंद्र ने नाटक पर नाटक लिखना शुरू किया। इनका पहला नाटक विद्या सुंदर नामक था । हरिश्चंद्र के समय में और इनके बाद अनेक नाटककार हुए।

नाटकों के अतिरिक्त इन्होंने काश्मीर कुसुम, महाराष्ट्र देश का इतिहास और चरितावली नामक कई ऐतिहासिक ग्रंथों की भी रचना की। हरिश्चंद्र कृष्ण भक्त, राज भक्त और विलासिताप्रिय थे। अतः इनकी रचना में ईश्वर भक्ति, राज भक्ति और शृंगार सब मिलते हैं। इन्होंने बहुत से गाने भी बनाए। सुनिये :—

" सोओ सुख निंदिया प्यारे ललन,
नैनन के तारे दुलारे मेरे बारे,
सोओ सुख निंदिया प्यारे ललन।"

इत्यादि

कितना मनोहर और सुंदर है । फिर विहारी सतसई पर कुंडलियां लिखीं। इन्होंने कुछ संग्रह भी तैयार किये, जैसे सुंदरी तिलक इत्यादि।

इनके अतिरिक्त भारतेंदु जी ने अपने लेखों और पत्र पत्रिकाओं से हिन्दी का बड़ा उपकार किया। यों तो हिन्दी में सब से पहला पत्र बनारस अख़बार था जिसके संपादक गोविंद रघुनाथ थत्ते थे और जो राजा शिव प्रसाद की सहायता से सं० १६०२ वि० में निकला था। फिर इसके बाद बनारस ही से सुधाकर नाम का पत्र निकला। किंतु जब सं० १६२५ वि० में भारतेंदु जी ने कविवचनसुधा नामक पत्र निकाला तो मालूम हो गया कि वास्तव में पहला उत्कृष्ट पत्र हिन्दी का यही है। पाँच वर्ष बाद इन्होंने फिर एक पत्र निकाला जिसका नाम हरिश्चंद्र मैगेज़ीन था।

दूसरे ही वर्ष इसका नाम हरिश्चंद्र चंद्रिका रखा गया। हरिश्चंद्र के समय में और उनके बाद बहुत से पत्र और पत्रिकाएं निकलीं।

भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र वास्तव में भारत और हिन्दी साहित्य के चंद्र थे किंतु शोक है कि उन्हें काल ने पूरा अवसर न दिया। जब १८८५ ई० में उनकी मृत्यु हुई तो भारत ने बड़ा शोक बनाया।

बाबू हरिश्चंद्र ने नाटक और पत्र पत्रिकाओं का रास्ता साफ़ कर दिया। इनके समकालीन एक प्रसिद्ध नाट्यकार राजा लक्ष्मण सिंह थे जिनका जन्म भारतेंदु जी से पहले हुआ था और मृत्यु पीछे हुई थी। ये १८२६ ई० से १८९९ ई० तक जीवित रहे। अंगरेज़ी सरकार की ओर से ये डिप्टी कलक्टर भी नियुक्त किये गये थे और इनको सरकार ही ने राजा की पदवी भी दी थी। राजा लक्ष्मण सिंह मौलिक नाट्यकार न थे वरन् इन्होंने महाकवि कालिदास रचित शकुंतला का हिन्दी में अनुवाद किया। यह अनुवाद इतना लोकप्रिय हुआ कि भारत वर्ष के अतिरिक्त इंगलैंड में भी इसका बड़ा आदर हुआ। यह अनुवाद पहले पहल सं० १८६२ ई० में निकला। यह गद्य में था और इसकी भाषा खड़ी बोली थी। फिर ३३,३४ वर्ष के बाद जो इसका संस्करण निकला उसमें संस्कृत श्लोकों का अनुवाद पद्य में किया हुआ था। इनका अनुवाद बहुत उत्तम और सच्चा हुआ है और इनकी भाषा बड़ी अच्छी है। चौथे अंक में देखिये :—

राजा लक्ष्मण सिंह

शिष्य—अब होम का समय हुआ गुरु जी से चल कर कहना चाहिये।

अनसूया—मैं उठी भी तो क्या करूँगी हाथ पैर तो कहना ही नहीं करते अब निर्दई कामदेव का मनोर्थ पूरा हुआ जिसने

हमारी भोली सखी को एक मिथ्यावादी के बस में डाल इस दशा को पहुँचाया है अथवा यह भूल दुर्वासा के शाप का फल है नहीं तो क्योंकर हो सकता कि वह राजर्षि ऐसे वचन देकर अब तक संदेश का पत्र भी न भेजता। अब सुध दिलाने को अँगूठी उसके पास भेजनी पड़ी परंतु इन दुखिया तपस्वियों में किससे कहूँ कि अँगूठी लेजा। जो मैं यह भी जानती कि शकुन्तला का दोष है तो भी पिता कन्व से जो अभी तीर्थ कर के आए हैं न कह सकती कि शकुन्तला का व्याह राजा दुष्यंत से हो गया और उसे गर्भ भी है। अब क्या करना चाहिये।

(प्रियम्बदा हँसती हुई आती है)

प्रियम्बदा—सखी वेग चल, शकुन्तला की बिदा का उपचार करें।

अनसूया—तू क्या कहती है।"

फिर बिदाई के समय कन्व ऋषि सोचते हैं :—

"आज शकुन्तला जायगी मन मेरा अकुलात।
रुकि आँसू गद्गद गिरा आँखिन कछु न लखात॥
मोसे बनबासीन जो इतौ सतावत मोह।
तौ गेही कैसे सहैं दुहिता प्रथम बिछोह॥

(इधर उधर टहलते हैं)"

सातवें अंक में राजा दुष्यंत एक बालक को जो उन्हीं का पुत्र था किंतु जिसे वह जानते न थे एक सिंह के बच्चे के साथ खेलते हुए देखते हैं और तब :—

"दुष्यन्त—(आप ही आप) इसके खिलाने को मेरा जी कैसा ललचाता है।

हाँसी बिन हेत माहि दीखत बतीसी कछू,
निकसी मनोहै पाँति ओछी कलिकान की।
बोलन चहत बात टूटी सी निकसि जात,
लगन अनूठो मीठी बानी तुतलान की॥"

इत्यादि

राजा जी ने शकुंतला के अतिरिक्त रघुवंश और मेघदूत का भी अच्छा अनुवाद किया है। रघुवंश का अनुवाद सुंदर और शुद्ध हिन्दी गद्य में है और ग्रंथ बड़ा है। मेघदूत का अनुवाद पद्य में है, जिसमें भिन्न भिन्न छंदों का प्रयोग हुआ है। इसकी भाषा अधिकतर ब्रजभाषा है। किंतु चौपाई दोहा और सोरठों की भाषा गोसाईं जी की भाषा के समान है।

श्रीनिवासदास, तोताराम बालकृष्ण भट्ट

हरिश्चंद्र और लक्ष्मणसिंह के अतिरिक्त और बहुत से नाट्यकार हुए और बहुत से इस समय में भी वर्तमान हैं। इन लोगों के रचे हुए नाटक कुछ तो मौलिक हैं और कुछ संस्कृत और अंगरेज़ी इत्यादि भाषाओं के नाटकों के अनुवाद हैं। बाबू हरिश्चंद्र जी के जन्म के दूसरे ही वर्ष अर्थात् सं० १९०८ वि० में श्रीनिवासदास का जन्म हुआ था जो एक अच्छे नाटककार हुए। किंतु काल ने इनको भी ३५,३६ वर्ष से अधिक जीवित न रहने दिया और सं०१९४४ वि० में इनका देहांत हो गया। यह मथुरा के रहने वाले वैश्य थे। यदि यह अधिक दिनों तक जीवित रहते तो हिन्दी नाटक का बड़ा उपकार कर जाते। इनका रणधीरप्रेममोहनी नामक नाटक बहुत प्रसिद्ध है जिसका अन्य भाषाओं में भी अनुवाद हुआ है। संयोगिता स्वयंबर भी इनका अच्छा नाटक ग्रंश है। इन्होंने एक और नाटक बनाया और एक उपन्यास की भी रचना की। श्रीनिवास जी एक

अच्छे कवि थे। तोताराम ने केटो कृतान्त नामक नाटक लिखा। इन्होंने वाल्मीकीय रामायण का थोड़ा अनुवाद किया है और अपने ग्रंथ का नाम राम रामायण रखा है। इनकी भी रचना अच्छी है। बालकृष्ण भट्ट एक बड़े प्रसिद्ध संपादक और लेखक थे। इन्होंने तीन अच्छे अच्छे नाटक बनाए—पद्मावती, शर्मिष्ठा और चंद्रसेन।

अन्य नाट्यकार

वर्तमान समय के नाटक कारों में पंडित श्यामबिहारी मिश्र और पं० शुकदेवबिहारी मिश्र, बद्रीनाथ भट्ट, लाला सीताराम, प्रेमचंद्र, रूपनरायण पांडे, रामचंद्र वर्मा, जयशंकरप्रसाद इत्यादि के नाम विख्यात हैं। नवयुवक दल में बहुत से नाटक लिखने वाले हैं जिनका कोई वर्णन देना असामयिक होगा। मिश्र लोग हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक हैं। इन्होंने पूर्व भारत नाम का नाटक लिखा है। भट्ट जी भी अच्छे नाटक लिखने वालों में हैं। इन्होंने दुर्गावती इत्यादि ग्रंथ लिखे हैं। इनमें ऐतिहासिक नाटक लिखने की अच्छी शक्ति है। लाला जी ने बहुत से जगत विख्यात नाटकों के अनुवाद किये हैं। उन्होंने अपनी लेखनी के लिए अधिकतर कालिदास और शेक्सपियर ही को उपयुक्त समझा है। अतः उन्होंने कालिदास रचित अनेक काव्य ग्रंथ तथा नाटक और शेक्सपियर रचित आँथेलो, मर्चेंट आँफ् वेनिस इत्यादि नाटकों का अनुवाद किया है। इनके अनुवाद अच्छे हैं। कालिदास के ऋतु संहार तथा मेघदूत का भी इन्होंने अच्छा पद्यमय अनुवाद किया है। इन्होंने हिन्दी की और ढँग से भी बहुत सेवा की है। इनका ७,८ जिल्दों में एक संग्रह ग्रंथ भी अच्छा बना है। प्रेमचंद हिन्दी भाषा के सर्व श्रेष्ठ उपन्यास लेखक हैं। इन्होंने नाटक की ओर भी अपनी लेखनी उठाई और 'संग्राम' इत्यादि ग्रंथ लिखे। रूपनारायण पांडेय

हिन्दी पाठकों के लिये एक सुपरिचित अनुवादकर्ता हैं। इन्होंने वर्तमान हिन्दी साहित्य को अपने अनुवादों से भर दिया है। यह बंगाली भाषा को अपना अनुवादक्षेत्र बना रखे हैं और उस भाषा के प्रसिद्ध नाट्यकार द्विजेंद्रलाल इत्यादि के दुर्गादास, शाहजहाँ, सूम के घर धूम इत्यादि अनेक नाटकों का अनुवाद कर चुके हैं। नाटक के अतिरिक्त इन्होंने बहुत से उपन्यास और गल्पग्रंथों का भी अनुवाद कर डाला है। इनका परिश्रम प्रशंसनीय है। रामचंद्र वर्मा ने मेवाड़पतन (अनुवाद) और जैशंकर प्रसाद ने कामना इत्यादि ग्रंथों की रचना की है।

पत्र, पत्रिकाएं

जैसा ऊपर कहा जा चुका है बाबू हरिश्चंद्र जी ने पहला उत्कृष्ट पत्र निकाला जो कविवचनसुधा के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसके बाद भारत वर्ष के भिन्न भिन्न नगरों से पत्र पत्रिकाएं निकलने लगीं। बिहार से बिहार बंधु निकला और कलकत्ता से हिंदी दीप्ति प्रकाश निकला, फिर प्रयाग से प्रसिद्ध हिंदी प्रदीप निकला जिसके निकालने वाले बालकृष्ण भट्ट थे। उधर पंजाब से मित्र विलास निकला। इसी समय में भारत मित्र और आर्य दर्पण भी निकले। इसी तरह भिन्न भिन्न स्थानों से पत्र निकलते रहे। हिन्दोस्तान और भारत जीवन निकलने के बाद श्रीमती हरदेवी जी ने भारत भगिनी निकाली। थोड़े दिनों बाद सरस्वती नामक प्रसिद्ध पत्रिका निकली। इसी भाँति होते होते वर्तमान समय में नाना प्रकार के पत्र तथा पत्रिकाएं देखने में आती हैं—कहीं 'आज' है तो कहीं हिन्दू संसार; कहीं नवजीवन है तो कहीं अभ्युदय; कहीं सरस्वती है तो कहीं गृह लक्ष्मी है; एक ओर माधुरी है तो एक ओर सुधा है। फिर कहीं मनोरमा है तो कही चाँद है; कहीं त्यागभूमि है और कहीं महारथी है, इत्यादि इत्यादि। इन पत्र पत्रिकाओं के संबंध में दो तीन बातें स्मरणीय हैं। एक तो

इनसे हिन्दी भाषा का प्रचार होता है और दूसरे हिन्दी साहित्य की उन्नति होती है। बड़े बड़े लेखकों के अतिरिक्त छोटे छोटे और नए लेखकों को भी अपने विचार प्रकट करने का अवसर मिलता है और लिखने का अभ्यास करने में सुविधा होती है, फिर उत्साह मिलता है और सहायता भी मिलती है। पत्रों में तो विशेषतः सामयिक समाचारों का वर्णन होता है और उन पर तथा अन्य विषयों पर थोड़ी सी आलोचना तथा समालोचना दे दी जाती है किंतु पत्रिकाओं से साहित्य का बड़ा उपकार होता है। उनमें कविता छपती हैं, लेख निकलते हैं, आलोचनाएं होती हैं और नाटक, उपन्यास तथा गल्प इत्यादि के लिए भी उचित स्थान मिलता है। वर्तमान समय के बहुत से साहित्यकार पत्र पत्रिकाओं के संपादक होकर तथा उनमें अपनी रचनाएं भेज कर अपना नाम पैदा किए हैं और साहित्य सेवा किए हैं।

इस काल के साहित्य रचयिता

अब इस काल के प्रसिद्ध साहित्य रचयिताओं पर दृष्टि डालनी चाहिये। नाट्यकारों का वर्णन हो चुका है किन्तु बहुत से नाटककार नाटकों के अतिरिक्त और ग्रंथ भी रचे हैं। किसी ग्रंथकार का वर्णन उसकी सर्व प्रसिद्ध रचना के प्रसंग में किया जायगा जैसे हरिश्चंद का वर्णन नाट्यकारों में हुआ और मिश्रबंधु का वर्णन समालोचकों तथा साहित्य के इतिहासकारों में होगा।

इस काल के अधिकांश साहित्य रचयिता गद्य लेखक हैं, कतिपय संपादक या निबंध लेखक हैं, कुछ उपन्यासकार तथा गल्प लेखक हैं, और बहुत से अनुवादक हैं। कवि भी कई ढंग के हैं, कुछ पुरानी प्रथा वाले और बहुत से नयी प्रथा वाले। अलंकार इत्यादि आचार्यता के विषय पर कविता करने वाले दो चार हुए, भक्ति तथा धर्म संबंधी कवि भी बहुत कम हैं, बहुत से कवि भिन्न भिन्न विषयों पर

कविता करते हैं। इस समय में किसी प्रसिद्ध लेखक के लिए भिन्न भिन्न विषयों पर अपनी लेखनी उठाना सरल तथा स्वाभाविक है। बहुत से लोग गद्य और पद्य दोनों लिखते हैं और भिन्न भिन्न भाषाओं का भी अलग अलग प्रयोग करते हैं।

रीति, अलंकार, इत्यादि विषय के कवि

रीति विषयक अर्थात् अलंकार इत्यादि पर कविता करने वालों तथा श्रृंगार रस के कवियों में औध, शंकर, गदाधर भट्ट, लछिराम और बलदेव अच्छी कविता करते थे। औध का वास्तविक नाम अयोध्या प्रसाद वाजपेयी था। यह अनुप्रासयुक्त बहुत अच्छी कविता करते थे। इन्होंने साहित्यसुधासागर और छंदानंद आदि ५, ६ ग्रंथों की रचना की। इनका एक ग्रंथ रामकवितावली है। राम और कृष्ण संबन्धी कविता का समय अब चला गया था, तथापि कुछ कवियों ने ऐसी कविता की। औध जी की रचना देखिये :—

" आई देखि गुय्यां मैं नरेश अँगनैया जहँ,
खेलैं चारौ भैया रघुरैया सुख पाय पाय।
लोनी लरिकैया दै झँकैया मैं बलैया जाउँ,
बैयाँ बैयाँ चलत चिरैयां गहैं धाय धाय॥ "

शंकर और गदाधर भट्ट दोनों ने अलंकार विषयक कविता की। शंकर ने कविता मंडल लिखा। इनका पूरा नाम शंकर सहाय अग्निहोत्री था। गदाधर भट्ट पद्माकर जी के पोते थे। इन्होंने अलंकार चंद्रोदय के अतिरिक्त और कई ग्रंथों की रचना की और एक संस्कृत ग्रंथ का हिन्दी पद्य में अनुवाद भी किया। यह मधुर भाषा लिखते थे और अपनी कविता में अच्छे भाव लाते थे। लछिराम और बलदेव नीति विषय के अच्छे कवि थे। दोनों के नाम विख्यात हैं और दोनों ने दूर दूर के कई राजाओं महाराजाओं के

यहाँ सम्मान पाया। लछिराम ने बहुत से ग्रंथ बनाए जिनमें अनेक बड़े बड़े हैं। इनकी भाषा सुंदर होती थी, जैसे—

" चैत चंद चाँदनी प्रकाश छोर छितिपर,
मंजुल मरीचिका तरंग रंग बरसो।"

इत्यादि

बलदेव ने भी बहुत से ग्रंथ बनाए और विविध विषयों पर। अलंकार तथा रसभेद इत्यादि विषयक इनका प्रतापविनोद नामक ग्रंथ है। इन्होंने शृंगार रस की कविता के अतिरिक्त शांतरस की भी कविता की, फिर कृष्ण जी की कथा लिखी, महारानी विक्टोरिया की जुबिली पर कुछ कविता की, एक ग्रंथ राग संबंधी बनाया और एक ग्रंथ में अन्योक्तियाँ कहीं। बलदेव ने कुछ गद्य भी लिखा है जिसमें इन्होंने अपने आलोचनात्मक विचार प्रकट किये हैं। इनकी कविता व्रज भाषा में है। एक राजा की प्रशंसा में लिखते हैं :—

" सागर सनेह सील सज्जन शिरोमनि त्यों,
हंस कैसो न्याव लोक लायक कै लेख्यो है।
गुन पहिचानिबे को कंचन कसौटी मनौ,
द्विज बलदेव विश्व विशद विशेख्यो है॥"

इत्यादि

बलदेव जी के एक पुत्र द्विज गंग के नाम से कविता करते थे। इनकी भी कविता अच्छी होती थी।

उक्त विषय के अन्य कवि

अन्य कवियों में पूरन, मोहन और गोविंद गिल्लाभाई के नाम स्मरणीय हैं। पूरन का वास्तविक नाम बालदत्त मिश्र था। यह वर्तमान मिश्रबंधु के पिता थे। मोहन नाम के कई कवि थे। एक ने शृंगार सागर लिखा है। इनकी रचना सानुप्रास है, जैसे :—

"चंद सो बदन चारु चंद्रमा सी हासी।
परि पूरन उमा सी खासी सुरति सोहाती है ॥"

गोविंद गिल्लाभाई गुजरात के रहने वाले थे और गुजराती और हिन्दी दोनों में कविता करते थे। इन्होंने हिन्दी में ३२ ग्रंथ बनाए हैं जिनमें कुछ के नाम ये हैं—विवेक विलास, परब्रह्मपचीसी, भक्तिकल्पद्रुम, शृंगार सरोजिनी, षट्ऋतु, अन्योक्ति गोविंद, इत्यादि। इनकी रचना देखिये :—

"बेनी को बिलोकि व्याल पेट को घिसत सदा,
मुख को बिलोकि इन्दु हीन कला करि है।
काया को विलोकि कलधौत परे पावक में,
स्रौन को निरखि सीप सागर में परि है॥"

पुराने ढंग के यह अच्छे कवि थे। आत्माराम नामक एक कवि थे जिन्होंने बिहारी सतसई का संस्कृत में पद्यमय अनुवाद किया।

धर्म और भक्ति की कविता-राम संबंधी

धर्म और भक्ति संबंधी कविता करने वालों में कुछ ने रामायण संबंधी ग्रंथ लिखे, कुछ ने कृष्ण संबंधी, कुछ ने भक्ति भाव संबंधी और कुछ ने अन्य ढंग की कविता की। सीतारामशरण भगवान प्रसाद ने रूपकला नाम से १३ ग्रंथों की रचना की है जिनमें ४ उर्दू के हैं। यह रामानंदी वैष्णव थे। इनका एक ग्रंथ मीरा बाई की जीवनी है। फिर सीता राम मानस पूजा आदि इनके ग्रंथ हैं। रामायण संबंधी कविता करने वालों में सहजराम और बलदेव दास के नाम स्मरणीय हैं। सहज राम की रचना प्रशंसनीय है। इन्होंने एक रामायण लिखी जो कविता, भाषा और विचार सभी दृष्टि से रामचरित मानस से मिलती है। इनकी चौपाइयाँ तथा

दोहे बहुत अच्छे बने हैं। इन्होंने एक प्रह्लाद चरित भी लिखा। यह ग्रंथ छोटा किंतु बड़ा उत्तम बना है। बलदेव दास ने अद्भुत रामायण के आधार पर जानकी विजय नामक ग्रंथ लिखा है। यह ग्रंथ भी रामचरित मानस ही के ढंग पर लिखा है और अधिकतर इसमें दोहे और चौपाइयों का प्रयोग हुआ है। इसकी कविता भी अच्छी है।

इस प्रसंग में रसिकेश और गोविंद कवि के नाम भी स्मरणीय हैं। रसिकेश का उपनाम रसिक बिहारी था जिन्होंने अंत में वैरागी होकर अपना नाम जानकी प्रसाद रख लिया। इन्होंने श्रीरामचंद्र की कथा अपने राम रसायन नामक ग्रंथ में लिखी है। यह ग्रंथ अच्छा है। कुल मिलाकर इनके रचे २५, २६ ग्रंथ हैं। इनमें एक काव्य सुधाकर है जिसमें रस, अलंकार इत्यादि का वर्णन दिया हुआ है। गोविंद कवि ने हनुमन्नाटक का अनुवाद विविध छंदों में किया है। इसमें श्रीरामचंद्र की कथा है। यह ग्रंथ भी अच्छा है।

कृष्ण संबंधी

कृष्ण संबंधी कविता करने वालो में लखनेस का नाम प्रसिद्ध है। इनका वास्तविक नाम लक्ष्मण प्रसाद था और यह रीवाँ राज के एक बड़े उच्च पदाधिकारी थे। इन्होंने कृष्ण जी की कथा रस तरंग नामक ग्रंथ में लिखी है। इस ग्रंथ में इन्होंने शृंगार रस की अच्छी कविता की है और इसमें अपनी आचार्यता भी दिखलाई है। इनका एक छंद देखिये :—

" कुंजनि मैं बन पुंजनि मैं अलि गुंजनि मैं सुभ सब्द सुहात हैं,
धेनु धनी, धरनी, धन, धाम मैं को बरनै लखनेस विख्यात हैं।
थालर जंगम जीवन को दिन जामिनि जानि न जात बिहात हैं,
ह्वै गयो कान्हमयी ब्रज है सब देखैं तहाँ नँदनंद दिखात हैं॥ "

वर्तमान समय के एक सर्वश्रेष्ठ कवि पंडित अयोध्या सिंह उपाध्याय हैं जो आज कल काशी विश्वविद्यालय के एक हिन्दी अध्यापक हैं। इन्होंने प्रिय प्रवास नामक एक महाकाव्य लिखा है जिसमें श्रीकृष्ण जी की कथा का एक अंश कहा गया है। यह एक बड़ा प्रसिद्ध ग्रंथ है। इसकी भाषा प्रायः संस्कृत ही है और इसके छंद भी संस्कृत ही के हैं। उसके ऊपर यह भिन्न तुकांत छंदों में है। इन सब बातों से यह ग्रंथ आधुनिक हिन्दी काव्य का एक ऐतिहासिक स्तम्भ है और इसका बहुत बड़ा महत्व है। इसके आरम्भ का पद देखिये :—

अयोध्या सिंह उपाध्याय

"दिवस का अवसान समीप था।
गगन था कुछ लोहित हो चला॥
तरु शिखा पर थी अबराजती।
कमलिनी कुल वल्लभ की प्रभा॥"

कृष्ण जी के वियोग में राधिका जी एक श्याम वर्ण फूल देख कर कहती हैं :—

"न स्वल्प आती तुझ में सुगंधि है।
तथापि सम्मानित सर्व काल में॥
तुझे करेगी ब्रज लोक दृष्टि में।
प्रसून तेरी यह श्यामलांगता॥"

प्रिय प्रवास की कविता सराहनीय है।

उपाध्याय जी को भाषा पर बड़ा अधिकार है। जब जैसा चाहते हैं तभी तैसा लिख लेते हैं। कवि तो यह बड़े उत्कृष्ट हैं ही गद्य भी बहुत अच्छा लिखते हैं। इनका गद्य दो प्रकार का होता है एक संस्कृतमय हिन्दी का और एक ठेठ हिन्दी का और

दोनों उत्तम होते हैं। ठेठ बोली में आपने दो उपन्यास ग्रंथ लिखे हैं—ठेठ हिन्दी का ठाट और अधखिला फूल।

पद्य में भी यह भिन्न भिन्न प्रकार की कविता करते हैं। इनकी कुछ रचना ब्रजभाषा में भी है और कुछ ठेठ हिन्दी में। महाकाव्य के अतिरिक्त इन्होंने छोटी छोटी कविताएं भी बड़ी अच्छी लिखी हैं। इनमें वर्तमान ढंग की कविता की पूरी झलक है। यह भिन्न भिन्न विषयों पर उत्तम कविता कर लेते हैं। "फूल और काँटा" नामक एक कविता में काँटा का स्वभाव दिखलाते हैं :—

"छेद कर काँटा किसी की उँगलियाँ,
फाड़ देता है किसी का वर वसन।
प्यार डूबी तितलियों का पर कतर,
भौंर का है बेध देता श्याम तन॥"

इनकी एक कविता 'आँख का आँसू है। इसमें लिखते हैं :—

"वह कलेजा हो कई टुकड़े अभी,
नाम सुनकर जो पिघल जाता नहीं।
फूट जाँये आँख वह जिसमें कभी,
प्रेम का आँसू उमड़ आता नहीं॥"

इन्होंने चोखे चौपदे आदि ठेठ बोली के भी ग्रंथ रचे हैं। चोखे चौपदे में प्रेम के संबंध में कहते हैं।

"जो किसी के भी नहीं बाँधे बँधे।
प्रेम बंधन से गये वे ही कसे॥
तीन लोकों में नहीं जो बस सके।
प्यारवाली आँख में वे ही बसे॥"

उपाध्याय जी कविता में अपना नाम हरिऔध रखते हैं।

महाभारत

राम कथा और कृष्ण कथा के अतिरिक्त महाभारत की कथा भी लिखी गई है। एक लेखक का नाम शरच्चंद्र सोम है जिन्होंने महाभारत का अनुवाद हिन्दी गद्य में किया है। और कई महाभारत निकल रहे हैं।

वृषभानु कुंवरि, श्री प्रताप बाला, रत्न कुंवरि बीबी

इस काल में भक्ति रस की कविता बहुत शिथिल हुई तथापि इस रस के भी कुछ कवि हुए जिनमें कुछ तो स्त्रियाँ हैं और कुछ महंत या सन्यासी इत्यादि। स्त्रियों में वृषभानु कुँवरि और जामसुता जाड़े चीजी श्री प्रताप बाला के नाम स्मरणीय हैं। ये दोनों महारानियां थीं। वृषभानुकुँवरि जी उर्छा राज की महारानी थीं। इनकी भक्तिमयी कविता अच्छी होती थी। यह भक्ति सीता और रामचंद्र की थी। इन्होंने ८, १० ग्रंथों की रचना की। श्री प्रताप बाला जी जोधपूर की महारानी थीं। इन्होंने भी भक्ति पूर्ण अच्छी कविता की है, जैसे :—

" दरस मोहिं देहु चतुरभुज श्याम।

करि किरपा करुना निधि मेरे सफल करौ सब काम॥
पाव पलक बिसरुँ नहिं तुमको याद करुँ नित नाम।
जामसुता को यही बीनती आनि करौ उरधाम॥ "

एक स्त्री कवि का नाम रत्न कुँवरि बीबी था। यह भी अच्छी कविता करती थीं और विद्वान भी थीं। इन्होंने श्रीकृष्ण जी की लीलाओं का वर्णन अपने प्रेम रत्न नामक ग्रंथ में किया है। रचना इनकी उत्तम है, देखिये :—

" भगत हृदय सुख दैन, प्रेम पूरि पावन परम।
लहत श्रवन सुनि बैन, भववारिधि तारन तरन॥"

इस समय के धर्म तथा भक्ति संबंधी साहित्य रचयिताओं में अधिकतर आर्य समाज तथा सनातन धर्म के उपदेशक हैं। ये उपदेशक साधारणतः तो व्याख्यान दाता थे अथवा हैं किन्तु बहुतों ने पुस्तकें अथवा लेख द्वारा भी जनता की सेवा की है। तुलसी राम शर्मा आर्य समाज के एक बड़े उपदेशक ने १०,११ पांडित्य पूर्ण ग्रंथों की रचना की है जिनमें अधिकतर वेद और उपनिषद् संबंधी हैं। इन्होंने दयानंद चरितामृत भी लिखा। स्वामी श्रद्धानंद एक प्रसिद्ध सन्यासी थे जिनकी मृत्यु हुए ३ वर्ष हुए। इन्होंने दो तीन ग्रंथों के अतिरिक्त कई निबंध लिखे। इनका एक पत्र भी निकलता था। पं० भीमसेन शर्मा वास्तव में बड़े पंडित और आर्य समाज के उपदेशक थे किन्तु पीछे सनातनधर्मी हो गए। इन्होंने दो पत्रों का सम्पादन भी किया है। इनका मत है कि हिन्दी संस्कृत से निकली हुई विशुद्ध हिन्दी होनी चाहिए और यह स्वयं ऐसी ही हिन्दी लिखते थे। देखिये :—

धर्मोपदेश इत्यादि

"जहाँ आत्मगौरव का अभाव है उस देश वा जाति का जातीय अभ्युत्थान होना भी असंभव सा ही जानो। क्योंकि जब आत्मगौरव का संस्कार मन व अन्तःकरण में जागता है तभी बाणी और शरीर से सम्बन्ध रखने वाले उच्च कर्तव्य पालन द्वारा जाति का अभ्युत्थान होता है।"

आर्यमुनी जी ने गीता प्रदीप आदि दो तीन ग्रंथों की रचना की है। भारत-धर्म-महामंडल के बड़े उपदेशक नंद किशोर शुक्ल ने अनेक ग्रंथ बनाए हैं, जैसे सनातन धर्म, उपनिषद का उपदेश, इत्यादि। इन्होंने राजतरंगिणी के कुछ अंश का अनुवाद भी किया है। इस ग्रंथ में काश्मीर देश का इतिहास है। ज्वाला प्रसाद मिश्र भी इस महामंडल के विद्वान उपदेशक थे और

इनको विद्या वारिधि की पदवी मिली थी। इन्होंने बहुत से ग्रंथ बनाए जिनमें अधिकतर अनुवाद और टीकाएँ हैं। इनकी लिखी हुई शुक्लयजुर्वेद, रामचरित मानस और बिहारी सतसई की टीकाएं प्रसिद्ध हैं। इन्होंने सीता वनबास नाटक भी लिखा।

देश के नेता

जिस प्रकार धार्मिक आंदोलन ने बहुत से लेखक उत्पन्न किये उसी प्रकार सामाजिक तथा राजनैतिक आंदोलनों ने भी अपने ढंग के लेखक उत्पन्न किए। पंडित मदन मोहन मालवीय और लाला लाजपत राय का नाम भारतीय नेताओं में परम प्रसिद्ध है। मालवीय जी ने कोई ग्रंथ तो नहीं लिखा और सत्य पूछिये तो उनको ग्रंथ लिखने का अवकाश ही कहाँ है किन्तु यह लेख अच्छे अच्छे लिखते हैं और इन्होंने कुछ समय तक हिन्दोस्तान नामक पत्र का उत्तमता के साथ सम्पादन भी किया। लाला जी का स्वर्गवास अभी पार ही साल हुआ है। इन्होंने भी अच्छे अच्छे लेख लिखे हैं और एक भारत वर्ष का इतिहास भी लिखा है और बहुत से नेता हिन्दी में लेख या पुस्तकें लिखा करते हैं और बहुतों की रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद कर दिया जाता है जैसे महात्मा गाँधी जी की रचनाओं का।

प्रताप नारायण मिश्र

आंदोलनों से संबंध रखने वाले प्रताप नारायण मिश्र एक प्रसिद्ध कवि थे। यह एक भारी देशभक्त थे और हिन्दी तथा हिन्दू जाति के प्रति विशेष प्रेम रखते थे। कहा भी है :—

" चहहु जु साँचो निज कल्यान, तौ सब मिलि भारत संतान।
जपौ निरंतर एक जबान, हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान॥ "

यह हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत, अंगरेज़ी और उर्दू फ़ारसी भी जानते थे। इन्होंने बहुत से ग्रंथों की रचना की, जैसे कलिप्रभाव

नाटक, गोसंकट नाटक, मन की लहर, श्रृंगार विलास, इत्यादि। यह गाय के प्रति श्रद्धा रखते थे और उसकी प्रशंसा करते हुए लिखते हैं :—

"को अस तुम बिन दूसर जेहिका गोबर लगे पवित्तर होय।"

इनकी भाषा कहीं कहीं ग्रामीण है। हँसी दिल्लगी की रचना भी मिश्र जी अच्छी कर लेते थे। इनकी रचना प्रशंसनीय है। मन की लहर नामक ग्रंथ में लिखते हैं :—

"झूठे झगड़ों से मेरा पिंड छुड़ाओ।
मुझ को प्रभु अपना सच्चा दास बनाओ॥"

तथा "निज हाथन सर्वस खोय चुके,
कहँ लौं दुख पै दुख ही भरिये।
हम आरत भारत बासिन पै,
अब दीन दयाल दया करिये॥"

मिश्र जी प्राचीन भक्तों के ढंग की भी अच्छी रचना करते थे, जैसे :—

"आगे रहे गनिका गज गीध सु तौ अब कोऊ दिखात नहीं हैं,
पाप परायन ताप भरे परताप समान न आन कहीं हैं।
हे सुख दायक प्रेम निधे जग यों तौ भले औ बुरे सबहीं हैं,
दीनदयाल औ दीन प्रभो तुमसे तुमहीं हमसे हमहीं हैं॥"

इनके बहुत से लोकप्रिय भजन लोग नित्य गाया करते हैं जैसे :—

"शरणागत पाल कृपाल प्रभो,
हमको एक आश तुम्हारी है।

तुम्हरे सम दूसर और कोऊ
नहिं दीनन को हितकारी है ॥ ”

इत्यादि

मिश्र जी पद्य के अतिरिक्त गद्य के भी प्रसिद्ध लेखक थे। इन्होंने ब्राह्मण नामक पत्र निकाला और फिर हिन्दोस्तान के सहायक संपादक हुए। इनके निबंध गंभीर विषय के कम होते थे। इनकी रचना शैली अपने ढंग की निराली है। इसमें बोल चाल की ग्रामीण भाषा है जो प्रभाव पूर्ण है। इनकी रचना में व्यंग और हास्य विशेष रूप से भरा है। ब्राह्मण में एक बार समझदार की मौत शीर्षक लेख में लिखा था :—

“ सच है ‘ सबतें भले हैं मूढ़ जिन्हें न व्यापै जगतगति ’ मज़े में पराई जमा गपक बैठना खुशामदियों से गप मारा करना जो कोई तिथ त्यौहार आ पड़ा तो गंगा में बदन धो आना पर गंगा पुत्र को चार पैसे देकर सेंत मेंत में धरम मूरत, धरमाऔतार का खिताब पाना संसार परमार्थ दोनों तो बन गए अब काहे को हैहै काहे की खैं खैं है। मुंह पर तो कोई कहने ही नहीं आता कि राजा साहेब कैसे रहे हैं पीठ पीछे तो लोग नवाब को भी गालियां देते हैं।”

मिश्र जी ने मौलिक रचनाओं के अतिरिक्त बहुत से अनुवाद लिखे हैं और दो संग्रह और एक उर्दू का ग्रंथ भी लिखा है।

मैथिली शरण गुप्त

यों तो प्रताप नारायण मिश्र ने जातीयता और देशभक्ति पूर्ण कविता की और अच्छी कविता की किंतु शांतिमय हिन्दी साहित्य में खलबली मचा देने वाली पुस्तक भारत भारती थी जिसे बाबू मैथिली शरण गुप्त ने लिखी। गुप्त जी ने ग्रंथ आरंभ करने के पहले ही प्रार्थना की थी :—

" मानस भवन में आय जन जिसकी उतारें आरती।
भगवान भारतवर्ष में गूँजे हमारी भारती॥ "

भगवान ने इनकी प्रार्थना ध्यान पूर्वक सुनी।

भारत भारती में भारत की प्राचीन तथा वर्तमान दशाओं का बड़ी प्रभाव पूर्ण भाषा में उत्साहवर्द्धक वर्णन है। किसका हृदय इसे पढ़ कर फूल न उठता होगा? इसमें भारत की दुर्दशा पढ़के किसकी आँख से आँसू न टपक पड़ेगा? इस ग्रंथ की भाषा खड़ी बोली कविता उत्तम, छंद मनोहर और रचना शैली लोकप्रिय है। एक स्थान पर लिखते हैं :—

" होकर निराश कभी न बैठो नित्य उद्योगी रहो,
सब देश हितकर कार्य में अन्योन्य सहयोगी रहो।
धर्मार्थ के भोगी रहो बस कर्म के योगी रहो,
रोगी रहो तो प्रेम रूपी रोग के रोगी रहो॥ "

भारत भारती के अतिरिक्त इन्होंने जयद्रथ वध, रंग में भंग, आदि कई ग्रंथों की रचना की है। जयद्रथ वध बहुत उत्तम ग्रंथ है। कविता की दृष्टि से यह भारत भारती से अच्छा जान पड़ता है। एक छंद देखिये :—

" है आज कैसा दिन न जाने देव गण अनुकूल हों।
रक्षा करे प्रभु मार्ग में जो शूल हों वे फूल हों॥
कुछ राज पाट न चाहिए पाऊँ न क्यों में त्रास ही।
हे उत्तरा के धन! रहो तुम उत्तरा के पास ही॥"

गुप्त जी ने कई छोटी छोटी कविताएँ लिखी हैं और हाल में कुछ बंगला कविता का उत्तम पद्यमय अनुवाद भी किया है। पाठ्य पुस्तकों में इनकी रचनाएं बहुधा रखी जाती हैं। मातृभूमि तथा कृषक संबंधी इन्होंने बड़े अच्छे हृदय ग्राही पद रचे हैं, जैसेः—

" जिसकी रज में लोट लोट कर बड़े हुए हैं।
घुटनों के बल सरक सरक कर खड़े हुए हैं।। "

इत्यादि

गुप्त जी ने खड़ी बोली को कविता के एक उच्च शिखर पर पहुँचा दिया है।

देशभक्ति पूर्ण कविता वर्तमान समय के अनेक युवक लिख रहे हैं किंतु उनका वर्णन असामयिक होगा।

जैसा ऊपर वर्णन हो चुका है इस समय में भिन्न भिन्न विषयों पर साहित्यिक रचना हुई और साहित्य के भिन्न भिन्न अंगों की वृद्धि तथा पुष्टि हुई। यहाँ पर विषय विचार से लेखकों को श्रेणी वद्ध करना बहुत ही कठिन है क्योंकि इस समय के कवियों तथा अन्य लेखकों में बहुतों ने भिन्न भिन्न विषयों पर रचनाएं की है। इनका वर्णन विविध विषय के लेखकों के साथ होगा, शेष को उनके मुख्य विषय के अनुसार श्रेणी वद्ध किया जायगा। पहले कविता की ओर ध्यान दीजिये।

रस, अलंकार, पिंगल, इत्यादि विषयक कविता

प्राचीन काल में रस, अलंकार, पिंगल विषयक बहुत से कवि हो गए थे किंतु अब उनकी संख्या सवेग घटने लगी। इस समय के ऐसे कवियों में केवल दो तीन के नाम प्रसिद्ध हैं जैसे नंद राम, ललित और भानु, नंद राम ने शृंगार दर्पण लिखा जिसमें रस भेद और भाव भेद का अच्छा वर्णन विविध छंदों में दिया है। इनकी कविता अच्छी और भाषा सीधी सादी तथा मधुर होती थी, जैसे :—

" नैन उघारिबे को मन होत न मोहन रूप निहारि कै आली "

ललित का नाम ललिता प्रसाद था। इन्होंने दिग्विजय विनोद नामक एक ग्रंथ लिखा है जिसमें नायिका भेद का वर्णन है। इसके

अतिरिक्त इन्होंने एक छोटा सा ग्रंथ जनक फुलवारी नामक लिखा है। इस ग्रंथ में विविध छंदों का प्रयोग हुआ है और यह रामलीला के लिए बनाया गया था। इनकी कविता भी अच्छी होती थी और भाषा मधुर, जैसे :—

"तोरिहौ कैसे प्रसून लला ये प्रसून हू ते अति कोमल गात हैं"

भानु पिंगल के आचार्य हैं। इनका वास्तविक नाम जगन्नाथ प्रसाद है। इनके रचे हुए छंद प्रभाकर, काव्य प्रभाकर, हिंदी काव्यालंकार इत्यादि अनेक ग्रंथ हैं जिनमें छंद प्रभाकर बड़ा ही लोकप्रिय है। काव्य प्रभाकर में छंद, नायिका भेद, भाव भेद इत्यादि बहुत विषयों का वर्णन है। इनकी कविता भी अच्छी होती थी, जैसे :—

"मातु लियो गर लाय लाल को तपन हिये की सियरानी"
"भानु निरखि तब बालकृष्ण छवि गोपि गईं घर हरखानी"

भानु जी पद्य के अतिरिक्त गद्य भी लिखते थे और हिन्दी के अतिरिक्त अन्य कई भाषाओं पर भी इनका अधिकार था।

रामायण ग्रंथ

भानु ने एक नवपंचामृत रामायण भी लिखी। सच पूछिये तो हिंदी साहित्य में रामायण ग्रंथ का लिखना कभी बंद ही नहीं हो सकता। न मौलिक ग्रंथ सही तो अनुवाद ही सही और वह भी नहीं तो टीका सही। बलिया में एक पंचदेव पांडे थे जिन्होंने पंचदेव रामायण बनाई, फिर गया के पत्तन लाल ने रोला रामायण लिखी और बनारस के छोटू राम ने राम कथा लिखी और ललित पूर के परमानंद ने प्रमोद रामायण, मंजुरामायण, मंजावली रामायण, इत्यादि की रचना की, इत्यादि इत्यादि।

भक्ति, धर्म इत्यादि विषय की कविता

राम और कृष्ण संबंधी तथा भक्ति, धर्म, ज्ञान संबंधी कवि इस समय में अधिक नहीं हुए और जो हुए भी वह अधिक प्रसिद्ध नहीं हैं। एक कवि स्वामी हरिसेवक साहब संत थे जो बलिया के रहने वाले कायस्थ थे और जिन्होंने अपने निवास स्थान का अच्छा परिचय भी दिया है :—

" जै जै जै वालमीक बलिया जो प्रगट कियो,
चारों दिशि खाई जाकी चौकी मुनीश्वर की ।
पूरब पराशर पश्चिम गंगा गर्ग दरदर भृगु,
दक्षिण हैं कपिल देव उत्तर दे कुलेश्वर की ॥"

इत्यादि

इन्होंने सेवक तरंग और सेवक बहार लिखा है। इनको योग शास्त्र का अच्छा ज्ञान था। इस विषय पर उदय पुर के गुमान सिंह ने बहुत ग्रंथ लिखे हैं, जैसे योगशतक इत्यादि। इन्होंने पातंजल सूत्र और भगवद् गीता की टीकाएं भी लिखी हैं और एक मोक्ष भुवन लिखा है। छपरा के शिवप्रकाश ने सतसंगविलास, रामगीता टीका, भगवत तत्व भास्कर आदि लिखा और शिव दयाल ने दशमस्कंध भागवत भाषा लिखी। फिर राम द्विज ने जानकी मंगल लिखा। इनकी कविता अच्छी और मधुर होती थी, एक कवि नृसिंहराम थे जिन्होंने संतनाम मुक्तावली लिखी। कहते भी हैं :—

" संत नाम मुकतावली निज हिय धारन हेत,
रची दास नरसिंह ने श्रद्धा भक्ति समेत।"

शृंगार रस की कविता

जिस प्रकार हिन्दी से धर्म विषयक कविता का पूर्णतया लोप होना असंभव सा है उसी प्रकार शृंगार रस की कविता का उठ जाना भी असंभव ही दीख पड़ता है। अतः इस वैज्ञानिक, व्यापारिक और गद्य काल

में भी इस रस की कविता हुई। हनुमान और त्रिलोकी नाथ जी ने इस विषय की अच्छी कविता की है। दोनों ने ब्रजभाषा में कविता की और दोनों की भाषा अच्छी और मधुर है। यह दोनों कवि प्रसिद्ध कवि घराने के थे। त्रिलोकी नाथ ने भुवनेश नाम से कविता की है। इनके रचे ग्रंथ भुवनेश भूषण और भुवनेश विलास आदि हैं। बस्ती में एक राजा ने इस विषय की अच्छी कविता की है। यह महेश नाम से कविता करते थे। इनका ग्रंथ शृंगार शतक है। कोई गोपी किसी काग की बोली सुन कर और उससे बहुत सी प्रतिज्ञा करती हुई कहती है :—

"सुख पिंजर पालि पढ़ाय घने गुन औगुन कोटि हरौं पै हरौं।
बिछुरे हरि मोहिं महेश मिलैं तोहिं काग ते हंस करौं पै करौं॥"

दो और कवियों ने साधारणतः अच्छी कविता की है। कवि द्विजराम ने नखशिख अच्छा लिखा है। उमादत्त ने भी रसमय कविता की है। इनकी रचना देखिये :—

"विषधर भारे नाग कारे नैन कामिनी के,
काटि छिपि जात हाय पलक पिटारे में।"

माधव कवि ने भी मनोहर कविता की है।

फेरन, मुरारिदास ब्रजराज

इस प्रसंग में पुराने ढंग के तीन और कवियों में नाम स्मरणीय हैं—फेरन, मुरारिदास, ब्रजराज। ये तीनों अच्छे कवि थे। फेरन ब्रह्मा की सृष्टि में असंगति दोष दिखलाते हुए कहते हैं :—

"फेरन फिरावत गुनीन नित नीच द्वार,
गुनन विहीन तिन्हैं बैठे ही भलो भयो।
कहाँ लौं गनाऊँ दोख तेरे एक आनन सों
नाम चतुरानन पै चूकतै चलो गयो।"

मुरारिदास कविराज थे और बूँदी में रहते थे। इनकी भाषा प्राकृत मिली ब्रजभाषा है। इन्हों ने एक डिंगल कोष भी लिखा है। ब्रजराज कवि का नाम युगलकिशोर मिश्र था यह प्रसिद्ध कवि लेखराज के पुत्र थे और ब्रजभाषा में अच्छी कविता करते थे। बूँदी के चंडीदान भी सानुप्रास अच्छी कविता करते थे।

बहुग्रंथ लेखक

अब विविध विषयों के बहुत से ग्रंथ लिखने वालों की ओर ध्यान दीजिए। इनमें पं० अम्बिकादत्त व्यास का नाम बहुत प्रसिद्ध है। यह गद्य और पद्य दोनों लिखते थे और संस्कृत में भी रचना करते थे। कुल मिला कर इन्होंने ७८ ग्रंथों की रचना की जिनमें चार नाटक हैं। एक ग्रंथ गद्य काव्य मीमांसा है जिससे इनकी विद्वता स्पष्ट है। इन्होंने विहारी विहार और विहारी चरित्र नामक ग्रंथ भी लिखे हैं। विहारी विहार में विहारी लाल के दोहों पर कुंडलियाँ लगाई गई हैं। इनके ग्रंथों में शिवविवाह, रेखा गणित, चिकित्सा चमत्कार, धर्म की धूम तथा सहस्रनाम रामायण इत्यादि भी हैं। व्यास जी का गद्य पद्य से अच्छा होता था। इनके गद्य की यह विशेषता थी कि वह सीधी सादी भाषा में तर्क के साथ लिखा रहता था। यह सनातन धर्म के उपदेशक थे। इनके गद्य का उदाहरण देखिये :—

"आँख खोलते ही चट नारायण का नाम ले कुछ आवश्यक कृत्य से निमट जै जै करते मन्दिर की ओर दौड़ पड़े हैं और वहाँ भीड़ की भीड़ जय ध्वनि कर रही है और शृंगारित प्रभु की मूर्ति का दर्शन हो रहा है, हम दर्शन तो एक वित्ते भर की मूर्ति का करते हैं पर न जानें क्यों उस समय सर्व व्यापक का साक्षात्कार होता है........"

परमानंद और शिवसंपति सुजान ने ३०, ३० से भी अधिक ग्रंथ लिखे हैं। परमानंद के ग्रंथ रामायण मानस तरंगिणी,

मंजु रामायण, मृगया चरित्र, नीति सारावली, रंभा शुक संवाद इत्यादि हैं और शिवसंपति सुजान के शिवसंपति सर्वस्व, नीति शतक, प्रयाग प्रपंच, राधिका उराहनो और शतमूर्ख प्रकाशिका इत्यादि हैं।

अन्य लेखक

और लेखकों में एक ब्रज थे जिनका नाम गोकुल था। और जो महाराज दिग्विजय सिंह के आश्रित थे। इन्होंने भामाविनोद, सुहृद्दोपदेश, दिग्विजय प्रकाश, चित्र कलाधर और एकादशी महात्म्य इत्यादि लिखे हैं। यह अच्छे कवि थे और सानुप्रास अच्छी कविता करते थे। जगमोहन सिंह ने श्यामास्वप्न, सज्जनाष्टक, सांख्य सूत्रों की टीका और मेघदूत इत्यादि लिखा है। राधा चरण गोस्वामी गद्य लेखक थे और इन्होंने बहुत सी पुस्तकें लिखीं जिनमें एक नाटक भी है और कुछ सामाजिक सुधार संबंधी हैं। एक और गोस्वामी जगदीश लाल थे जिन्होंने कई काव्य ग्रंथ लिखे, जैसे पदपद्मावली, नीति अष्टक, महावीराष्टक इत्यादि। यह भी साधारण ढंग की अच्छी कविता कर लेते थे, जैसे :—

"पावस पयान पिय सुनि कै सयानि आज,
अंबुज अनूप दृग बुंद बरसावैरी।"

विहार के एक केशवराम भट्ट थे जिन्होंने विहार बंधु नामक एक पत्र भी निकाला था। इन्होंने विद्या की नींव और सज्जाद संबुल नाटक तथा हिन्दी व्याकरण इत्यादि लिखा है। यह अनुवादक भी थे। अजयगढ़ के महाराजा रणजोरसिंह ने संतान शिक्षा, गृहविद्या, संगीत संग्रह और फ़ायदे ज़हर आदि १६ ग्रंथ लिखे हैं।

मिरज़ापूर के बद्री नारायण चौधरी गद्य और पद्य दोनों के अच्छे लेखक थे। इन्होंने २८, २९ ग्रंथ लिखे हैं जिनमें कुछ के नाम

थे हैं — भारत सौभाग्य नाटक, मन की मौज, भारत वधाई, वृद्ध विलाप प्रहसन इत्यादि। लिखते हैं :—

"पटरानी नृप सिंधु की त्रिपथ गामिनी नाम
तुहिं भगवति भागीरथी बारहिं बार प्रनाम॥

तथा जय जय भारत भूमि भवानी।
जाकी सुयश पताका जग के दस हूँ दिसि फहरानी।"

इत्यादि

यह कविता में अपना नाम प्रेमघन रखते थे। जैसे :—

"कहौ प्रेमघन मन की बातें कैसे किसे सुनाऊँ।"

गदाधर जी ने भी गद्य पद्य दोनों की रचना की है। इनके ग्रंथ देव दर्शन स्तोत्र, काव्यकल्पद्रुम, नारी चिकित्सा इत्यादि हैं। भगवानदीन खत्री भी गद्य पद्य दोनों के लेखक हैं। इन्होंने अनुवाद भी किये हैं। नाथूराम शंकर शर्मा एक प्रसिद्ध कवि हैं। इन्होंने बाल्यावस्था ही से कविता की ओर ध्यान दिया। यह विविध विषयों पर अच्छी कविता कर लेते हैं। अनुरागरत्न, शंकर सरोज, वायस विजय आदि इनके ग्रंथ हैं। इनकी रचना देखिये :—

"जो भय मान धर्म धरते हैं, शंकर कर्म योग करते हैं,
वे विवेक वारिधि बड़ भागी, बनते हैं उस प्रभु के प्यारे।
जिस अविनाशी से डरते हैं, भूत देव जड़ चेतन सारे॥"

तथा "चलाना सदुद्योग से जीविका, दिखा कर्म काले कमाना नहीं
न चूको मिलो शंकरानंद से, निरे तर्क के गीत गाना नहीं"

रामकृष्ण वर्मा ने १५, १६ और रामनाथ जी कवि राव ने ११ ग्रंथ बनाए हैं। वर्मा जी गद्य और पद्य दोनों लिखते थे। इन्होंने अच्छे अच्छे नाटक भी रचे हैं और कुछ अनुवाद भी किए हैं। इनके ग्रंथ कृष्णाकुमारी नाटक, वीर नारी, ईसाई मत खंडन और भूतों का

मकान इत्यादि हैं। कविराव जी के ग्रंथ राम नीति, सती चरित्र, शिवाष्टक इत्यदि हैं। प्रसिद्ध कवि लेखराज के एक पुत्र व्रजराज कवि का वर्णन हो चुका है। अब एक और पुत्र का वर्णन होगा जिनका कविता का नाम द्विजराज और वास्तविक नाम लाल विहारी मिश्र था। यह उत्कृष्ट कविता करते थे और मधुर अनुप्रास युक्त भाषा का प्रयोग करते थे। जैसे :—

"फरकै लगीं खंजन सी अँखियाँ भरि भावन भौंहैं मरोरै लगीं"

इन्होंने दुर्गास्तुति, श्रीरामचंद्र नखशिख और प्यारी जू को शिखनख, इत्यादि ग्रंथ लिखे हैं। जानकी प्रसाद पँवार भी उत्कृष्ट कविता करते थे और अलंकृत भाषा लिखते थे। इन्होंने रामनिवास रामायण और भगवती विनय इत्यादि ग्रंथ लिखे हैं। बहुग्रंथ लेखकों में प्रसिद्ध पंडित सुधाकार द्विवेदी का भी नाम है। इन्होंने थोड़ी कविता भी की है। इनके रचे हुए १७ ग्रंथ हैं। यह सरल हिन्दी के पक्षपाती थे।

अब हम वर्तमान समय के तीन प्रसिद्ध कवियों की ओर ध्यान देंगे—श्रीधार पाठक, विशाल कवि और रत्नाकर।

श्रीधर पाठक, विशाल, रत्नाकर

पंडित श्रीधर पाठक एक उत्कृष्ट कवि थे जो व्रजभाषा और खड़ी बोली दोनों में बड़ी अच्छी कविता करते थे। इनका स्वर्गवास अभी हाल ही में हुआ है। इन्होंने कुछ गद्य भी लिखा है और वह भी अच्छा है। इनकी रचना में दो विशेषताएँ द्रष्टव्य हैं। एक तो इन्होंने मौलिक रचना के अतिरिक्त अनुवाद बहुत अधिक किया है और दूसरे विषयों के संबंध में प्राचीन प्रथा को बिलकुल छोड़ दिया है। इनके अनुवाद अँगरेज़ी ग्रंथ तथा संस्कृत कविता से हैं। अँगरेज़ी का अनुवाद खड़ी बोली में और संस्कृत का व्रजभाषा में किया है। इनके अनुवाद हैं तो अनुवाद ही और सच्चे अनुवाद हैं तथापि वे स्वतंत्र रचना से कम नहीं मालूम होते। इनके रचे तथा अनुवादित छोटे छोटे बहुत से ग्रंथ हैं। गोल्डस्मिथ

के तीन ग्रंथों का इन्होंने अनुवाद किया है और बहुत उत्तम अनुवाद किया है।

पाठक जी की मौलिक रचनाएँ भी अच्छी हैं। प्राकृत सौंदर्य की ओर इनका विशेष ध्यान रहता था। काश्मीर के वर्णन में लिखते हैं :—

" प्रकृति यहाँ एकान्त बैठि निज रूप संवारति।
पल पल पलटति भेस छनिक छवि छिन छिन धारति॥
विमल अंबु सर मुकुरन मँह मुख बिम्ब निहारति।
अपनी छवि पै मोहि आप ही तन मन वारति॥"

पाठक जी ने प्राचीन प्रणाली का परित्याग करके अपनी कविता में साधारण जीवन की बातों का विशद वर्णन किया है। कह सकते हैं कि इनकी रचाएँ अँगरेज़ी ढंग की हैं। इन्होंने सामाजिक सुधार की ओर भी ध्यान दिया।

विशाल कवि का वास्तविक नाम भैरव प्रसाद था। इन्होंने बहुत सी फुटकर रचनाएँ की हैं। इनकी कुछ कविता शृंगार रस की हैं कुछ अलंकार और नायिका भेद की है और कुछ प्रशंसात्मक है। इन्होंने शिव जी की स्तुति का भी एक अच्छा ग्रंथ बनाया और बहुत से फुटकर विषयों पर रचना की। इनकी रचना में अश्लीलता की मात्रा बहुत है। इन्होंने हास्य रस की भी अच्छी कविता की है। शिव जी को संबोधन करके कहते हैं :—

" अँगरेज़ी पढ़ी जब सों तब सों हमरो तुमपै बिसवास नहीं।
तुम हौ कि नहीं यहै सोचो करैं परमान मिलै परकाश नहीं॥"

रत्नाकर जी का वास्तविक नाम जगन्नाथ दास है। यह वर्तमान समय में ब्रजभाषा के कवि हैं। पहले यह उर्दू में कविता करते थे। इन्होंने हरिश्चंद्र, साहित्य रत्नाकर, हिंडोला आदि ग्रंथ लिखे।

उसके बाद विहारी लाल की सतसई की बड़ी वृहत् और उत्तम टीका निकाली जिसमें इन्होंने बड़ा परिश्रम किया। हाल में इनका एक महाकाव्य गंगावतरण नामक निकला है। इसकी कविता सानुप्रास तथा प्रशंसनीय है। जैसेः—

" सीतल सुखद समीर धीर परिमल बगरावत।
कूजत विविध विहंग मधुप गूँजत मन भावत॥
वह सुगंध वह रंग ढंग की लखि टटकाई।
लगति चित्र सी नंदनादि बन की चटकाई॥ "

इस समय साहित्यकारों का वर्णन बड़े अच्छे ढंग से शिवसिंह सेगर ने अपने शिव सिंह सरोज नामक प्रसिद्ध ग्रंथ में दिया है। यह ग्रंथ बड़ा ही उपयोगी है। इसमें प्रायः सहस्र कवियों का नाम और उनका समय बतला कर उनकी कविता का उदाहरण दिया हुआ है। कवियों का थोड़ा सा वर्णन भी दे दिया है। देव कष्ठजिह्वा के संबंध में लिखा है :—

शिवसिंह सेंगर इत्यादि

" देवकाठ जिह्वा स्वामी काशीस्थ

यह महाराज पण्डितराज षट् शास्त्र के वक्ता थे। इन्होंने प्रथम संस्कृत काशी जी में पढ़ी, दैवयोग से एक बार अपने गुरु से बाद कर बैठे। पीछे पछताय काष्ठ की जीभ मुँह में डाल बोलना बंद कर दिया। पाटी में लिख के बातचीत करते थे। इन्हीं दिनों श्रीमान् महाराज ईश्वरी नारायण सिंह काशी नरेश ने उनसे उपदेश ले रामनगर में टिकाया। तब इन महाराज ने भाषा में विनयामृत इत्यादि नाना ग्रंथ बनाए। इन्हीं के पद आज तक काशीनरेश की सभा में गाए जाते हैं "

फिर इनकी रचना के उदाहरण स्वरूप दो छन्द ८ पंक्तियों के दिये हैं:—

"जगमंगल सियजू के पद हैं" इत्यादि

शिवसिंह सेंगर स्वयं भी कवि थे किन्तु कविता इनकी साधारण है। इसके अतिरिक्त यह गद्य भी लिखते थे और इन्होंने दो संस्कृत ग्रंथों का गद्य में अनुवाद किया है।

इनके पहले ठाकुर प्रसाद त्रिपाठी ने रस चंद्रोदय लिखा था जिसमें ढाईसौ के लगभग कवियों की कविताओं का संग्रह है, फिर गोकुल प्रसाद ने दिग्विजय भूषण लिखा जिसमें दो सौ के लगभग कवियों की कविताओं का संग्रह है। शिवसिंह सेंगर के बाद साहित्य के इतिहास के ढंग की कुछ पुस्तकें निकलीं। सर जॉर्ज ग्रियर्सन ने मॉडर्न वर्नाक्यूलर लिट्रेचर आफ़ हिन्दुस्तान अर्थात् भारतवर्ष का आधुनिक भाषा साहित्य लिखा और पं० नकछेद तिवारी ने कविकीर्ति कलानिधि लिखा। यह दोनों ग्रंथ मुख्यतः शिवसिंह सरोज ही के आधार पर लिखे गए थे। तिवारी जी कविता भी करते थे और कविता में अपना नाम अजान रखते थे। इन्होंने एक भँड़ौआ संग्रह भी निकाला और एक लछिराम की जीवनी लिखी। पद्य के अतिरिक्त यह गद्य भी लिखते थे। ग्रियर्सन साहेब एक अंग्रेज़ थे जिन्हें हिन्दी से विशेष प्रेम था। इन्होंने रामचरित मानस तथा बिहारी सतसई का संपादन किया और मैथिली भाषा का व्याकरण तथा बिहारी बोलियों का व्याकरण बनाया। फिर और भी ग्रंथ लिखे। व्याकरण लेखकों में हॉर्नली, अयोध्या प्रसाद खत्री और कामता प्रसाद गुरु के नाम भी प्रसिद्ध हैं। पहले दोनों का वर्णन आगे होगा। कामता प्रसाद सागर ज़िला के ब्राह्मण हैं। इनका व्याकरण बड़ा प्रसिद्ध है। इन्होंने गद्य और पद्य दोनों लिखा है। पद्य इनका पहले ब्रजभाषा में होता था फिर खड़ी बोली में होने लगा। इनका एक छंद देखिये :—

"प्रेमबन्धन जन्म लय का सार है।
प्रेमबन्धन देश का उद्धार है॥
प्रेमबन्धन देवकी जयसिंह का।
तोप से भी रिपु न खंडित कर सका॥"

अंगरेज़ लेखक

इस समय ग्रियर्सन साहेब के अतिरिक्त और अंगरेज़ों ने भी हिन्दी की ओर विशेष ध्यान दिया। एक डॉक्टर रुडॉल्फ हॉर्नली थे जिन्हें सी० आई० ई० की पदवी मिली थी। इनका जन्म भारत वर्ष ही में हुआ था। भाषा की उत्पत्ति तथा उसके व्याकरण के संबन्ध में इनका कथन प्रामाणिक समझा जाता है। इन्होंने पृथ्वीराज रासो का सम्पादन किया और बिहारी भाषा का कोष लिखा। एक फ्रेडरिक पिंकॉट थे जिन्हें हिन्दी से विशेष प्रेम था इन्होंने कुछ पुस्तकें स्वयं लिखीं और कुछ सम्पादित कीं। एक और अंगरेज़ था जिसका नामक जॉन क्रिस्चियन था। इसने मुक्ति मुक्तावली नामक ग्रंथ हिन्दी में लिखा। इसमें ईसामसीह की जीवनी तथा ईसाई भजन दिये हुए हैं। एक बेट साहब थे जिन्होंने एक कोष लिखा है।

कोषकार

हॉर्नली ने बिहारी भाषा का कोष लिखा। इनके अतिरिक्त और भी कोषकार हुए। मुरारिदास ने डिंगल कोष लिखा और लक्ष्मीनारायण सिंह ने तैलंग-बोध लिखा जिसमें तैलंगी शब्दों का हिन्दी में अर्थ दिया है। फिर गौरीदत्त ने गौरी कोष लिखा। वर्तमान समय में बहुत से कोष निकल रहे हैं। बेट साहेब ने एक कोष लिखा है। जिसमें हिन्दी शब्दों का अंगरेज़ी में अर्थ दिया है। किंतु सब से प्रसिद्ध कोष हिन्दी शब्द सागर है जो हाल ही में समाप्त हुआ है। इसकी रचना में कई आदमियों का भाग है किंतु सम्पादक बाबू श्याम सुन्दर दास हैं। इन्होंने हिन्दी का वैज्ञानिक कोष भी

सम्पादित किया है और गद्य में साहित्य समालोचक आदि बड़ी अच्छी पुस्तकें लिखी हैं। फिर हाल ही में सटीक रामचरित मानस भी संपादित किया है। इनका गद्य विचारपूर्ण किंतु साधारण शैली का है। इन्होंने हिन्दी का और ढंग से भी बड़ा उपकार किया है।

हिन्दी के एक और प्रसिद्ध उपकारक राजा रामपाल सिंह थे।

हिन्दी के अन्य उपकारक

इन्होंने हिन्दी और फ़ारसी में कविता भी की है। यह एक समाचार पत्र भी निकालते थे। कुछ उपकारकों ने हिन्दी भाषा तथा नागरी लिपि इत्यादि का प्रचार करके हिन्दी का उपकार किया। इनमें अयोध्या प्रसाद खत्री और गौरी दत्त के नाम विशेष स्मरणीय हैं। अयोध्या प्रसाद बलिया के रहने वाले थे। इन्हों ने खड़ी बोली का प्रचार बड़ो प्रबलता के साथ किया यहां तक कि इस संबंध में इंगलैंड में भी एक लेख छपवाया। फिर एक हिन्दी व्याकरण भी निकाला। इनका परिश्रम सराहनीय था। गौरी दत्त नागरी लिपि के बड़े भारी प्रचारक थे और उसके लिए बड़ा परिश्रम करते थे। इन्होंने एक गौरी कोष बनाया और स्त्री शिक्षा पर पुस्तकें लिखीं। इनका गद्य अच्छा होता था। कुछ लोगों ने पुरातत्व की ओर ध्यान देकर साहित्य का उपकार किया है जैसे मोहन लाल विष्णु लाल पांड्या तथा राय बहादुर हीरा लाल। पांड्या जी ने १२ पुस्तकें लिखी हैं और हीरा लाल जी ने ६। फिर कुछ लोगों ने शिक्षालयों के लिए पाठ्य पुस्तकें बना कर भाषा का उपकार किया जैसे पं० विनायक राव। इन्होंने २० पुस्तकें लिखीं जो मुख्यतः विद्यार्थियों के लिए हैं। इनकी बनाई रामचरित मानस की टीका प्रसिद्ध है जो विनायकी टीका कहलाती है। इन्होंने कुछ पद्य भी रचे हैं। देखिये :—

" प्रसन्नता जो न लही सुराज से।
गही न ग्लानी बन बास दुःख से॥
मुखच्छवी श्री रघुनाथ की अहो।
हमैं सदा सुंदर मंगलीय हो॥"

तुलसीदास ने लिखा थाः—

" प्रसन्नतां या न गताऽभिषेकतस्तथा न मम्लौ वनवास दुःखतः
मुखाम्बुज श्रीरघुनंदनस्य में सदाऽस्तु सा मंजुल मंगलप्रदा "

पं० लक्ष्मी शंकर मिश्र ने गणित कौमुदी आदि अनेक पुस्तकें शिक्षा विभाग के लिए लिखीं। पंचदेव पांडे ने भी बहुत पाठ्य पुस्तकें बनाईं। वर्तमान समय में पाठ्य पुस्तक लेखक बहुत से हैं।

अब साहित्य के और अंगों की ओर ध्यान देना चाहिए।

साहित्य के अन्य अंग उपन्यास

दैव योग से हिन्दी के कुछ बड़े बड़े लेखक प्रसिद्ध संपादक रहे हैं या अब भी हैं जिन्होंने भिन्न भिन्न विषयों पर रचना की। इनका वर्णन सब से अंत में किया जायगा। इस स्थान पर ग्रन्थ रचयिताओं की ओर ध्यान दीजिये। पहले उपन्यासकारों को लीजिये। वर्तमान समय में बहुत से उपन्यास निकले हैं और रोज़ निकल रहे हैं। इनमें कुछ मौलिक और कुछ अनुवाद हैं और कुछ अन्य उपन्यासों के आधार पर लिखे गए हैं। उपन्यास अथवा नवन्यास लेखकों में प्रेम चंद जी का नाम सब से प्रसिद्ध है। इन्होंने कई उपान्यास लिखे हैं जिनमें सेवा सदन, प्रेमाश्रम और रंग भूमि बहुत प्रसिद्ध हैं। इनके उपन्यास विशेषतः सामाजिक होते हैं। प्रेम चंद का चरित्र चित्रण बहुत अच्छा होता है और यह मनुष्य को भली भांति समझते हैं। इनकी भाषा पढ़ने में अच्छी साधारण बोलचाल की उर्दू मिली होती है। उपन्यास के अतिरिक्त इन्होंने गल्प अर्थात्

छोटी छोटी कहानियाँ भी लिखी हैं जो अच्छी हैं और फिर नाटक भी लिखे हैं।

वर्तमान समय के प्रसिद्ध कवि अयोध्या सिंह उपाध्याय ने भी उपन्यास रचना की है और ठेठ बोली का ठाट और अधखिला फूल नामक प्रसिद्ध ग्रंथ लिखे हैं।

देवकी नंदन खत्री ने चंद्रकांता नामक बृहत् उपन्यास लिख कर बड़ा नाम पैदा किया। यह उपन्यास एक निराला उपन्यास है क्योंकि इसमें सम्भव असम्भव तथा प्राकृतिक अप्राकृतिक या मानुषी और अतिमानुष बातों और घटनाओं का मनोहर संयोग है। यह ग्रंथ बड़ा लोकप्रिय है। इन्होंने बहुत से उपन्यास लिखे हैं।

ग़ाज़ीपूर के गोपाल राम भी अच्छे और प्रसिद्ध उपन्यास लेखक हैं। इन्होंने चतुर चंचला, माधवी कंकण और नए बाबू इत्यादि ग्रंथ लिखे हैं। इनकी शैली में स्थान स्थान पर हास्य, व्यंग और गांभीर्य के अच्छे उदाहरण मिलते हैं। इनकी भाषा बोल चाल की और सजीव है। अर्थ के संबंध में लिखते हैं :—

"तुम अकल के रासभ या बुद्धि के बैल हो तो भी अर्थ के माहात्म्य से लोग तुमको विचक्षणबुद्धिसम्पन्न या प्रतिभा का अवतार कह कर आदर करेंगे। लक्ष्मी की कृपा से तुम्हारे गौरव की सीमा नहीं रहेगी। तुम्हारे चारों ओर अनेक ग्रह उपग्रह आ जुटेंगे और तुमको केन्द्र बना कर एक नया सौर जगत रच डालेंगे ......" अंत में लिखते हैं :—"अतएव साबित हुआ कि अर्थ के सिवाय और किसी का अस्तित्व नहीं है। कम समझ द्वैतवादी कह सकते हैं कि अर्थ और भगवान दोनों हैं। पर मैं तो अद्वैतवाद लेकर दुनियां में उतरा हूँ इस कारण मैं दोनों का अस्तित्व नहीं मानूंगा। कहूँगा कि अर्थ ही हैं, भगवान नहीं हैं।"

यह कविता भी करते हैं और इनके रचे कई काव्य ग्रंथ हैं। कुल मिलाकर इन्होंने १०० के लगभग पुस्तकें लिखी हैं।

उपन्यासों के अनुवादकों ने भी इस समय में बड़ा परिश्रम किया है। अनुवादकों में रूप नारायण पांडे, जनार्दन झा, रामचंद्र शुक्ल और गांगा प्रसाद (जी० पी०) श्रीवास्तव इत्यादि प्रसिद्ध हैं। पांडे जी इतने बड़े भारी अनुवादक हैं कि इन्होंने अनेक नाटकों, उपन्यासों तथा गल्पों का अनुवाद कर डाला है। यह मुख्यतः बंगला भाषा के ग्रंथों का अनुवाद करते हैं। इन्होंने पत्रिका संपादन का काम भी बहुत किया है और अब तक कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त पांडे जी पद्य भी लिखते हैं और पद्य में भी अनुवाद करते हैं। इनकी अभिलाषा शीर्षक कविता में किसी व्यक्ति का वचन अपने प्रेम पात्र के प्रति सुनिये :—

" जो मैं होऊँ स्वच्छ सरोवर मीठे जल का,
तो तुम रखना रूप प्रफुल्लित अमल कमल का।
नीलाकाश अनंत बीच जो मैं मिल जाऊँ,
निकलंक नव इन्दु रूप में तुमको पाऊँ॥ "

इन्होंने कुल मिलाकर साठ सत्तर ग्रंथ तो अवश्य लिखे हैं। जनार्दन झा ने स्वर्णलता (अनुवाद) इत्यादि ग्रंथ लिखे हैं।

रामचंद्र शुक्ल हिन्दी के एक प्रसिद्ध लेखक हैं। इन्होंने बंगला भाषा के शशांक इत्यादि उपन्यासों का अनुवाद किया है और बहुत से अंगरेज़ी ग्रंथों का भी अनुवाद किया है जो उपन्यास नहीं हैं जैसे कल्पना का आनंद। यह एडीसन के एक बड़े लेख का अनुवाद है। शुक्ल जी पद्य रचना भी करते हैं और गद्य में निबंध भी अच्छे अच्छे लिखते हैं। एक प्रार्थना के छंद में लिखते हैं :—

" पामर चकोर क्या चंद्र को दे सकता है कुछ कभी ?
या दिनकर का उपकार कुछ कर सकता है कमल भी ?"

इनका गद्य विशुद्ध हिन्दी में होता है और यह गंभीर भाव का गद्य लिखते हैं जिसमें विचार भरे रहते हैं। इनकी रचना देखिये :—

" काव्य में 'आलंबन' ही मुख्य है। यदि कवि ने ऐसी वस्तुओं और व्यापारों को अपने शब्द-चित्र द्वारा सामने उपस्थित कर दिया जिनसे श्रोता या पाठक के भाव जाग्रत होते हैं तो वह एक प्रकार से अपना काम कर चुका। संसार की प्रत्येक भाषा में इस प्रकार के काव्य वर्तमान हैं जिनमें भावों को प्रदर्शित करने वाले पात्र अर्थात् 'आश्रय' की योजना नहीं की गई है। केवल ऐसी वस्तुएँ और व्यापार सामने रख दिये हैं जिन से श्रोता या पाठक ही भाव का अनुभव करते हैं।"

गंगा प्रसाद श्रीवास्तव ने प्राण नाथ का अनुवाद किया है और कुछ गल्प भी लिखा है।

एक गदाधर सिंह थे जिन्होंने ने दुर्गेश नंदिनी इत्यादि ग्रंथों का अनुवाद किया है।

उपन्यासों के अतिरिक्त गल्प भी बहुत लिखे गए हैं और बहुत से गल्पों के अनुवाद भी हुए हैं। प्रसिद्ध उपन्यासकार प्रेम चंद ने प्रेम प्रसून आदि कई गल्प लिखे हैं। इनका एक संग्रह प्रेम द्वादशी नाम से निकला है। पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी ने अद्भुत आलाप नामक गल्प लिखा है। फिर गंगा प्रसाद श्री वास्तव ने भी लम्बी दाढ़ी इत्यादि गल्प लिखे हैं। इनकी रचना हास्यरस पूर्ण होती है। अनुवादकों में यहाँ भी रूप नारायण पांडे प्रसिद्ध हैं। इन्होंने गल्प गुच्छ इत्यादि ग्रंथों के अनुवाद किए हैं।

गल्प

इस समय में कुछ अच्छी अच्छी जीवनियां भी लिखी गई हैं। जीवनी लेखकों में रामशंकर व्यास, शिवनंदन सहाय और भानु

प्रताप तिवारी आदि के नाम प्रसिद्ध हैं। व्यास जी नैपोलियन की जीवनी और दुर्गा प्रसाद का जीवन चरित्र लिखा है। इनके और भी ग्रंथ हैं और इन्होंने पत्र संपादन का काम भी किया है। शिवनंदन सहाय एक प्रसिद्ध लेखक हैं जिन्हों ने हरिश्चंद्र जीवन चरित्र नामक बहुत अच्छा ग्रंथ लिखा है। इसके अतिरिक्त इन्होंने तुलसी दास की जीवनी और अन्य लोगों की जीवनी भी लिखी है। जीवनियों के अतिरिक्त इनके लिखे और ग्रंथ भी हैं जैसे बंगाल का इतिहास। यह कविता भी करते थे और कृष्ण सुदामा आदि काव्य ग्रंथ लिखे हैं। इनके रचे नाटक भी अच्छे हैं। इनका सुदामा नाटक गद्य और पद्य मिली भाषा में है। हिन्दी के अतिरिक्त उर्दू में भी यह पद्य रचना करते हैं। तिवारी जी ने भी बहुत सी जीवनियाँ लिखी हैं जैसे कबीर साहब की, भानुप्रताप की, इत्यादि। इन्होंने बिहारी सतसई और तुलसी सतसई की टीकाएँ भी लिखी हैं।

इतिहास

इतिहास लेखकों में लाला लाजपत राय और शिवनंदन सहाय का नाम आचुका है। अब मुंशी देवी प्रसाद और राय बहादुर गौरी शंकर हीरा चंद ओझा का वर्णन होगा। इन दोनों लेखकों ने हिन्दी साहित्य के इतिहास भाग की बड़ी पूर्ति की है। मुंशी देवी प्रसाद ने इतिहास के बहुत से ग्रंथ लिखे हैं और बहुत सी जीवनियां भी लिखी हैं। इसके अतिरिक्त इन्होंने दो काव्य संग्रह भी निकाले। कुल मिलाकर इन्होंने पचासों ग्रंथ लिख डाले हैं। हिन्दी गद्य लिखने के पहले यह उर्दू गद्य तथा पद्य में रचना करते थे। इनके हिन्दी गद्य में उर्दू का प्रभाव स्पष्ट दीख पड़ता है। इनका गद्य सरल बोल चाल की भाषा में होता था जिसमें यह मुहाविरों का अच्छा प्रयोग करते थे। इनका गद्य बिलकुल स्वाभाविक मालूम होता है, जैसे :—

"उस सिंहासन पर एक भाग्यवान् पुरुष पाँव पर पाँव रक्खे बैठा था।" "न वह ज़माना है और न कोई आदमी ही उनके ज़माने का ज़िन्दा रहा है, लेकिन बाई साहब का नाम सब छोटे बड़ों की ज़बान पर जगह पकड़ गया है।"

ओझा जी ने भी कई ऐतिहासिक ग्रंथ लिखे हैं और कर्नल टॉड का जीवन चरित्र भी लिखा है। ओझा जी पुरातत्व के भारी विद्वान हैं।

एक प्रसिद्ध लेखक पं० मन्नन द्विवेदी थे जिनको काल ने ३१ ही वर्ष इस पृथ्वीतल पर रहने दिया। इसमें संदेह नहीं कि इनकी रचना जो कुछ है वह बड़ी सराहनीय है और जो कुछ होती वह भी सराहनीय होती। किन्तु थोड़ा लिखने पर भी इन्होंने अच्छा नाम पैदा कर लिया है। इतिहास संबंधी इन्होंने मुसलमानी राज्य का इतिहास लिखा है। यह बड़ा अच्छा ग्रंथ है और इसकी भाषा सुंदर सजीव और प्रभावपूर्ण है। इनकी शैली सरल और स्वाभाविक है। यह अपने गद्य में मुहाविरों का अच्छा प्रयोग करते थे और उर्दू का अधिक मिश्रण रखते थे। इनके गद्य का उदाहरण देखिये :—

"ऐसे देवताओं के लिए मौत भी एक मज़ाक का सामान है। भीष्म पितामह ने शरशय्या पर धर्मोपदेश दिये। हज़रत मसीह ने सूली पर भी अपने प्रतिवादियों के लिये प्रार्थना की, महर्षि सुकरात ने आनंद से विष का प्याला मुंह में लगाया, रामतीर्थ जी महाराज ने सच्चे हिन्दू की तरह भक्ति से अपना शरीर गंगा मैया को भेंट कर दिया।"

द्विवेदी जी ने एक उपन्यास भी लिखा है और कुछ कविता भी की है।

नीति, राजनीति तथा समाज शास्त्र और अर्थ शास्त्र विषयक पुस्तकें भी वर्त्तमान समय में बहुत निकल रही हैं। फिर धर्म शास्त्र और वैद्यक पर भी बहुत से ग्रंथ निकले हैं। दामोदर सतवलेकर नामक एक प्रसिद्ध लेखक ने बहुत से ग्रंथ-लिख डाले हैं जिनका संबंध विशेषतः वेदों और उपनिषदों से है, जैसे वैदिक सभ्यता, ऋग्वेद में रुद्र देवता, और केन उपनिषद, इत्यादि। इन्होंने वैद्यक पर वैदिक सर्प विद्या इत्यादि ग्रंथ लिखा है। वैद्यक पर एक महिला हेमंत कुमारी देवी ने संक्षिप्त स्वास्थ्य रक्षा और संक्षिप्त शरीर विज्ञान नामक ग्रंथों की रचना की है। संक्षिप्त शरीर विज्ञान में लिखती हैं:—

अन्य विषय

"जब श्वास यंत्र के आयतन के कारण श्वास से खिंची हुई हवा के परिमाण का तारतम्य होता है तब फुसफुस का आयतन बड़ा होना चाहिये। यह बात निम्नलिखित परीक्षा से समझ में आ सकती है।"

इन्होंने स्त्री कर्तव्य और आदर्श पुरुष रामचंद्र इत्यादि और ग्रंथ भी लिखे हैं।

वर्तमान समय में अच्छे अच्छे समालोचक भी हुए हैं। हिन्दी साहित्य का समालोचनात्मक अंश अभी तक अपूर्ण है किंतु कुछ प्रसिद्ध लेखकों ने बड़ी अच्छी समालोचनाएं लिखी हैं। इन लेखकों में बहुत से पत्रिकाओं के संपादक हैं जिनका वर्णन संपादकों में होगा। अन्य समालोचकों तथा साहित्य के इतिहासकारों में मिश्र बंधु का नाम सदा के लिए स्मरणीय है। ये लोग आपस में भाई भाई हैं जिनके नाम पं० श्यामबिहारी मिश्र, पं० शुकदेवविहारी मिश्र, और पं० गणेशविहारी मिश्र हैं। इन्होंने मिश्रबंधु विनोद तथा हिन्दी नवरत्न की रचना की है। विनोद में इन्होंने ढाई तीन हज़ार

समालोचक

कवियों और गद्य लेखकों का वर्णन दिया है। यह ग्रंथ बड़ा ही उपयोगी है और साहित्य के इतिहासकारों के लिये मार्ग प्रदर्शक है। इसमें भिन्न भिन्न रचनाओं के उत्तम उदाहरण भी दिये हुए हैं। विनोद बड़े परिश्रम का फल है। नवरत्न समालोचना-साहित्य का बड़ा ही उपयोगी ग्रंथ है।

मिश्र भाई कविता भी करते हैं। पं० श्यामविहारी मिश्र और पं० शुकदेव विहारी मिश्र ने एक नाटक भी लिखा है और हिन्दी की अन्य ढंग से बड़ी सेवा की है।

पं० कृष्णविहारी मिश्र ने देव और विहारी नामक समालोचना का अच्छा ग्रंथ लिखा है। पं० पद्म सिंह शर्मा भी हिन्दी के अच्छे विद्वान और लेखक हैं। इन्होंने विहारी की सतसई लिखी है जो बड़ी अच्छी है। बाबू श्यामसुन्दर दास ने साहित्यालोचन और भाषा विज्ञान नामक अच्छे ग्रंथ लिखे हैं। पं० चंद्र मौलि शुक्ल, पं० रामचंद्र शुक्ल और पं० बद्रो नाथ भट्ट इत्यादि भी अच्छे समालोचक हैं।

उर्दू और अन्य भाषा के ग्रंथों की समालोचनएं भी निकली हैं, जैसे पं० ज्वाला दत्त शर्मा ने मौलाना हाली और उनका काव्य, लिखा है

अब पत्रिका-संपादकों का वर्णन होना चाहिये। सरस्वती

संपादक

नामक प्रसिद्ध पत्रिका से संपादकीय संबंध रखने वालों में कातिक प्रसाद खत्री, महावीर प्रसाद द्विवेदी और पदुमलाल पुन्नालाल बख़्शी हैं। कार्तिक प्रसाद जी सरस्वती की पहली संपादक समिति में थे। इन्होंने दो और पत्र भी निकाले थे। यह गद्य के अच्छे लेखक थे और अनुवाद भी करते थे। कुल मिला कर इन्होंने २० के लगभग पुस्तकें लिखी हैं।

द्विवेदी जी हिन्दी के एक भारी लेखक हैं। इन्होंने सरस्वती का बड़ी सफलता पूर्वक संपादन किया। इसके अतिरिक्त इन्होंने बहुत सी पुस्तकें लिखी हैं। एक तो इन्होंने बहुत से ग्रंथों का गद्य में अनुवाद किया है और दूसरे बहुत से समालोचनात्मक ग्रंथ लिखे हैं। द्विवेदी जी का गद्य बहुत उत्तम समझा जाता है। यों तो यह कई प्रकार की शैली का प्रयोग करते हैं किंतु मुख्यतः इनकी शैली की विशेषता यह रहती है कि उसका झुकाव कुछ संस्कृत की ओर रहता है। उसके वाक्य गठे हुए और अर्थभरे होते हैं और उनका अर्थ स्पष्ट दीखता है। फिर उसमें गांभीर्य और व्यंग की अधिक मात्रा रहती है। द्विवेदी जी अपने गद्य में रूपकों इत्यादि का भी अधिक और अच्छा प्रयोग करते हैं। कहीं कहीं इन्होंने फारसी आदि भाषाओं के शब्दों का भी खूब प्रयोग किया है और कहीं कहीं हास्य की मात्रा भी अधिक रखी है। इनकी कुछ पुस्तकें ये हैं—हिन्दी महाभारत, हिन्दी भाषा की उत्पत्ति, सम्पति शास्त्र, नैषध चरितावली, रघुवंश, इत्यादि। इनके अनुवाद अंगरेज़ी, संस्कृत तथा बंगला भाषा के ग्रंथों के हैं। इनके अनुवाद, इनकी समालोचना तथा इनकी स्वतंत्र रचना सभी अच्छी है और सुन्दर भाषा में लिखी है। इनके गद्य का उदाहरण देखिये :—

"शरीर का खाद्य भोजनीय पदार्थ है और मस्तिष्क का खाद्य साहित्य। अतएव यदि हम अपने मस्तिष्क को निष्क्रिय और कालांतर में निर्जीव सा नहीं कर डालना चाहते तो हमें साहित्य का सतत सेवन करना चाहिए और उसमें नवीनता तथा पौष्टिकता लाने के लिए उसका उत्पादन भी करते रहना चाहिए। पर याद रखिए कि विकृत भोजन से जैसे शरीर रुग्ण होकर बिगड़ जाता है, उसी तरह विकृत साहित्य से मस्तिष्क भी विकार ग्रस्त होकर रोगी हो जाता है।"

इनके लेखों से पूरी विद्वता टपकती है।

गद्य के अतिरिक्त द्विवेदी जी ने पद्य भी लिखा है और वह भी अच्छा लिखा है। इनका पद्य कुछ अनुवाद है और कुछ स्वतंत्र। कुमारसंभवसार अनुवाद है और काव्य मंजूषा इनकी रचनाओं का संग्रह है। इनकी रचना देखिए :—

" नई बसंती ऋतु ने करके तिलक फूल को तिलक समान,
दे कर मधुप मालिका रूपी मृदुकज्जल शोभा की खान।
जैसा अरुण रंग होता है लाल सूर्य में प्रातःकाल,
तद्वत नवल आम पल्लव मय अपने अधर बनाए लाल ॥"

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी ने भी सरस्वती का अच्छा संपादन किया है। इन्होंने विश्व साहित्य इत्यादि ग्रंथ लिखे हैं। इनकी रचना भी अच्छी होती है और भाषा प्रभाव पूर्ण।

हिन्दी पत्र या पत्रिका सम्पादकों में बालकृष्ण भट्ट, बालमुकुन्द गुप्त, दुर्गाप्रसाद मिश्र और गोविन्द नारायण मिश्र बड़े प्रसिद्ध लेखक हैं। इन लोगों ने सम्पादन के अतिरिक्त ग्रंथ रचना भी बहुत अच्छी की है। भट्ट जी हिन्दी प्रदीप नामक प्रसिद्ध पत्रिका के सम्पादक थे। यह एक उच्च कोटि के गद्य लेखक थे और इनकी रचना गंभीर और विचारपूर्ण होती थी। उसमें इनकी विद्वता प्रकट होती थी और इनका हृदय स्पष्ट दीखता था। यों तो भट्ट जी संस्कृत वाली हिन्दी के पक्ष में थे किंतु प्रसंगानुसार इन्हें संस्कृत छोड़ने में कोई हिचकिचाहट नहीं होती थी। इन्होंने स्थान स्थान पर अंगरेज़ी के भी अच्छे अच्छे शब्द रखे हैं। गंभीर लेखों के अतिरिक्त इन्होंने हास्य पूर्ण लेख भी बहुत अच्छे लिखे हैं। उनसे भी इनकी विचार शीलता टपकती है। भाषा पर इनका पूरा अधिकार था। इनकी रचना देखिये :—

"एक वाक्‌शक्ति मात्र के दमन से न जानिए कितने प्रकार का दमन हो गया। हमारी जिह्वा जो कतरनी के समान सदा स्वच्छन्द चला करती है उसे यदि हमने दबा कर क़ाबू में कर लिया तो क्रोधादिक बड़े अजेय शत्रुओं को विन प्रयास जीत अपने वश कर डाला। इसलिये अवाक रह अपने आप बातचीत करने का यह साधन यावत् साधनों का मूल है, शांति का परम पूज्य मंदिर है परमार्थ का एक मात्र सोपान है।"

भट्ट जी अच्छे नाटक कार भी थे।

बालमुकुंद गुप्त भारत मित्र के प्रसिद्ध संपादक थे। पहले इन्होंने उर्दू अख़बार के सम्पादन का काम किया था फिर हिन्दी पत्रों की ओर अपनी शक्ति झुकाई। गुप्त जी हिन्दी गद्य के बड़े प्रबल लेखक थे और इनके लेख गम्भीर और हास्य पूर्ण दोनों ढंग के होते थे। इनकी भाषा सीधी सादी होती थी जो बहुत प्रभाव पूर्ण थी। गुप्त जी प्रसिद्ध समालोचक थे और इनकी समालोचनाएँ तीव्र और सच्ची होती थीं। गुप्त जी व्यंग का अधिक और अच्छा प्रयोग करते थे। इनकी रचना देखिये :—

"यदि वसंत में वर्षा की झड़ी लगे तो गाने वाले को क्या मलार गाना चाहिये। सचमुच बड़ी कठिन समस्या है। कृष्ण हैं उद्धव हैं पर ब्रजबासी उनके निकट भी नहीं फटकने पाते। सूर्य है धूप नहीं, चन्द्र है चाँदनी नहीं। माई लार्ड नगर ही में हैं पर शिवशम्भु उनके द्वार तक नहीं फटक सकता है, उनके घर चल कर होली खेलना तो विचार ही दूसरा है।"

गुप्त जी ने कई पुस्तकें लिखी हैं। इनकी कविता भी अच्छी होती थी। देखिये :—

"आ आ प्यारी वसंत सब ऋतुओं में प्यारी।
तेरा शुभागमन सुन फूली केसर क्यारी॥
सरसों तुझको देख रही है आँख उठाये।
गेंदे ले ले फूल खड़े हैं सजे सजाए॥
आस कर रहें हैं टेसू तेरे दर्शन की।
फूल फूल दिखलाते हैं गति अपने मन की॥

दुर्गा प्रसाद मिश्र ने अनेक पत्रों का संपादन किया और भारत मित्र इत्यादि कई पत्र निकाले। इनकी भाषा भी उत्तम होती थी। यह सीधी सादी सरल भाषा लिखते थे परंतु उसमें कोई विशेष गुण नहीं है। इनकी भाषा अधिकतर गंभीर विषयों के लिये उपयुक्त है, जैसे :—

"यह कोई नहीं जानता कि भविष्य में उसका जीवन सुख में कटेगा या दुःख में" "जीवन वायु बराबर क्षय हो रही है। जो दिन वृथा गया वह भी तुम्हारे जीवन में से कट गया" इत्यादि। इन्होंने अनुवाद और स्वतंत्र रचना कुल मिला कर २०, २५ ग्रंथ लिखे हैं।

गोविंद नारायण मिश्र ने भी कई पत्रों का सम्पादन किया। इनके लेख अच्छे होते थे। इन्होंने कुछ पुस्तकें भी लिखी हैं। इनका हिन्दी गद्य संस्कृत मिला होता था जिसमें शब्द एक में एक जोड़ कर रखे गये हैं। यह गद्य समझना सरल नहीं है किंतु इसमें बोल चाल के शब्द भी प्रयुक्त हैं। इनके गद्य में एक और विशेषता यह है कि उसमें कविता की झलक है। देखिये :—

"सुरसिक समाज पुष्पवाटिका के किसी प्रांत में पतित ऊसर समान मूसरचंद मन्दमति मूर्ख और अरसिकों के मन मरुस्थल पर भाग्यवश सुसंसर्ग प्रताप से निपतित उन सुधा से सरस बूँदों के

भी अन्तरिक्ष में ही स्वाभाविक विलीन हो जाने से बिचारे उस नवेली नवरस भरी सुधा की बरसात में भी उत्तत प्यासे और जैसे थे वैसे ही शुष्क नीरस पड़े धूल उड़ाते हैं"।

इन दो मिश्रों के अतिरिक्त माधव प्रसाद मिश्र भी संपादक और बड़े लेखक थे। यह सुदर्शन पत्र का संपादन करते थे। और विशेषतः गंभीर विषयों पर ही लेख लिखा करते थे। मिश्र जी कुछ कविता भी करते थे।

अन्य बहुत से प्रसिद्ध संपादक और सुलेखक थे और हैं जिनमें एक बंगाली अमृतलाल चक्रवर्ती ने हिन्दोस्तान इत्यादि पत्रों का संपादन किया। इन्होंने बहुत सी पुस्तकें भी रची हैं, जैसे गीता की टीका, हिन्दू विधवा, भरतपूर का युद्ध, इत्यादि। शीतल प्रसाद उपाध्याय ने भी हिन्दोस्तान आदि का संपादन किया है। इन्होंने धर्मप्रकाश, शीतल समीर, इत्यादि कई ग्रंथ लिखे हैं। इन्होंने ब्रजभाषा में पद्य रचना भी अच्छी की है।

दक्षिण के पं० रामराव चिंचोलकर और पं० माधवराय सप्रे भी छत्तीसगढ़ मित्र का सम्पादन करते थे। आर्य मित्र के दो सम्पादक रुद्र दत्त जी शर्मा और राम शंकर व्यास हिन्दी के अच्छे लेखक थे। व्यास जी ने कई ग्रंथ लिखे जिनमें कुछ जीवन चरित्र भी हैं। शर्मा जी की रचनाएँ धर्म सम्बन्धी हैं जिनसे आधुनिक विचार प्रकट होता है। इनके ग्रंथ स्वर्ग में सबजेक्ट कमेटी और योग दर्शनभाष्य इत्यादि हैं।

इन सम्पादकों के अतिरिक्त वर्तमान समय में बहुत से सम्पादक और लेखक वर्तमान हैं जिनमें नवयुवकों का वर्णन असामयिक होगा और शेष का वर्णन विस्तार भय से नहीं दिया जा रहा है।

इसी प्रकार बहुत से कवि उपन्यासकार, नाटककार इत्यादि भी वर्तमान हैं जिनमें बहुत तो नवयुवक हैं जिनका वर्णन असामयिक है यद्यपि उनमें कुछ की रचना बड़ी उत्कृष्ट है। अन्य सुकवियों और सुलेखकों का वर्णन विस्तार भय से नहीं दिया जा रहा है। यह न समझ लेना चाहिए कि जिनका वर्णन हो चुका है उनके अतिरिक्त और सभी उनसे निम्नतर हैं। प्रसङ्गानुसार ऐसे साहित्य रचयिताओं के नाम भी आगए हैं जिनमें कुछ अनेक वर्तमान साहित्यकारों से निम्नतर हैं। आशा है कि जिन सुलेखकों का वर्णन इस पुस्तिका में न हो सका वे इसके लेखक को क्षमा करेंगे।

हिन्दी साहित्य और उसके रचयिता

हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास देने के बाद उचित ज्ञात होता है कि इस साहित्य की कुछ मोटी मोटी बातों का तथा उसके रचयिताओं के संबंध में कुछ विशेष बातों का उल्लेख कर दिया जाय। यह साहित्य किस ढंग का है, इसकी भाषा क्या है और वह किस प्रकार की है; इस साहित्य के रचयिता कौन थे, उनका जीवन साधारणतः कैसा था, वे किस प्रकार के मनुष्य थे और उनके तथा उनकी रचनाओं के संबंध में हमको किन किन मूल साधनों से परिचय मिलता है तथा जानकारी होती है; यह हमारा साहित्य विश्व के जीवन में किस काम आ सकता है और उससे मनुष्य पर क्या प्रभाव पड़ा या पड़ सकता है। इसने किन किन बातों में सफलता प्राप्त की है और यह किन किन बातों में अभी असफल या अपूर्ण है; इसकी मुख्य विशेषताएँ क्या हैं और हम इससे क्या आशा कर सकते हैं—इन्हीं सब बातों का बहुत ही सूक्ष्म रूप से वर्णन किया जायगा जिससे पाठकों को इस साहित्य के अध्ययन तथा उसके समझने में कुछ थोड़ी बहुत सहायता मिल जाय।

हिन्दी साहित्य का समय

हिन्दी साहित्य की कुल आयु अभी तक १२०० वर्ष के इधर उधर है। यह समय साहित्य जीवन के लिये थोड़ा और अधिक दोनों कहा जा सकता है। किसी भी भाषा का सर्वोच्च साहित्य बहुत दिनों में तैयार नहीं हुआ। इस दृष्टि से १२०० वर्ष साहित्य की प्रौढ़ता तथा प्रगाढ़ता व्यापकता के लिये कुछ कम नहीं हैं। एक दूसरी दृष्टि से यह काल बहुत ही थोड़ा है क्योंकि और बहुत से साहित्यों की आयु इससे दो गुनी चौगुनी इत्यादि है। जिस प्रकार कोई मनुष्य श्रीशङ्कराचार्य की भाँति थोड़े ही दिनों तक इस भूतल पर शरीर धारण करके बहुत कुछ कर सकता

है और एक दूसरा मनुष्य उनकी चौगुनी आयु पा कर भी उनकी सफलता का सवां अंश प्राप्त करने में भी असमर्थ ही रह सकता है उसी प्रकार साहित्य की भी दशा समझनी चाहिये और यह बात हिन्दी साहित्य ही के इतिहास से स्पष्ट है। इस कथन का उचित रीति से समर्थन हिन्दी साहित्य के भक्ति भाग और जातीयता भाग पर दृष्टि डालने से हो जायगा। बहुत ही थोड़े दिनों में हिन्दी साहित्य ने भक्ति रस की रचना का सर्वोत्कृष्ट और सर्वांगपुष्ट उदाहरण दिखला दिया किन्तु १२०० वर्ष में भी उसमें देशाभिमान तथा जात्यभिमान इत्यादि संबंधी रचना सर्वोत्कृष्टता को न प्राप्त हो सकी। इसके अनेक कारण हो सकते हैं जिनका थोड़ा सा ज्ञान इस पुस्तिका के अवतरणिका भाग देखने से तथा प्रत्येक प्रकरण के आरंभिक लेख के पढ़ने से हो जायगा। अतः इस १२०० वर्ष के समय को थोड़ा अथवा अधिक कहने में कोई विशेष लाभ नहीं है। हाँ इतना अवश्य स्मरण रखना चाहिये कि दुर्भाग्य से इतने काल में भी कोई ऐसा समय भारतवर्ष के लिये नहीं आया जिसमें देश सब तरह से भरपूर, स्वयंशासित, प्रफुल्लचित्त और उत्साहपूर्ण रहा हो। इस कारण से हिन्दी साहित्य में बहुत सी अपूर्णता रह गयी है। यदि गुप्त वंश का राज्य अथवा मौर्य साम्राज्य इस १२०० वर्ष के भीतर रहा होता तो हिन्दी साहित्य का रूप बहुत कुछ बदल गया होता। इस काल में देश की दशाओं ने साहित्य को किस प्रकार प्रभावित किया इसका वर्णन हो चुका है। अब अन्य बातों की ओर ध्यान देना चाहिये।

हिन्दी साहित्य की भाषा

हिन्दी साहित्य की भाषा स्वभावतः हिन्दी है किंतु यह हिन्दी कई प्रकार की है और इसमें भिन्न भिन्न विशेषताएँ हैं। कहा जा चुका है कि इसमें ब्रजभाषा, खड़ी बोली, पूर्वी, अवधी, डिंगल, इत्यादि अनेक भाषाओं

का प्रयोग हुआ है। इससे इस भाषा में ऐसा बल आ गया है कि भिन्न भिन्न प्रांत के लोगों के हृदय पर इसका अधिकार हो गया है। साधारणतः प्रायः इन सभी भाषाओं में माधुर्य भरा है किंतु ब्रजभाषा इन सब में मधुर है और इसकी मधुरता जगत्प्रसिद्ध है। इसी भाषा में हिन्दी का अधिकांश पद्य है परंतु इसका गद्य अधिक तर खड़ी बोली में है। खड़ी बोली मधुरता में ब्रजभाषा का सामना नहीं कर सकती किंतु यह बड़ी प्रभावपूर्ण भाषा है और इसमें अच्छे से अच्छा गद्य लिखा जा सकता है तथा वक्तृता दी जा सकती है। कविता भी इसमें अच्छी हो सकती है किंतु ब्रजभाषा काव्य का रस अधिक स्वादिष्ट है।

हिन्दी साहित्य की भाषा के संबंध में एक और स्मरणीय बात यह है कि इसमें प्रायः सभी प्रकार के उच्चारण होने से साहित्य में प्रसंगानुसार भाषा बहुत सुंदरता के साथ बदली जा सकती है और वर्णन के उपयुक्त बनाई जा सकती है। फिर बहुत ही प्रकार के छंदों के प्रयोग से इसको विषय के बिल्कुल ही अनुकूल बना सकते हैं। बड़े बड़े कवियों ने यही किया है।

इस भाषा के संबंध में एक और बात विशेष ध्यान देने योग्य यह है कि इसमें अलंकारों का बहुत प्रयोग हुआ है जिससे भाषा सुशोभित हो गई है। क्या गद्य क्या पद्य क्या लेख क्या बोलचाल सभी में उपमा, रूपक, दृष्टान्त, अनुप्रास, आदि अलंकारों का बराबर प्रयोग हुआ करता है। किंतु इस आधिक्य ने भाषा को कहीं कहीं अस्वाभाविक और अरुचिकर भी बना दिया है।

हिन्दी साहित्य के रचयिता

हिन्दी साहित्य के रचयिताओं को हम पाँच छः वर्ग में रख सकते हैं। काल क्रम से सब से पहले ऐसे साहित्यकार हैं जो राजाओं के दरबार में रह कर उनका यशगान करते थे जैसे चंदबरदाई और जगनिक बंदीजन

इत्यादि। इन लोगों ने अधिक तर किसी नायक की प्रशंसा सूचक वीर रस की कविता लिखी है और प्राकृत मिश्रित हिन्दी या डिंगल आदि भाषाओं का प्रयोग किया है। इनके बाद के साहित्यकार मुख्यतः धार्मिक आंदोलन करने वाले तथा मत प्रवर्तक थे, जैसे कबीर दास, नानक इत्यादि। ये लोग महात्मा, योगी और सुधारक इत्यादि थे। इन लोगों ने कविता ही रची है जो धर्म शिक्षा और उपदेश से भरी हुई है और जिसमें तीव्र आलोचनाएँ मिलती हैं। इसकी भाषा प्रांतीयता लिये हुए बोल चाल की सीधी सादी भाषा है। फिर इनके बाद वैष्णवमत के कवि हुए। ये महात्मा, संत, साधु, भक्त तथा वैरागी इत्यादि थे, जैसे सूरदास, तुलसीदास। इत्यादि इन्होंने भक्तिमार्ग का उपदेश दिया है और राम तथा कृष्ण संबंधी अनुपम साहित्य तैयार किया है। इस धार्मिक रचना में बहुत शृंगार रस भी मिला है। इन लोगों की भाषा मुख्यतः ब्रजभाषा है और किसी किसी की अवधी या अवधी मिली है। इनके बाद के कवि अधिक तर या तो स्वयं राजा महाराजा थे या उनके आश्रित थे जैसे महाराज छत्रसाल और महाराज मानसिंह अथवा बिहारीलाल और भूषण इत्यादि। इन कवियों ने कुछ भक्ति रस, कुछ शृंगार रस और कुछ आचार्यता सबंधी कविता की है। इनकी संख्या बहुत है और इन्होंने भिन्न भिन्न प्रकार की रचनायें की हैं और भिन्न भिन्न भाषाओं का प्रयोग किया है जिनमें ब्रजभाषा मुख्य है। इनके बाद के साहित्यकार आधुनिक कवि और लेखक हैं, जैसे हरिश्चंद्र और महाबीर प्रसाद द्विवेदी, इन्होंने विविध विषयों पर रचना की है इनकी भाषा मुख्यतः खड़ी बोली है और इनकी रचना अधिकतर गद्य में है। इनमें बहुत से पत्रों के संपादक हैं। अतः हमारे साहित्य-कारों में बहुत से साधु, संत, महात्मा और धार्मिक पुरुष हैं, बहुत से राजा और महाराजा हैं और बहुत से उनके दरबारी तथा उनके

दरबार के आश्रितजन हैं और फिर बहुत से संपादक या अन्य लोग हैं। साहित्यकारों में समय समय पर रानियाँ महारानियाँ तथा अन्य स्त्रियाँ भी मिलती हैं जिन्होंने अपनी प्रशंसनीय रचना से साहित्य को विभूषित किया है।

इनकी जीवनी

हिन्दी साहित्य का भंडार तो बड़ा अपूर्व है किंतु उसके रचयिताओं के संबंध में बहुत कम बातें ज्ञात हैं। बहुतों की जीवनी का कुछ पता ही नहीं। यह बड़े शोक की बात है किंतु बात यही है। एक काम कवियों ने बहुत अच्छा किया है कि अपनी रचनाओं में अपना नाम डाल दिया है। ऐसा प्रायः सभी कवियों ने किया है। कहीं कहीं केवल नाम के अतिरिक्त अपना तथा अपने वंश का थोड़ा थोड़ा परिचय भी दे दिया है। बहुत से कवियों की केवल फुटकर रचनाएं सुनने में आती है। बहुतों के संबंध में एक आध बातें मालूम है। किसी खगनिया नामक स्त्री कवि की कुछ अच्छी अच्छी पहेलियाँ मिलती हैं जैसे :—

"आधा नर आधा मृगराज, युद्ध बिआहे आवै काज।
आधा टूटि पेट माँ रहै, बासू केरि खगनिया कहै॥"

(नरसिंहा)

इसको रचने वाली बासू की खगनिया है। अर्थात वह खगनिया जिसके पिता का नाम बासू था। बासू किसी गाँव का एक तेली था। यह खगनिया कब हुई यह कौन थी और इसने क्या क्या रचा इसका कुछ पता नहीं।

नाम देने के अतिरिक्त बहुत से कवियों ने ग्रंथ निर्माण, उसके आरम्भ या उसकी समाप्ति की तिथि या संवत् भी बतला दिया है। यह या तो छंदों में सीधे ढंग से कह दिया गया है या किसी निर्दिष्ट प्रणाली के सहारे बतला दिया गया है, जैसे बिहारी लाल ने सतसई के समाप्त होने का समय इस भाँति बतलाया है :—

"*संवत ग्रह शशि जलधि छिति, छठ तिठि वासर चन्द।
चैत मास पख कृष्ण में, पूरण आनँद कंद॥"

अर्थात संवत १७१९, मास चैत, पक्ष कृष्ण, तिथि षष्ठी, दिन सोमवार।

इसी प्रकार कुछ कवियों के जन्म मृत्यु इत्यादि का समय भी ज्ञात हो जाता है। इसके अतिरिक्त किसी रचना की भाषा से कभी कभी उसके समय का अनुमान कर लिया जाता है और कभी कभी किसी ग्रंथ के विषय और वर्णन इत्यादि से या उसमें आए हुए नाम इत्यादि के सहारे समय का अनुमान होता है। फिर

---

*कवियों में गणना की यह प्रणाली है :—

१—चंद्र, छिति, भूमि इत्यादि, क्योंकि इनकी संख्या एक है।

२—पक्ष, क्योंकि पक्ष दो हैं—कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष।

३—नेत्र „ शिवजी के तीन नेत्र हैं।

४—वेद „ वेद चार हैं—ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद।

या युग „ युग भी चार हैं—सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग।

५—बाण „ कामदेव के पाँच बाण हैं—सम्मोहन, उन्मादन, शोषण, तापन, स्तम्भन।

६—ऋतु „ ऋतु छः हैं—वसंत, ग्रीष्म, पावस, शरद्, हेमंत, शिशिर।

या रस „ रस भी छः हैं—मधुर, तिक्त, कटु, कषाय, अम्ल, लवण।

७—सागर „ सागर सात हैं—लवण, इक्षु, सुरा, सर्पी, दधि, दुग्ध, जल।

या मुनि „ सात प्रसिद्ध ऋषि हैं—याज्ञवल्क्य, वाल्मीकि, भरद्वाज, नारद, अत्रि, वशिष्ठ, अगस्त्य।

कुछ कवियों या लेखकों ने साहित्यिक रचनाओं का संग्रह तैयार किया है और साहित्यकारों का जीवन वृतांत भी दे दिया है जैसे नाभादास और प्रियादास ने अपने भक्त माल में तथा शिवसिंह ने अपने शिवसिंह सरोज में। कुछ की जीवनी थोड़ी बहुत पूछने जाँचने से या दंतकथा द्वारा मालूम हो जाती है। फिर भी बड़े से बड़े कवियों के संबंध में भी जानने योग्य बहुत सी बातें मालूम नहीं हैं। बहुत से कवियों के रहने सहने का ढंग अनुमान से मालूम हो जाता है क्योंकि हम जानते हैं कि भारतवर्ष में एक समुदाय के लोगों का जीवन प्रायः एक ही समान रहता है और यहाँ के कवि अधिकतर साधु संत या राजा महाराजा या उनके आश्रित थे और इनके जीवन निर्वाह का अनुमान हो सकता है।

हिन्दी साहित्य और जनता

हिन्दी साहित्य ने भारतवर्ष की जनता के जीवन पर प्रगाढ़ प्रभाव डाला है जिसके अनेक कारण हैं किंतु मुख्य कारण यह है कि इस साहित्य का अधिकांश भक्ति और धर्म संबंधी है और इस देश के जीवन के आधार यही हैं। फिर बहुत सा साहित्य लोगों में धर्म

८—वसु ,, वसु आठ हैं—भव, ध्रुव, सोम, विष्णु, अनिल, अनल, प्रत्यूष, प्रभव।

९—ग्रह ,, ग्रह नव हैं—सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु, केतु।

१०—दिक् ,, दिशाएँ दश हैं—उत्तर, उत्तर-पूर्व, पूर्व, पूर्व दक्षिण, दक्षिण, दक्षिण-पश्चिम पश्चिम, पश्चिम-उत्तर, ऊर्ध्व, अधः।

०—रसन (रस+न, विनारस, शून्य)

इनके अतिरिक्त और शब्दों का भी प्रयोग होता है।

प्रचार के लिए लिखा भी गया था। इसके अतिरिक्त यह साहित्य ऐसी मनोहर भाषा में लिखा है और ऐसे ऐसे मधुर छंदों में रचा गया है कि इसका लोकप्रिय होना स्वाभाविक और आवश्यक है। फिर इस साहित्य में भारत के बड़े से बड़े महान् पुरुषों का वर्णन है जो भारतीय जनता के लिए आदर्श स्वरूप हैं इसलिए उनका वर्णन लोक प्रिय होगा ही। हिन्दी साहित्य प्रायः सर्वत्र प्रेम रस से सिंचित है। कहीं यह प्रेम ईश्वर के प्रति है कहीं आदर्श पुरुष के प्रति कहीं आदर्श स्त्री के प्रति और कहीं कल्पित नायक या नायिका के प्रति अर्थात् इसमें लौकिक और अलौकिक प्रेम का पूरा वर्णन दिया है और प्रेम पूर्ण साहित्य लोक प्रिय होता ही है। इन सब कारणों से हिन्दी साहित्य और जनता के जीवन में बड़ा घनिष्ठ संबंध हो गया है। के साहब ने लिखा है कि " a close acquaitance with the vernacular literature is most important for all who would fully understand the peoples of India." अर्थात् भारत वासियों को पूर्ण रीति से समझने के लिए हिन्दी आदि भाषाओं का अध्ययन अति आवश्यक है। हम लोग देखते हैं कि यदि बिलकुल अनपढ़ आदमी से भी दस मिनट बात करें तो उतनी देर में वह रामायण या महाभारत का कोई हवाला दे देगा या कोई चौपाई इत्यादि बोल देगा। रामायण आदि तो कुछ ऐसे ग्रंथ हैं जिनका पाठ बहुत से लोग प्रति दिन अपना धर्म समझ कर किया करते हैं। फिर रामलीला इत्यादि भी जो इतनी लोक प्रिय है साहित्य ही के आधार पर है। इसके अतिरिक्त रामायण इत्यादि का बहुत सा साहित्य रोज़ भिन्न भिन्न रूप में गाया भी जाता है।

हिन्दी साहित्य मनुष्य को एक तो धर्म और कर्तव्य की ओर प्रवृत करता है, दूसरे व्यवहारिका नीति सिखलाता है और तीसरे

शृंगार की ओर ले जाता है। पहली बात वैयक्तिक जीवन, आत्मिक और दैहिक, दोनों के लिए बहुत ही लाभदायक है, दूसरी बात सांसारिक जीवन के लिए उपयोगी है और तीसरी बात कहीं जीवन को सरस बनाती है और कहीं आचारण पर बुरा प्रभाव डालती है।

हिन्दी साहित्य की अपूर्णता

यह मानना ही पड़ेगा कि हिन्दी साहित्य भी कई बातों में अपूर्ण है। सब से मुख्य बात तो यह है कि इसका क्षेत्र कुछ संकुचित है अर्थात् इसमें सब विषयों का भलीभाँति वर्णन नहीं हुआ है, विशेषतः सांसारिक वस्तुओं या व्यापार का वर्णन कम आया है क्योंकि हिन्दी कवियों का धार्मिक साहित्य को ओर अधिक ध्यान रहा है। वर्तमान समय में यह कमी पूरी हो रही है। इस साहित्य को दूसरी अपूर्णता यह है कि इसमें गद्य बहुत कम है। पहले तो गद्य केवल नाममात्र ही को था और वैद्यक तथा ज्योतिष इत्यादि विषयों के ग्रंथ भी पद्य ही में रचे जाते थे। इससे एक यह लाभ होता है कि उन ग्रंथों में लिखी हुई बातों का स्मरण रखना सरल हो जाता है किंतु गद्य में जो स्पष्टता तथा वैज्ञानिकता ला सकते हैं वह पद्य में नहीं ला सकते। गद्य वाली कमी भी वर्तमान समय में पूरी हो रही है। फिर इस समय नई धाराएँ भी निकल रही हैं।

हिन्दी साहित्य की सफलता

उपरोक्त अपूर्णता के साथ साथ हिन्दी साहित्य ने बड़ी सफलता भी प्राप्त की है और कई बातों में इसने अनुपम रूप दिखलाया है। सब से पहली विशेषता जो हिन्दी साहित्य के पाठकों को दीख पड़ती है वह यह है कि इसमें धर्म और भक्ति संबंधी रचना अधिक है। मर्यादा पुरुष रामचन्द्र और कृष्ण की कथाएँ बार बार और भिन्न भिन्न ढंग से कही गई हैं। फिर आत्मिक जीवन को महानता और सांसारिक

जीवन की असारता बड़े उत्तम रूप में दिखलाई गई है। भक्ति का इसमें सर्वोत्तम उदाहरण मिलता है। उपदेश बड़े अच्छे अच्छे और बड़ी अच्छी तरह लिखे हैं और धार्मिक शिक्षा तथा आदर्श जीवन का उत्तम वर्णन है। इस साहित्य के नायक और नायिकाएँ विश्व के सर्व श्रेष्ठ आदर्शों में हैं और इसमें आचरण तथा विचार संबंधी सर्वोत्तम गुणों का विशाल चित्र उतारा गया है। पिता पुत्र पति पत्नी माता पुत्र, माता पुत्री, गुरु शिष्य, भाई भाई, सेव्य सेवक इत्यादि भिन्न भिन्न संबंधों का अनुपम आदर्श दिखलाया है। फिर इस धार्मिक साहित्य में समाज आदि की बड़ी तीव्र अलोचना है। यह साहित्य धार्मिक विचारों से पूर्ण है। हिन्दी साहित्य का आधा से अधिक भाग भक्ति तथा धर्म संबंधी है।

दूसरी विशेषता यह है कि हिन्दी साहित्य में शृंगार रस बहुत है और इस रस की कई प्रकार की रचनाएँ मिलती हैं। एक तो वैष्णव संप्रदाय के कवियों ने कृष्ण भक्ति में शृंगार रस का बहुत प्रयोग किया है और शृंगारमय भक्ति का बड़ा उत्तम वर्णन किया है। फिर लौकिक नायक और नायिकाओं का सहारा ले कर भी शृंगार रस की बड़ी उत्कृष्ट रचना की गई है। प्रेम का प्रत्येक रूप भली भाँति दर्शाया गया है। इस साहित्य में यह विशेषता है कि जिस विषय पर लेखनी उठाई गई है इसे अंत तक अर्थात् अंतिम वैज्ञानिक सीमा तक पहुँचाया गया है और प्रेम, प्रेमकेलि विरह, मिलन विछोह, इत्यादि विषयों का बड़ा उत्कृष्ट वर्णन हुआ है। किंतु कहीं कहीं शृंगार रस इस सीमा तक पहुँच गया है जो साधारणतः अश्लील है।

तिसरी विशेषता यह है कि इसमें भाषा की आचार्यता बहुत मिलती है अर्थात् कविता में काव्य के नियम, रसों का वर्णन, अलंकारों का वर्णन इत्यादि इत्यादि दिया हुआ है। हिन्दी साहित्य

की इस विषय की कविता बड़ी प्रशंसनीय है और बड़े बड़े कवियों ने इस पर रचना की है, जैसे भूषण, मतिराम, पद्माकर इत्यादि। फिर नायकों और नायिकाओं को भिन्न भिन्न अवस्था इत्यादि के आधार पर श्रेणीवद्ध करके उनका उत्कृष्ट वर्णन किया गया है। ऐसी रचना में हिन्दी कवियों का श्रेणीवद्ध करना बहुत सराहनीय है और वे इसमें पूर्ण रीति से सफल हुए हैं। इस प्रकार के कवियों ने बहुधा नखशिख और ऋतु वर्णन भी लिखा है अर्थात् नायक नायिका के अंग प्रत्यंग का वर्णन किया है और उसकी शोभा दिखलाई है। यह रचना भी बड़ी प्रशंसनीय है। फिर भिन्न भिन्न ऋतुओं का बड़ा विशद वर्णन दिया गया है और यह भी प्रशंनीय है। इन सब बातों में हिन्दी साहित्य बहुत ही सफल हुआ है। इन सब के अतिरिक्त आचार्य कवियों ने बड़े ही उच्च कोटि का रचना-कौशल दिखलाया है। कहीं कहीं बहुत ही थोड़े शब्दों द्वारा पूरा मनोहर चित्र खींच दिया है अथवा अति सुन्दर सजीव भाषा में एक एक दो दो शब्दों को अर्थ भंडार बना दिया है। यह सफलता भाषा संबंधी विशेषताओं के कारण से भी हुई।

चौथी विशेषता यह है कि इसकी भाषा में अलंकारों का बहुत प्रयोग हुआ है और इससे भाषा बड़ी सरस तथा सुहावनी हो गई है। सुन्दर अलंकृत मनोहर भाषा लिखने में हिन्दी कवियों ने सचमुच कमाल कर दिया है। अर्थ तथा भाव को छोड़ दीजिये केवल पदों के उच्चारण और उनके शब्दों के स्वर से मन मुग्ध हो जाता है।

हिन्दी साहित्य से आशाएँ

इतनी महत्वपूर्णरचनागर्भ हिन्दी साहित्य से बहुत सी आशाएँ की जा सकती हैं। वर्तमान समय में हिन्दी का बहुत सवेग प्रचार हो रहा है, यहाँ तक कि योरप आदि में भी इसका पठन पाठन होने

लगा है। इस समय में जब चारों ओर वस्तुवाद का डंका बज रहा है और हानिलाभ का लेखा केवल सांसारिक जीवन ही पर निर्भर है एक ऐसे बल की आवश्यकता है जो मनुष्य के मस्तिष्क को वस्तुवाद से फेर कर अध्यात्मवाद की ओर ले जाय और सांसारिक जीवन से उच्चतर जीवन का दृश्य दिखलावे। किंतु साथ ही साथ अध्यात्मवाद को नीरस न बनावे और उसे पूर्ण रीति से लोकप्रिय बनाए रखे। धर्मशिक्षा केवल शुष्क उपदेश न रहने पावे वरन् दैनिक जीवन का एक आनन्दप्रद अंग हो जाय। यह सब हिन्दी साहित्य बड़ी सफलता के साथ कर रहा है और करेगा। हिन्दी साहित्य अपने विषय, भाषा तथा छंद के कारण पढ़ने, सुनने और समझने में ऐसा सरस हो गया है कि इसके पठन पाठन से जीवन आनंदमय होजाता है। अतः हिन्दी साहित्य मनुष्य जीवन को रसमय बनाते हुए उच्च मार्ग पर ले चलने की पूरी शक्ति रखता है और आज कल विश्व में इसी की आवश्यकता है। हिन्दी साहित्य में जीवन को आदर्श बनाने के लिए महान् शक्ति है। ईश्वर इसका प्रचार करके विश्व का भला करे।

अकारादि-सूची

अकबर, २०, ४१, ४७, ५०, ५३ ५४; के दरबारी कवि ५४–६०
अकबर ख़ाँ, २०६, २०८
अंगद, ३२
अग्रदास, ७३, ७५
अग्रनारायण, १७४
अचल कीर्ति (आचार्य), ६७
अजान = नकछेदतिवारी
अजितदास २१५,
अजीतसिंह (महाराज), १३१
अनंत दास, ७५
अनंत फंदी, १५६
अनंत राम, २०८
अनन्य अली, १२६
अनन्य कवि, १०८
अनन्य शीलमणि, ८७, ८८
अनीस, २२१–२२
अनूपदास, १६०
अंबुज, २२७
अब्दुलरहमान, १२७
अभू, १०८
अमरसिंह, १७५, १७७
अमरेश, ७८
अमृत, १७५
अमृत राम, २०५, २०६
अमृत राय, १२८
अमृतलाल चक्रवर्ती, २८३
अम्बिकादत्त व्यास, २६३
अयोध्याप्रसाद खत्री, २६८, २७०
अयोध्याप्रसाद बाजपेयी = औध
अयोध्यासिंह उपाध्याय, २५०–५१, २७२
अष्ट छाप, ४२
अहमदुल्लाह = दक्षण
आज़मख़ाँ, १२८
आॅटवे, ६
आत्मा राम, २४८
आनंद कवि, १५७
आनंद दास, १३०
आर्यमुनी ज़ी, २५३
आलम, ५२
आलम, १२६–२७
इच्छाराम, १३०
इंदामती, ८६, ६८
इंद्र जी, ११२
इबराहीम आदिलशाह, ५२
ईश्वरीप्रसाद, १००, १०८
ईश्वरीप्रसाद, २२७
ईस्वीख़ाँ, २०६

उदयनाथ = कवींद्र
उदयराज जैनजती, ७७
उदैसिंह (महाराज), ७६
उमादत्त, २६१
उमादास, २१६
उमापति, ३२
उमापति, २१७
उर्दू, १८, १३६, १६२
उसमान, १८
ऋषिनाथ, १२९, १४५, २१९
औध, २४६
औरंगज़ेब, ८१
कनक कुशल, १५९
कवींद्र, ११३, ११८
कबीरदास, ४ न०, १९, २०, २७ ३२, ३३, ३४–३७, ७५, ८२ १२२, १३४, १६०, १७९, २०६ २८८
कमलाजन, १७६
कमलेश, २२०
कमाल, ३३, ३७, ४१, ४२
करन, १९४
करनीदान, १३०
करनेस, ५८
कपूरविजय = चिदानंद
कलानिधि, १७३
कल्याण, १७४
कल्याणमिश्र, ११०
कल्याणी, ७७
कविंद्राचार्य, ९६
काकरेजीजी, १११
कॉग्रीव, ६
कादिरबक्स, ७८
कामताप्रसाद गुरु, २१८–१९
कार्तिकप्रसाद खत्री, २७८
कालिदास, ६८,
कालिदास, १०७, ११८
काशिराज = बलवानसिंह
कासिमशाह, २२०–२१, २२७
किंकर गोबिंद, १७६
किशोर, १४४
किशोरदास, २१४
कुतुब अली, २६
कुतुबनशेख, ३८
कुंदन, १२९
कुमारमणि, १२५
कुम्भन दास, ४२, ४६, ४७, ६०
कुँवर कुशल, १५९
कुँवर मेदिनी मल्ल, १३१
कुलपति मिश्र, ९९, १००, १०२–१०४

कुशल धीरमणि, ६८
कृपानिवास, १६८
कृपाराम, ५२, ५३
कृपाराम, १३०, १५८
कृष्ण, ११३, ११८
कृष्ण, १७६
कृष्णदत्त, २२७
कृष्णदास, ४२, ४६
कृष्णदास, १०९, ११०
कृष्णदास, १६८, १६९
कृष्णलाल, २०६
कृष्णबिहारी मिश्र, २७८
कृष्णानंद व्यास, २१८
के (साहब), २९२
केशवदास, १९, ४०, ४६, ५३, ६०, ७०,–७३, ७६, ७८, ८१, १००, १०५, १३३, १५६, १९७, २२६
केशवराज, १३०
केशवराम भट्ट, २६३
केशवराय, १२९
कोलरिज, ४, १२
कोविद मिश्र, ११२
खगनिया, २८९
खंडन, १३०
खुमान, २६
खुमान, २०१
खुमान सिंह, २१५
खुशाल चंद, १२८–२९
ख़ुसरु (अमीर), २७,२८, २९–३०,
खेतसिंह, २०८
गंग, गंगाभाट ५८, ५८–५९,६२,१८४
गंगापति, १३१
गंगाप्रसाद २२६
गंगाप्रसाद श्रीवास्तव, २७३, २७४
गंगाराम, ११०
गंजन, १२५
गणपतराव, १७६
गणेश, २०१
गणेशपुरी, २२८
गणेश प्रसाद, २०२–२०३
गणेश प्रसाद, २१८, २१९
गणेशबिहारी मिश्र, २१७
गदाधर, २६५
गदाधर भट्ट, ७५
गदाधर भट्ट, २४६
गदाधर सिंह, २७४
गांधी (महात्मा), २५४
गिरधर-गिरिधरदास
गिरिधर (कविराय), १३६, १५४–५५, १५८, १५९
गिरिधरदास (या गिरिधारी या गिरिधारन) २२२, २२३–२४, २२७, २३४, २३८–३९

गुमानमिश्र, १५७
गुमान सिंह, २६०
गुरुगोबिन्द सिंह, ११३, ११६, १२१
गुरुदत्त, १६६, १६७
गुरुदत्त सिंह = भूपति
गुरुदीन पांड़े,, १८६, १८८
गुरुप्रसाद, २२७
गुलाबसिंह, १७६
गुलाबसिंह, २२२–२३
गोकुल, २८७
गोकुल (कायस्थ), २१५ न०, २६३
गोकुलनाथ, १३५, १५७, १६३ १६५–६७,
गोकुलनाथ (स्वामी), ६१–६२
गोकुलप्रसाद, २६८
गोपालचन्द = गिरिधरदास
गोपालराम, २७२
गोपालसिंह, १३०
गोपीनाथ, १३५, १५७, १६३, १६५–६७
गोमतीदास, २१५
गोरखनाथ, २७, ३०, १८४
गोल्डस्मिथ, ४,
गोबिन्दकवि, २४६
गोबिन्द गिल्ला भाई, २४७, २४८
गोबिन्द जी, १७६
गोबिन्द नारायण, २८०, २८२
गोबिन्द रघुनाथ थत्ते, २३६
गोबिन्द स्वामी, ४२, ४७
गोसाईं जी = तुलसीदास
गौरीदत्त, २६९, २७०
गौरीशंकर हीराचंद ओझा (रायबहादुर), २७५, २७६
ग्रियर्सन (सरजॉर्ज), २६८, २६९
ग्वाल, १८६, १८७, १९२–९३, २०८
घनश्याम शुक्ल, १००, १०६
घनानंद, ११३, ११९–२०
घाघ, १३०–३१
घासीराम, ७७
चंडीदान, २६२
चतुरसिंह राना, १११
चतुर्भुज दास, ४२, ४७, ८८
चतुर्भुजदास (स्वामी) ८७, ८८
चतुर्भुज मिश्र, २२६
चंद, ५२
चंद, १२९
चंद (राधावल्लभी) १३६, १६१
चंदन, १६९–७०, १७०
चंद बरदाई, १८, २०, २३, २४–२५ २६, २७, २९, १३३, २८७

चंद्रमौलि शुक्ल, २७८
चंद्रशेखर, १८३, १८६, १८७, १९१–९२, २०८
चंपा, ५२
चरणदास, ३३, ३८, १५४
चरणदास, ११०
चरणदास धूसर, १३०
चाँपादे रानी, ९८
चिंतामणि त्रिपाठी, ८६, ९२
चिदानंद, २२८
चिरंजीव, २०२
चैतन्य महाप्रभु, ४१
चैनदास, २०६
छत्रकुँवरि बाई, १७३
छत्रधारी, २१५
छत्र साल, (महाराज), २१, ८१, ९९, १०२, १११–१२, २८८
छत्रसाल मिश्र, १७५
छत्रसिंह, ११३, ११९, १२२
छीतस्वामी, ४२, ४७
छीहल, ५०
छेदीराम, १७३
छोटूराम, २५९
जगजीवनदास, १३६, १६०
जगतसिंह, १६०
जगदीशलाल (गोस्वामी), २६३
जगनायक = जगनिक बंदीजन
जगनिक बंदीजद, २५–२६, २८७
जगन्नाथ दास = रत्नाकर
जगन्नाथ प्रसाद = भानु
जगमोहन सिंह, २६३
जगोजी, ९८
जटमल, ६२, ७७, १८४
जत्तनलाल(गोस्वामी), २०४, २०५
जन अनाथ, १०८
जनकराज किशोरीशरण, २०३
जन गोपाल, १६९, १७०
जनार्दन झा, २७३
जयगोपाल, २०८
जयचंद्र जैन, २०५
जयदेव, ३२
जयराम, ९७
जयशंकरप्रसाद, २४३, २४४
जयसागर, ३८
जयसिंह (महाराज), २०४, २१२
जल्हन, १८, १९, २३, २६–२७
जवाहिर सिंह, १५८
जवाहिर सिंह, २०१
जसरामचरण, १५८
जसवंतसिंह, (महाराज) ९२–९३, ९७, १३१, १५६
जसवंतसिंह, १९५

जहाँगीर, २०, ८०–८१
जानकी चरण, २१७–१८
जानकीप्रसाद, २००
जानकीप्रसाद, २१७, २१८, २२७
जानकीप्रसाद = रसिकेश
जानकीप्रसाद पँवार, २६५
जानकी रसिक शरण, १२२
जॉन क्रिस्चियन, २६९
जॉन गिल्क्रस्ट, १८३
जॉनसन, ४ न०
जायसी (मलिकमुहम्मद) ५०–५१, ५२, १४८
जिनवल्लभ सूरि, २६
जिनहर्षसूरि, ११२
जी० पी० श्रीवास्तव = गंगाप्रसाद श्रीवास्तव
जीवनलाल, २१२, २१३
जुगुलानन्यशरण, २०३, २०५
जैनदीन महम्मद, १११
जैसिंह (मिर्ज़ाराजा) ८८
जोध राज, १२९
जोयसी, ९५
ज्वालादत्त शर्मा, २७८
ज्वालाप्रसाद मिश्र, २५३–५४
टॉड (साहेब), १७५
टेन (साहेब) १६
टोडरमल (राजा) ५४–५५
ठाकुर, २१, १२९, १३४, १४५ १४५–४६, २०१, २१९, २२१
ठाकुरप्रसाद, २२१
ठाकुरप्रसाद त्रिपाठी, २६८
ताज, ८७, ९७, ९८
तानसेन, ५५
तालिबशाह, १५९
ताहिर, ७८, ७९
तीर्थराज, १४५, १४७
तुलसीदास (गोस्वामी), २, ३, ४ न०, ६–७, १०, १५, १९, २०, ३५, ४०, ४४, ४५, ४६, ५१, ५२, ५३, ५७, ५८, ६०, ६१, ६२–७०, ७०, ७१, ७३, ७८, ८०, ८२, ८३, ८६, ८९, १२४, १३४, १५०, १५२, १६४, १६५, २०४, २१४, २७१, २८८
तुलसीदास का रामचरित मानस, ६४–७०
तुलसीदास काल, ५३–५४
तुलसीराम, २२८
तुलसीराम शर्मा, २५३
तोताराम, २४२, २४३
तोष, ९३, ९४
तोष निधि, ९४, १७३

थान (या थान राम), १६६, १७०—७१, १८२
थिरपाल, २२७
दत्त, १३४, १४१, १४२
दयानन्द सरस्वती (स्वामी), २२, १७६, २३१, २३१—३३, २३४
दयाबाई, १५४
दयालदास, ७६
दयालनाथ, १२८
दरिया सहाब, १६०
दलपतिराय, १५६, १५६
दलपतिराय, २२७
दशशीश, १३०
दत्तण, १२७—२८
दादू (या दादू दयाल) ६०—६१, ६१, ७३
दानिशमन्द, १११
दामो, ३४, ३८
दामोदरदास, ८७, ६८
दामोदर सतवलेकर, २७७
दामोदर स्वामी, ८७
दास, २१, १३३, १३४, १३७—३६
दिग्विजयसिंह, २१५ न०
दीनदत्त, ६८
दीनदयाल गिरि, १६६
दुर्गाप्रसाद मिश्र, २८०, २८२
दूलह, ११८, १४१—४२
दूलीचन्द, २१६
दूल्हाराम, १७४
देबी बंदी जन, १३०
देव (या देव दत्त), ११, २१, ३१, ८०, ८२, ८३, ८४, ६१, ११२, ११३—१६, १३२, १३३, १३६, १८२, १६५, २२४ ; देव काल, ११२—१३,
देव कवि काष्ठजिह्वा, २१७, २६७—६८,
देवकीनन्दन, १६६, १७०
देवकीनन्दन खत्री, १७२
देवदत्त, १०८
देवदत्त = दत्त
देवनाथ, १३४
देवीदत्त, १५६
देवीदास, १०६
देवीदास, २०७
देवीप्रसाद (मुंशी), २७५—७६
दौलतराम, २०६
दौलतरावसींधीया
द्यानतिराय, १२६
द्रोणाचार्य, २२७
द्विज, १६४—६४
द्विजगङ्ग, २४७

द्विजछत्र, १७५
द्विजदेव = मानसिंह (महाराज)
द्विजराज, २६५
द्विजराम, २६१
धनन्तर, १७५, १७७
धनीराम, १४५, २०१—२०२, २१६, २२१
धरणीधर दास, ११०
धरमदास, ३८
धर्म मन्दिर मणि, ११२
धर्म सूरि जैन, २८
धीर कवि, २०६
धीरजसिंह, २२७
ध्रुवदास, ८५
नकछेद तिवारी, २६८
नन्दकिशोर शुक्ल, २५३–५४
नन्ददास, ४२, ४६–४७, ४८
नन्ददास, १७५
नन्दराम, २५८
नरपतिनाल्ह, २८, २६
नरहरि, ५८
नरहरिदास, ८५, ८६
नरोत्तमदास, ५१–५२
नल्हसिंह, २८, २६
नवनिधि दास, १५३ न
नवलसिंह २००–२०१
नवलसिंह २१५
नवीन, २१८–१६
नागरीदास, ६०
नागरीदास, ७७
नागरीदास (महाराज), ११३, ११६, १२०–२१, १२७, १५६, १७३
नागरीदास, १५६
नाथ = सोमनाथ
नाथ = हरिनाथ
नाथूराम, २०४
नाथूराम शंकरशर्मा, २६४
नानक (गुरु) २०, ३३, ३८–३६, ४१, २८८
नाभादास, ७५–७६, ११६, २६१,
नामदेव, ३८, ७५,
नारायण, १५६
नारायण कवि, १७५
नारायणदास = नाभादास
निरंजन (स्वामी), ५२
निहाल, २१६
नीलकंठ ६५
नीलसखी, १५६
नूर मुहम्मद. १४७, १४८, १५६
नृसिंह राम, २६०
नेणसीमूता, ११०
नेवाज कवि, १००, १०७–१०८, १०६, ११५. २२४

नेह = छेदीराम
नैनयोगिनी, २२७
नौने व्यास, १५८
पंचदेव पांड़े, २५६, २७१
पंचम सिंह, १५६
पजनेस, २१८, २१६
पंडित प्रवीन = ठाकुरप्रसाद
पत्तन लाल, २५६,
पदुमलाल पुन्नालाल बख़्शी, २७८, २८०
पद्मचारिणी, ७७
पद्मसिंह शर्मा, २७८
पद्माकर, २१, ८२, १३१, १८२, १८३, १८६, १८७, १८८–६१, २६२, २०८, २६५
पन्नालाल, २२६
परमबंदीजन, २१६
परमानंद, २२२
परमानंद, २५६, २६२–६३
परमानंददास, ४२, ४६, ४७,–४८
पहलवानदास, २०५
पहारसैयद, २०६
पीताम्बर, १५७
पीपा, ३२
पुखी, १६०
पुंड = पुष्य
पुष्य, २६
पुहकर, ६५, ६७
पूरन, २४७
पूरनमल, २२२
पूर्णदास, २०६
पृथ्वी कवि, ५५
पृथ्वीराज, २४, २५, २७
पृथ्वी सिंह = रसनिधि
पेरिक्लीज़, १६
प्रताप, १८६, १८७, १६३–६४, २०८
प्रताप कुँवरि बाई, २१६–१७
प्रतापनारायण मिश्र, २५४–५६
प्रताप सिंह, १७७
प्रवीणराय, ७७–७८
प्रवीन, ७७
प्राकृत, १८
प्राणनाथ, ८५, ८६
प्रियादास, ७५–७६, ११३, ११६, २६१
प्रियादास शास्त्री, १६१
प्रियासखी = जानीक चरण
प्रीतम, १२७, १२८
प्रेमघन = बद्रीनारायण चौधरी
प्रेम चंद, २४३, २७१, २७४
प्रेमदास, १५६

प्रेमसखी, २०३
प्रेमी यमन, १७३
फ़तेहसिंह, १५७, १५८
फेरन, २६१
फ़्रेड्रिक पिंकॉट, २६६
बखत कुँवरि बाई, १७३, १७४
बख़्शी हंसराज, १२६
बद्रीनाथ भट्ट, २४३, २७८
बद्रीनारायण चौधरी, २६३–६४
बनवारी, ९६
बनादास, २१५
बनारसीदास, ७७
बनीठनी जी = रसिक बिहारी
बलदेव, १७६
बलदेव, २१५
बलदेव २२१
बलदेव, २४६, २४७
बलदेवदास, २४८, २४९
बलभद्र मिश्र, ७६
बलवान सिंह, १९७–९८
बलवीर, ११२
बंसगोपाल, २२८
बंसीधर, १५६, १५९
बाँकावती (महारानी), १५३, १५६, १५९
बाँकीदास, २०७
बालअली. १००, १०८
बालकराम, १७४
बालकृष्ण भट्ट, २२. २४२, २४३, २४४, २८०–८१
बालदत्त मिश्र = पूरन
बालनदास, १७५
बालमुकंद गुप्त, २८०, २८१–८२
बिरजीकुँवरि बाई, २१६, २१७
बिहारिनि दास, १५६
बिहारी (या बिहारीलाल), ६, २१, ३९, ५३, ५८, ७२, ८०, ८१, ८२, ८३, ८८–९०, ९१, १००. १०२, १०३, ११८, ११९, १३३, १३५, १४५, १५६, १८२, १८५, १९८, १९९, २२६, २३९, २६२, २६७, २८८, २८९–९०
बीर, १२९–३०
बीरबल, ५५, ७०
बीसलदेव, २८
बुधजन, २०५
बेट (साहब) २६९
बेनी. ९५
बेनी, १६९, १७१–७२, १८७
बेनीदास, २२७
बेनी प्रवीन, १८६, १८७–८८
बैताल, १२४

बैरीसाल, १४१,१ ४२—४३
बोधा, २१, १४५, १४६—४७
ब्रज (गोकुल कायस्थ), २६३
ब्रजनाथ, २२२
ब्रजराज, २६१, २६२, २६५
ब्रजवासी दास, १५७
ब्रजवासी दास, २२४
ब्रह्म = बीरबल
ब्रह्म दत्त, १६५
ब्रह्म भट्ट, २६
भगवंतराय खीची १६०
भगवती दास, ११२
भगवानदास, १०६
भगवानदीन खत्री, २६४
भगवान मिश्र, १३०
भगवान हित, ६०
भगवान हित, १००, १०८
भगोदास, ३८
भंजन, १६६
भरमी, ६५
भवानंद, ३२
भाऊ सिंह (महाराज राव), ६०
भान १७२—७३
भानु, २५८, २५६
भानुनाथ झा, २२७
भानुप्रताप तिवारी, २७४—७५
भारतीय विश्वनाथ, ११२
भारतेन्दु = हरिश्चन्द्र
भारथशाह, १५६
भाषा, १
भिखारीदास = दास
भीखन, १७६
भीमजू, २०६
भीमसेन शर्मा, २५३
भीष्म, ६५
भुवाल, २६
भूधरदास, ११३, १२१—२२, १२८
भूधर मिश्र, १२६
भूपति, १३४, १४५
भूपनारायण सिंह, १७५
भूषण, २१, ८०, ८३, ८६, ६०, ६१, ६६, ६८, ६६, १००—१०२, १०३, १०५, १०६, ११२, १३३, १३५, १४४, २८८, २६५
भैरवप्रसाद = विशालकवि
भोगीलाल, १६५
भौन, १६६, १७२
मंचित, १६३, १६४, १८२
मंडन, ६५, ६७
मणिदेव, १५७, १६३, १६५—६७
मणिमंडन मिश्र = मंडन,

मतिराम, ६, २१, ८०, ८३, ८८, ९०–९२, ९३, ९५, ९६, १००, १०५, ११२, १९४, २९५
मथुरानाथ, १७३, १७७
मदनमोहन मालवीय, २५४
मधुसूदन दास, १३५, १६३, १६४–६५, १८२
मनबोध झा, १५७–५८
मनभावन, १४५, १४७
मनियार सिंह, १६७–६८
मनीराम, १३३, १४४
मनोहर दास. ५५
मनोहरदास निरंजनी, ९८
मनोहरलाल ९७
मन्नन द्विवेदी, २७६
मलूक दास, ८५–८६
मसऊन्द, २६
महबूब, १२७
महादाजी सिंधिया, १५९
महाबीर प्रसाद द्विवेदी, २७४, २७८, २७९–८०, २८८
महीपति, ९७
महेश, २०७
महेश, २६१
माखन, १९५
माधव, २१२, २१३
माधव, २६१
माधवदास, ७९
माधवप्रसाद मिश्र, २८३
माधवराव सप्रे २८३
माधुरी दास, ८७
मानदास, २०३
मानदास ब्रजबासी ८६
मानपुरीजी ११२
मानसिंह (राजा) ५४
मानसिंह, १५९
मानसिंह, २०६
मानसिंह, (महाराज), २२०, २२१, २८८
मालदेव, ७९
मिल्टन, ४, ६, १७
मिश्रबंधु, २४५, २४७, २७७–७८
मीर तकी १६२
मीर दर्द, १६२
मीर हसन, १६२
मीराबाई, ४८–५०, ७५, ७६
मुकुन्ददास, ७९
मुक्तानन्द, २०५
मुक्ताबाई, २८,
मुक्तामणिदास, ७८
मुनिसुन्दर जैन, ३२
मुबारक, ७८
मुरलीधर, १९९

मुरारिदास, २६१, २६२, २६६
मून, १६४
मैथिलीशरण गुप्त, २५६–५८
मोगजी २०७
मोरोपंत, १२८
मोहन, १०६, ११०
मोहन, २४७–४८
मोहन भट्ट, १३१, १८८
मोहनलाल, ५२
मोहनलाल भट्ट = मोहन भट्ट
मोहनलाल विष्णुलाल पांड्या, २७०
मोहन विजय जैन, १०८
मौनी जी, ११०
यदुनाथ शुक्ल, २०७
यशोदानंदन, १६५
यशोविजय जैन, ६७
याकूब ख़ाँ, १२७, १२८
यार = मनियारसिंह
युगलकिशोर मिश्र = ब्रजराज
युसुफ़ ख़ाँ, १५६
रंगविजय जैन, १७६
रघुनाथ, १३३, १३४, १३६–४१
रघुनाथदास, २१४
रघुनाथदास, २१४–१५
रघुराजसिंह, १३५
रघुराजसिंह (महाराज) २१२–१३
रघुराम, ६७
रघुबरदयाल, २२०
रणछोर, ११०
रतन १४१ १४२
रतनदास, १७४–७५, १७७
रतन भट्ट, ११०
रतनसिंह, २०६
रत्न कुँवरि बीबी, २५२
रत्नसेन, १५६, १६०
रत्नहरि, २१७
रत्नाकर, २६५, २६६–६७
रस, ५ न
रसखान, ७४, ७८
रसजान, २०४
रस निधि, १२५
रसरंग, १२६
रसरंग, २२२
रसलीन, १४३, १५६
रसालगिरि, २०८
रसिक, ६०
रसिक अली, १६१
रसिक कवि, १०६
रसिकगोविंद, २०२
रसिकबिहारी, १२१, १२८, १५३
रसिकबिहारी = रसिकेश
रसिकेश, २४६
रहिमन = रहीम

रहीम, ५५–५८, ५८, ७८, १५४, १९६
राजसिंह, १२१
राधाकृष्ण, १७६
राधाकृष्णदास, २२४
राधाचरण (गोस्वामी), २६३
राधिकानाथ बनर्जी, १७७
राधेकृष्ण, २२७
रामकृष्ण वर्मा. २४३, २४४–२६४, ६५
रामगुलाम, २१५
रामचन्द नागर, ९७
रामचन्द (पंडित), १६३–६४, १६७, १८२
रामचन्द्र शुक्ल, २७३–७४, २७८
रामचरणदास, १७४
रामजी, १००, १०७
रामजू. २२६
रामदास ९७
रामदास, १३०
रामद्विज, २६०
रामनाथ, १९६
रामनाथ, २१६
रामनाथ कविराव, २६४, २६५
रामपालसिंह (राजा), २७०
राममोहनराय (राजा) २३१
रामराव चिंचोलकर, २८३
रामशंकर व्यास, २७४, २७५, २८३
रामसहायदास, १९८–९९
रामसिंह, १७२
रामानन्द, २७, ३२, ३४
रामचंद, ८६
रिझवार, २०६–२०७
रुद्रदत्त शर्मा, २८३
रुस्तम, १११
रूपकला = सीताशरण भगवान प्रसाद
रूपचंद, ७९
रूपनारायण पांडे, २४३–४४, २७३, २७४
रूपमुनि जैन, २०५
रूपलाल (गोस्वामी), १२६
रूपसाहि, १६०
रैदास, २०, ३२, ३७, ४९
लखनसेन, २०२
लखनेस, २४९
लछिराम, २४६, २४७
ललकदास, २००
ललित = ललिताप्रसाद
ललितकिशोरी, १६०
ललित किशोरी, २११
ललितमाधुरी, २११
ललितमोहनी, १६०

ललिताप्रसाद, २५८–५९
लल्लूजी लाल, १९, २१, ८०, १३२, १७७, १७८, १८२, १८३, १८३–८६, २०७, २०९
लक्ष्मण, २२७
लक्ष्मण प्रसाद = लखनेस
लक्ष्मण सिंह (राजा) २३९, २४०–४२
लक्ष्मीनारायण सिंह, २६९
लक्ष्मी प्रसाद, २२०
लक्ष्मीशंकर मिश्र, २७१
लॉक, १७
लाजपतराय (लाला) २५४, २७५
लाढ़ू नाथ, २०५
लाल, ११३, १२२, १२२–२४
लालचंद, ७६
लालचंद जैन, १७६
लालचदास, ५१, ५३
लालजी मिश्र, १७५
लाल झा, १५८, १७६
लालन दास, ७८
लालबिहारी मिश्र = द्विजराज
लीलाधर, ७८
लूणसागर, ८६
लेखराज, २१८, २६२, २६५
लोकनाथ, १२६, १२७, १२८
लोकमणि, १३०
वर्ड्स्वर्थ, ४
वलभद्र, ९८
वल्लभाचार्य, ३३, ३९, ४१, ४२, ४६,
वाईक्लीफ, ६
विक्रमादित्य, १७६–७७
विजयसेन सूरि, २८
विजयहर्ष, १०९
विट्ठलनाथ, ४२, ४६, ४७, ४८, ७४
विट्ठलविपुल, ६१–६२, १५६
विद्धणु जैन, ३१
विद्यापति, ११, ३०, ३१–३२, ११५, १३३, १५८
विनयविजय, ९७
विनायक राव, २७०–७१
विलियम कैरी, १८४
विशाल कवि, २६५, २६६
विश्वनाथसिंह (महाराज), २१२, २१३
विष्णुदत्त, २२७
विष्णुदास, ११०
विहारिनिदास, ६०
वृंद कवि, १००, १०८–१०९
वृन्दावन (जैनी) २०४–२०५, २१५
वृन्दावनदास–(चाचा), १३६, १५० ५१, १५२

वृषभानु कुँवरि, २५२
वेण, २४
वैकुण्ठ मणि, ११०
वैष्णवदास, १६६
वैष्णवदास, १७४
व्यास जी, ८५, ८६
व्रजदासी = बाँकावती (महारानी)
व्रजनाथ, १५८
व्रजपति भट्ट, ७६
व्रजवासी दास, १५२–५३
शंकर, २२१
शंकर (शंकरसहायअग्निहोत्री), २४६
शंकरदत्त, १५८
शंकर पाँडे, २२७
शम्भूदत्त, २०७
शम्भूनाथ, १४४
शम्भूनाथ मिश्र, २२६
शम्भूनाथ सुलंकी (राजा) ६०, ६४–६५, ६६
शरच्चन्द्र सोम, २५२
शशिनाथ = सोमनाथ
शारंगधर, २०, २८–२९
शारदापुत्र, १३०
शाहजहाँ, २०, ८०–८१, ६४
शाहजी, ६७
शाहमुहम्मद, ५२
शिरोमणि, ६६
शिव, १६०
शिवदयाल, २२७
शिवदयाल, २६०
शिवनंदन सहाय, २७४, २७५
शिवनाथ, १३५, १४४
शिवनारायण, १५०
शिव प्रकाश २६०
शिवप्रसाद (राजा), २१, २०६, २१०, २२२, २२४–२६, २२७, २३६
शिवलाल, २०२
शिवसंपति सुजान, २६२, २६३
शिवसहायदास, १५८–५६
शिवसिंह सेंगर, २६७–६८, २६१
शिवाजी, २१, ८१, ६७, ६६
शीतलप्रसाद उपाध्याय, २८३
शुकदेव मिश्र = सुखदेव मिश्र
शुकदेवबिहारी मिश्र, २४३ २७७, २७८
श्रीधर, १६५
श्रीधरकवि, ११२, १२२
श्रीनिवासदास, २४२–४३
श्रीपति ११३, ११७, १३८
श्रीभट्ट, ६०,
शेक्सपियर, ६, १७
शेख, १२६, ७२, १२८
शेखनबी, २८

श्यामबिहारी मिश्र, २४३ २७७, २७८
श्यामसुन्दरदास, २६९–७०, २७८
श्रद्धानन्द (स्वामी), २५३
श्रीधर पाठक, २६५–६६
श्रीप्रताप बाला, २५२
श्रीहितलाल (गोस्वामी), ७५
श्रुतिगोपाल, ३८
संतसिंह, २०२, २०५
संतोष सिंह, २१५
संदल = चंदन
सदल मिश्र, २१, १७७, १८३, १८३–८४, १८६, २०९
सदानंद, ९५
सदासुख, १५७
सदासुख, २२६
सबलसिंह चौहान, ८६–८७
संभा जी, ९५
सम्मन, १९५, १९५–९६
सरजूराम, १४८, १५०
सरदार, २२६
सरसदास, ८७
सहचरिशरण, १६०–६१
सहजराम, २४८–४९
सहजो बाई, १३६, १५३, १५४, १६८, १५९
सागर, १९८, १९९
सावंतसिंह = नागरीदास (महाराज)
साहकुंदन लाल = ललितकिशोरी
साहफुंदन लाल = ललित माधुरी
साहिजू, २०७
साहित्य, की परिभाषा, १, का विभाग, २, का जन्म, २–४, का स्वरूप, ४–६, निर्देशक शक्तियाँ, ६–१६
साहित्य और देशदशा, १६–१७
सितारे हिंद = शिवप्रसाद (राजा)
सीतल, १२५
सीताराम, २०१
सीताराम (लाला), २४३
सीतारामशरण भगवानप्रसाद, २४८
सुखदेव, १३०
सुखदेव कवि, ९८
सुखदेव मिश्र, ९९, १००, १०२, १०४–१०६
सुखलाल, १५८
सुन्दर कवि ९४
सुन्दरदास, ६१, ७३–७४
सुंदर कुंवरि बाई, १३६, १५३–५४, १५९
सुदर्शन कवि, ११०
सुधाकर द्विवेदी, २६५
सुवंस शुक्ल, २०६, २०८

सूदन, १३५, १४७—४८, १४८—५०, १५६
सूरजमल, १४८
सूरति मिश्र, ११३, ११६—१७, ११८
सूरदास, ४ नं०, ६, १०, १८, १६, २०, २३, ३३, ४०, ४२, ४३—४६, ४७, ४८, ८३, ८६, १५१, १५२, १५३, २२६, २८८
सूर्यमल्ल, २०७
सेन, ३८
सेनापति, ८३, ८३—८५
सेवक, १४५, २१६—२०, २२१
सैयदरहमतुल्ला, १११
सोज़, १६२
सोमनाथ, १३३, १३६
सोमसुंदर सूरि, ३२
सौदा, १६२
हठी, १३५, १६८—६६
हनुमान, २६१
हम्मीर, २८, २६
हरगोविंद कवि ६८
हरदेवी जी, २४४
हरनारायण, १६६
हरिऔध=अयोध्या सिंह उपाध्याय
हरिकेश, ६६, १०२, १०६
हरिचरणदास, ११३, ११६, १५६
हरिजन, २२६
हरिदास, ५०, १६१
हरिनाथ, १५८
हरिप्रसाद, १७५
हरिराम, ६५
हरिवल्लभ, ६६
हरिवंश राम, १५८
हरिविजय सूरि, ७६
हरिश्चंद, १६, २२, १७८, १८३, २०८, २२४, २२६, २३१, २३४—४०, २४२, २४४, २४५, २८८
हरिसेवक, १३०
हरिसेवक साहब (स्वामी), २६०
हर्ष (महाराज) १६, २३
हॉब्स, १७
हॉर्नली (डॉक्टर रुडाल्फ़), २६८, २६६
हितरामकृष्ण, १६१
हितहरिवंश, ४१, ४८, ८५, १७१, २०५
हिन्दी, भाषा, १७—१८, २३, २४, साहित्य, १८—२२, १४०, साहित्य, का समय, २८५—८६, साहित्य की भाषा, २८६—८७, साहित्य के रचयिता, २८७—८६, साहित्य के रचयिताओं की जीवनी, २८६—६१, साहित्य और

जनता, २९१–९३, साहित्य की अपूर्णता, २९३, साहित्य की सफलता २९३–९५, साहित्य से आशाएं, २९५–९६
हिमंचल, २२६
हिम्मत सिंह, १३१
हीरालाल (रायबहादुर), २७०
हेमचंद्र पांडे, ९८
हेमंतकुमारी देवी, २७७
हेमविजय, ७९
होलराय, ५९–६०
क्षेमकर्ण, २०३
त्रिलोकी नाथ, २६१
ज्ञानचंद यती, १७५
ज्ञानसागर, ३८
ज्ञानसागर, ११२
ज्ञानसागर २०५

Printed by RAMZAN ALI SHAH at the National Press, Allahabad.